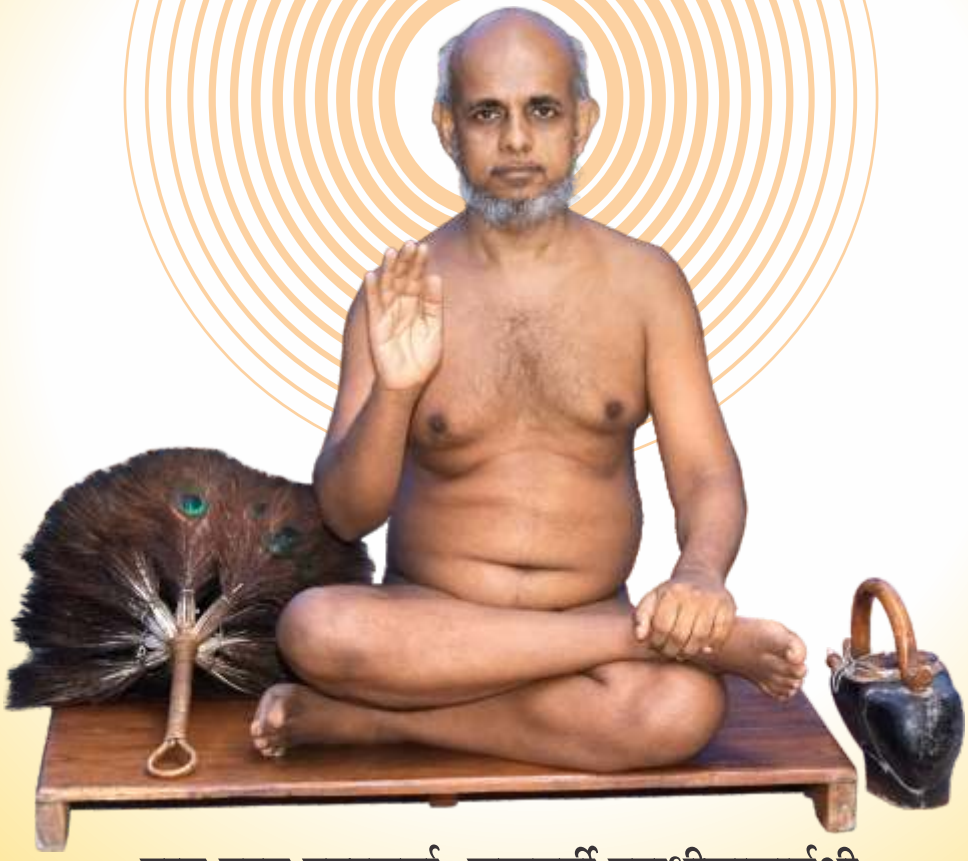

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

कालन्त्ररूपमाला

(व्यञ्जनान्तलिंग प्रकरणम्)

ग्रन्थकर्त्ता
परम पूज्य आचार्यश्री शर्मवर्म जी महाराज

टीकाकार
परम पूज्य आचार्यश्री भावसेन जी महाराज

अनुवाद-सम्पादन
ब्रह्मचारी प्रदीप शास्त्री-पीयूष

मुद्रक
श्री दिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति
जबलपुर (मध्यप्रदेश)

(परम्परानायक)

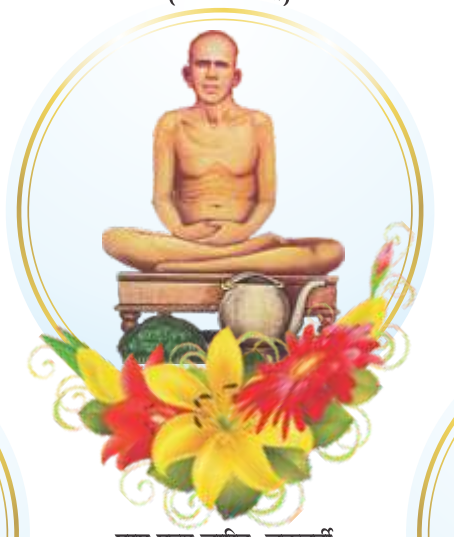

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

श्रीशर्ववर्मकृतकलाप–व्याकरणस्य
वादिपर्वतवज्रश्रीमद्भावसेनत्रैविद्यकृता टीका

कातन्त्र–रूपमाला

(पूर्वार्द्ध भाग–३, व्यञ्जनान्तलिङ्ग–प्रकरणम्)

अनुवाद/सम्पादन

साहित्याचार्य बाल ब्र. डॉ. प्रदीप शास्त्री "पीयूष"

६१०, संजीवनी नगर, गढा, जबलपुर (म. प्र.)

६४२४६१४१४६, ६८२६१४४६५४ (म. प्र.), ०६६३४८६६०६१ (उ. प्र.), ०६८२६६४५५३५ (राज.), ६५६०४६८५४७ (दिल्ली), ०६४२११८४६७१(महा.), ०६१६४४६१६४८(कर्ना.)

प्रकाशक

श्री दिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला, जबलपुर (म. प्र.)

साहित्याचार्य डॉ. पं. पन्नालाल जैन संस्थान

६१०, संजीवनी नगर गढा, जबलपुर (म. प्र.)

संस्करण प्रथम– (२५.१२.२०१७) लागत व्यय–७५० (सात सौ पचास) रुपये

संस्करण प्रथम– (३०.०६.२०१७) लागत व्यय–७५० (सात सौ पचास) रुपये

समर्पण

जो तीर्थंकर महावीर की
परम्परा के
समुज्ज्वल नक्षत्र हैं,
जिनका अद्‌भुत जीवन
अध्यात्म की पवित्र प्रेरणा
प्रदान करता है,
जिनके विचार, भूले भटके
जीवन राहियों का
पथ–प्रदर्शन करते हैं,
उन्हीं श्रद्धालोक के देवता,
श्रमण संस्कृति के
कीर्ति स्तम्भ
परम पूज्य गुरुवर
राष्ट्रसन्त, विश्वविख्यात, सन्त शिरोमणी
आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज
के संयम स्वर्ण (पचास)
वर्ष पूर्ण होने की
पावन बेला में
उनके पवित्र श्रीकर कमलों में
सादर
सविनय
समर्पित।

बाल ब्र. डॉ. प्रदीप शास्त्री पीयूष

१७.०७.२०१८

परिचय के गवाक्ष से

नाम	:	बाल ब्र. डॉ. प्रदीप शास्त्री पीयूष
जन्म	:	०४ अगस्त १९६७
जन्म स्थान	:	ग्वालियर (म.प्र.)
शिक्षा	:	साहित्य से आचार्य एवं एम. ए. (संस्कृत से)
पिता का नाम	:	स्व. सेठ श्री टीकाराम जी जैन, नायक (जैसवाल)
माता का नाम	:	श्रीमती बादामी देवी जैन
भाई तीन बड़े	:	महेश चन्द्र–सुरेश चन्द्र–भगवानदास जैन
बहिन तीन बड़ी	:	श्रीमती हेमलता–सुमन–प्रभा जैन
ब्रह्मचर्य व्रत	:	०१ जून १९८७ ललितपुर (उ.प्र.)
सप्तमप्रतिमा	:	३० अप्रैल २०१२ चन्द्रगिरि डोगरगढ़, (छ.ग.)
उपाधि	:	पी. एच. डी.
		(अष्टाध्यायी एवं जैनेन्द्र व्याकरण का तुलनात्मक अध्ययन)
हिन्दी अनुवाद	:	कातन्त्र–रूपमाला, जैनेन्द्र महावृत्ति (संस्कृत व्याकरण)
संकलन/सम्पादन	:	जिनभारती संग्रह, (जिनवाणी संग्रह), नित्यपूजा, जिनपूजा, जिन–अर्चना, धर्मध्यान, तत्त्वार्थसूत्र, द्रव्यसंग्रह प्रश्नोत्तर प्रदीप, छहढाला प्रश्नोत्तर प्रदीप, रत्नकरण्डक श्रावकाचार, समयसार (गुटका), इष्टोपदेश (गुटका), तिलोय–पण्णत्ती प्रश्नोत्तर प्रदीप, गोम्मटसार कर्मकाण्ड प्रश्नोत्तर प्रदीप, गोम्मटसार जीवकाण्ड प्रश्नोत्तर प्रदीप, सर्वोपयोगी प्रश्नोत्तर प्रदीप भाग १–२–३–४ इत्यादि लगभग १५० पुस्तके प्रकाशित हो चुकी हैं।

कहाँ/क्या?

१. मंगल आशीर्वचन	÷	आचार्य श्री १०८ वर्धमानसागर जी	– ११
२. आशीर्वचन	÷	आचार्य श्री १०८ विनम्रसागर जी	– १२
३. आशीर्वचन	÷	मुनि श्री १०८ निर्णयसागर जी	– १३
४. आमुख	÷	मुनि श्री १०८ निर्दोषसागर जी	– १४
५. अपनी बात	÷	मुनि श्री १०८ निर्लोभसागर जी	– १६
६. शुभाशंसा	÷	साहित्याचार्य डॉ. पन्नालाल जी	– १७
७. भूमिका	÷	ब्र. प्रदीप शास्त्री पीयूष	– १८
८. भाषा का महत्त्व	÷	पं. कोमल प्रसाद शास्त्री	– २६
९. दो शब्द	÷	ई. सुमत प्रकाश जैन	– २७
१०. प्रथम पठनीय	÷	पं. महेश चन्द्र शास्त्री	– २८
११. कातन्त्र–रूपमाला : एकपरिचय	÷	नीरज जैन	– ३०
१२. तीन व्याकरण में कथित सञ्ज्ञाएँ	÷		– ३७
१३. कातन्त्र–रूपमाला में कथित सञ्ज्ञाएँ	–		३८
१४. ग्रन्थकार का मङ्गलाचरण			÷ ४१
१५. व्याख्याकर्त्ता का मङ्गलाचरण			÷ ४४

व्यञ्जनान्त पुल्लिंग प्रकरणम्

१६. लिंग प्रकरण का मङ्गलाचरण	÷ ४५
१७. सुवाच् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २५४ से २५६ तक	÷ ४६
१८. प्रत्यञ्च् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २५७ से २६२ तक	÷ ५०
१९. क्रुञ्च् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २६३ से २६३ तक	÷ ५७
२०. सुकन्स् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक	÷ ६१
२१. प्राञ्च् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक	÷ ६४
२२. सम्यञ्च् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक	÷ ७२
२३. अदद्रयञ्च् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २६५ से २६७ तक	÷ ७६
२४. उदञ्च् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २६८ से २६८ तक	÷ १०१
२५. तिर्यञ्च् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २६९ से २६९ तक	÷ १०५
२६. प्राच्छ् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २७० से २७० तक	÷ १०६
२७. युज् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २७१ से २७२ तक	÷ ११३
२८. अश्वयुज् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक	÷ ११७
२९. साधुमस्ज् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २७३ से २७४ तक	÷ १२०
३०. साधुतक्ष् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक	÷ १२५
३१. देवेज् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २७५ से २७५ तक	÷ १२७
३२. सम्राज् शब्द की रूपमाला	÷ १३०
३३. मरुत् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक	÷ १३१
३४. भवन्त् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २७७ से २७८ तक	÷ १३३
३५. यावन्त् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. २७९ से २८० तक	÷ १३८
३६. तावन्त् शब्द की रूपमाला	÷ १४२

७८. चत्वार् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३०६ से ३१२ तक ÷ २६२
७६. सुदिव् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३१३ से ३१५ तक ÷ २६५
८०. विश् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ २६६
८१. तादृश् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ २७१
८२. रत्नमुष् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ २७३
८३. साधुतक्ष् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ २७६
८४. षष् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३१६ से ३१६ तक ÷ २७६
८५. सुवचस् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ २८१
८६. उशनस् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३१७ से ३१७ तक ÷ २८३
८७. विद्वन्स् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३१८ से ३१६ तक ÷ २८८
८८. पेचिवन्स् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ २६३
८६. उखास्रस् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३२० से ३२१ तक ÷ २६७
६०. अदस् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३२२ से ३२८ तक ÷ ३००
६१. श्रेयस् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३०६
६२. पुमन्स् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३२६ से ३३० तक ÷ ३१३
६३. मधुलिह् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३१८
६४. गोदुह् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३३१ से ३३१ तक ÷ ३२०
६५. मुह् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३३२ से ३३२ तक ÷ ३२३
६६. द्रुह् शब्द की रूपमाला ÷ ३२८
६७. स्नुह् शब्द की रूपमाला ÷ ३२८
६८. प्रष्ठवाह् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३३३ से ३३३ तक ÷ ३२८
६६. अनड्वाह् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३३४ से ३३६ तक ÷ ३३२

व्यञ्जनान्त स्त्रीलिंग प्रकरणम्

१००. त्वच् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३३८
१०१. वाच् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३४०
१०२. स्रज् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३४३
१०३. विद्युत् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३४५
१०४. शरद् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३४७
१०५. परिषद् शब्द की रूपमाला ÷ ३५०
१०६. त्यद् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३५०
१०७. तद् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३५५
१०८. यद् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३६०
१०६. एतद् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३६५
११०. वीरुध् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३७०
१११. सीमन् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३७३
११२. पञ्चन् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३७६
११३. अप् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ३३७ से ३३८ तक ÷ ३७७
११४. ककुभ् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३७६
११५. किम् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३८१
११६. इदम् शब्द की प्रयोग सिद्धि, सूत्र नं. ०० से ०० तक ÷ ३८६

"मंगल आशीर्वचन"

श्रीशर्मवर्मकृत **"कलाप–व्याकरण"** की श्रीमद्भावसेन त्रैविद्य कृत टीका युक्त **"कातन्त्र–रूपमाला"** का संस्कृत व्याकरण जगत् में महत्त्वपूर्ण स्थान है। सुबोधगम्य सूत्र और प्रकरण बद्ध यह रचना **"बालबोधाय कथ्यते"** की उक्ति को सार्थक करती है। मंगलाचरण में वीरप्रभु, सरस्वतीदेवी और वृषभसेन से गौतमप्रभु पर्यन्त तीर्थंकरदेवों के समस्त गणधरों का मंगलाचरण में स्मरण करके भक्तिपूर्वक मूलोत्तर गुणों के धारक समस्त ढ़ाई द्वीपों के मुनियों को नमस्कार किया गया है। सरलसुबोध इस व्याकरण का पठन–पाठन प्रायः दिगम्बर सम्प्रदाय के मुनिसंघों में संस्कृत व्याकरण का अध्ययन करने हेतु किया जाता है।

हमने जब **"कातन्त्र–रूपमाला"** का अध्ययन किया तब **"कातन्त्र–रूपमाला"** अपने मूलरूप में ही थी, उसकी हिन्दी व्याख्या नहीं थी। सम्प्रति हिन्दी रूप में संक्षिप्त अनुवाद के पश्चाद् **ब्र. भैया प्रदीप शास्त्री पीयूष जी** ने सम्पूर्ण **"कातन्त्र–रूपमाला"** की हिन्दी व्याख्या विस्तार के साथ की है। सम्प्रति अध्ययन करने वालों के लिए अध्ययन करने में सुगमता हो गई है। संस्कृत–व्याकरण का अध्ययन करने के लिए संस्कृत का ज्ञान होने पर ही समझा जा सकता था, किन्तु अब शोधकप्रज्ञा प्राप्त व्याकरण के गहन अध्येता **ब्र. पीयूष जी** ने अपनी विस्तृत व्याख्या से इस ग्रन्थ का अध्ययन सुगम बना दिया है। **ब्र. पीयूष जी** ने, जैन जगत के सिरमोर, आर्षपरम्परा के संरक्षक, मनीषी विद्वान्, **साहित्याचार्य डॉ. पं. पन्नालाल जी** सागर से अध्ययन का सुयोग पाकर अपनी प्रज्ञा को परिमार्जित कर, इस दुरुह कार्य को किया है। **"कातन्त्र–रूपमाला"** की सम्पूर्ण विस्तृत टीका अध्येताओं को पूर्व में उपलब्ध हो चुकी है। अब पूर्वार्द्ध के अन्तर्गत संशोधित एवं संवर्द्धित **"व्यञ्जनान्त–लिंग प्रकरणम्"** के प्रकाशन से व्याकरण ग्रन्थ की समग्र विस्तृत पूर्ण व्याख्या उपलब्ध हो सकेगी। शनैः शनैः समास कारक इत्यादि प्रकरण भी **ब्र. पीयूष जी** द्वारा प्रकाशित हो तथा **ब्र. पीयूष जी** ने, अपने जीवन में व्रतों के साथ ज्ञान प्राप्त किया, वे जिनवाणी की सेवा और आत्मसाधना में लगे रहें, उन्हें हमारा मंगल आशीर्वाद.....।

१७.०७.२०१८
श्रवणबेलगोला, कर्नाटक

आचार्य वर्धमानसागर
(चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री १०८ शान्तिसागर जी महाराज (दक्षिण) के पंचम पट्टाचार्य)

आशीर्वचन

आचार्य श्री शर्मवर्म कृत **"कलाप–व्याकरण"** के सूत्रों की संस्कृत वृत्ति वादिपर्वत श्रीमद् भावसेन त्रैविद्य के द्वारा लिखि गई है। **"कातन्त्र–रूपमाला"** का पठन–पाठन प्रायः कर दिगम्बर आम्नाय के संघों में हुआ करता है। इसके अध्ययन से दिगम्बर जैनसिद्धान्त ग्रन्थों का अध्ययन सहजता से हो जाता है। पूज्य गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज जब भी संघ को व्याकरण पढ़ाते थे, तब वे मूलसूत्र की संस्कृतवृति से ही पढ़ाते थे। उस समय हिन्दी टीका उपलब्ध नहीं होने से पढ़ने वाले पाठकगणों को पढ़ने में कठिनाई होती थी। परन्तु **"बाल ब्रह्मचारी प्रदीप शास्त्री पीयूष"** के द्वारा इसकी विस्तृत हिन्दी टीका करने पर, पढ़ने वालों को व्याकरण पढ़ने में सुलभता हो गई है। **"कातन्त्र–रूपमाला"** का पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध का प्रथम भाग द्वितीयभाग और तृतीयभाग पूर्व में प्रकाशित होने पर आचार्य श्री द्वारा पाठयित व्याकरण का अवलोकन उपर्युक्त अनुवाद द्वारा सहज और सरल हो गया।

प्रस्तुत ग्रन्थ मात्र लिंग–प्रकरण रूप में ही प्रकाशित हो रहा है। लिंग–प्रकरण के अनुवाद को संशोधित एवं संवर्धित कर नये प्रारूप में प्रकाशित किया जा रहा है, इससे **ब्र. पीयूष जी** की बौधिकता प्रदर्शित होती है।

कातन्त्र–रूपमाला के व्यञ्जनान्त–लिंग–प्रकरण की हिन्दी टीका करने में ब्रह्मचारी जी ने जो श्रम किया है, वह अन्य विद्वानों को भी प्रेरणादायी है। अब सम्भवतया **पीयूष जी** की लेखनी कारक, समास आदि तथा जैनेन्द्र महावृत्ति के लिखने में चलेगी।

कातन्त्र–व्याकरण के इस लिंग प्रकरण के प्रकाशन के लिये ब्रह्मचारी जी को मेरा शुभाशीष है। वे इसी प्रकार जिनवाणी की सेवा और स्वयम् की आत्म साधना में लगे रहें, और शीघ्र ही कारक–समास आदि तथा जैनेन्द्र–महावृत्ति को भी प्रकाशित कर, समाज के मध्य लायें, ताकि पठन–पाठन में सम्पूर्ण व्याकरण उपलब्ध हो सके। इसके प्रकाशन में जिनका भी प्रत्यक्ष–परोक्ष सहयोग जिस रूप में भी रहा है, उन सबको मेरा आशीर्वाद है। प्रस्तुत ग्रन्थ पठन–पाठन में आये एवं शोधार्थी छात्र जैन–व्याकरण पर शोध कर सकें, इसी भावना के साथ इत्यलम्।

१०.१०.२०१७ **मुनि निर्णयसागर**

वर्षायोग भोपाल **(शिष्य–आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज)**

प्रदीप शास्त्री पीयूष जी ने व्याकरण में पारङ्गता प्राप्त की। उनके अध्ययन की रुचि को देखकर मेरे द्वारा और अनुज भ्राता ब्र. कमल जी द्वारा भी व्याकरण का अध्ययन किया गया। जिसके फलस्वरूप **"सुबोध संस्कृत भारती"** का सृजन हम दोनों के द्वारा किया गया जिसका सम्पादन आदरणीय भाई सा. पीयूष जी द्वारा किया गया।

संस्कृत का विशाल साहित्य अमूल्य ग्रन्थ रत्नों का सागर है। इतना समृद्ध साहित्य किसी भी दूसरी प्राचीन भाषा का नहीं है और न ही किसी अन्य भाषा की परम्परा इसके समान अविच्छिन्न प्रवाह के रूप में इतने दीर्घ काल तक रह पाई है।

संस्कृत का शब्द भण्डार अथाह है। इसका विस्तृत धातु पाठ नित्य नये शब्दों को बनाने में समर्थ रहता है।

आचार्य श्रीशर्ववर्मन् जी द्वारा रचित यह **"कातन्त्र–रूपमाला"** समस्त व्याकरणों में श्रेष्ठ और सर्वाङ्ग है। परिमार्जित एवं अतीव सरल शैली में लिखी गई है। इसकी विशेषता यह है कि कितने ही स्थलों पर एक ही सूत्र से शब्द की सिद्धि हो जाती है तथा इसमें बहुत छोटे–छोटे सूत्र हैं। साथ ही सूत्रों में उत्तर भी रहता है। जैसे– **"ए अय्", "ऐ आय्", "ओ अव्", "औ आव्"** इत्यादि। इन सूत्रों से ही स्पष्ट होता है कि ए के स्थान पर अय् आदेश, ऐ के स्थान पर आय् आदेश, ओ के स्थान पर अव् आदेश तथा औ के स्थान पर आव् आदेश होता है। इत्यादि अनेक सूत्रों से अर्थ स्पष्ट होता है।

इस प्रकार सम्पूर्ण **"कातन्त्र–रूपमाला"** में प्रत्याहार प्रक्रिया नहीं होने से विद्यार्थी को थोड़ा सा संकेत मिलने पर वह सुगमता से विषय को समझ लेता है।

लोग कहते हैं कि संस्कृत व्याकरण को पढ़ना लोहे के चने चबाने की तरह है। सर्वप्रथम तो लोहे के चने चबते ही नहीं और चब भी जायें तो पचते नहीं। इस प्रकार की प्रायः प्राणियों की धारणा है। लेकिन "कातन्त्र रूपमाला" लोहे के चने नहीं, बल्कि दूध मलाई के सदृश है। इसको सभी जन सहज–सरल रूप से तैयार कर सकते हैं, यदि पढ़ने की रुचि हो तो।

अन्त में, मैं यही कहूँगा कि **भाई साहब श्री प्रदीप जी** ने कठिन परिश्रम करके इस कृति को पठनीय बना दिया है। इसके लिये में उनके लिये कोटिशः धन्यवाद देता हूँ तथा भावना भाता हूँ कि आपकी लेखनी इसी प्रकार अविरल–अविराम चलती रहे।

उदासीन आश्रम, इसरीबाजार **बाल ब्र. पवन जैन**

(सम्प्रति–मुनि श्री निर्दोषसागर जी महाराज)

नोट– आपकी दीक्षा–१०.०८.२०१३ को आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज द्वारा अतिशय क्षेत्र रामटेक में हुई, "आमुख" दीक्षा के पूर्व लिखा गया है।

शुभाशंसा

श्रीआचार्यभावसेनत्रिविद्य मुनिराज ने **"कलाप–व्याकरण"** पर **"कातन्त्र–रूपमाला"** की रचना की है। इसके कर्त्ता शब्दागम, तर्कागम, न्यायशास्त्र और परमागम–सिद्धान्त इन तीन विद्याओं के प्रकाण्ड विद्वान् थे। अतः उन्हें त्रैविद्य की उपाधि से अलंकृत किया गया है। **"कातन्त्र रूपमाला"** सरल व सुबोध व्याकरण है।

कातन्त्र का अर्थ लघुता से है। अर्थात् **"कु अर्थात् ईषत् व्याकरणम् कातन्त्रम्"। "का त्वीषदर्थे क्षे"** (४६५) सूत्र द्वारा **"कु"** के स्थान पर **"का"** आदेश हुआ है। यहाँ पर कु का अर्थ संक्षिप्त होता है यानि **"ईषद् जलं काजलं"** थोड़ा पानी। स्पष्ट है कि किसी बड़े ग्रन्थ का संक्षेप होने के कारण इसका नाम कातन्त्र पड़ा।

रचनाकार ने इसे पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध रूप दो भागों में विभाजित किया है। पूर्वार्द्ध भाग में सन्धि, लिंग, अव्यय, कारक, समास एवं तद्धित आदि के प्रकरण हैं। उत्तरार्द्ध भाग में तिङन्त एवं कृदन्त के प्रकरण लिये गये हैं।

मेधावी छात्र **"बाल ब्रह्मचारी प्रदीप शास्त्री पीयूष"** जी ने अथक परिश्रम करके **"कातन्त्र–रूपमाला"** के दोनों भागों की सरल भाषा में हिन्दी टीका की है। इन्होंने आद्य कथन में जैनेन्द्र व्याकरण, पाणिनीय व्याकरण तथा कातन्त्र–रूपमाला की तुलनात्मक समीक्षा की है।

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि **"बाल ब्रह्मचारी प्रदीप शास्त्री पीयूष"** जी ने अपनी मेधा बुद्धि को ग्रन्थ रचना, टीकाकरण, सम्पादन तथा प्रकाशन के योग्य विकसित किया है।

व्याख्या की शैली सुबोध और सरल है। सरल करने का भी एक कारण है कि व्याकरण में यदि प्रवेश चाहते हैं, तो पंचसन्धि को, लिंग प्रकरण को तथा धातुओं को समझना अत्यन्त आवश्यक है। आपके द्वारा **"जैनेन्द्र महावृत्ति"** का हिन्दी अनुवाद किया है तथा आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी रचित जैनेन्द्र महावृत्ति महाव्याकरण का आधार लेकर **"जैनेन्द्र सिद्धान्तवृत्ति"** का सृजन किया जा रहा है।

आपका अधिक से अधिक समय लेखन, पठन और पाठन में ही व्यतीत होता है। इन्होंने अभी तक लगभग १५० जैन ग्रन्थों का सम्पादन कर उन्हें सरल व सुबोध भाषा में प्रकाशित किया है। जो जन सामान्य के लिए सरल व ग्राह्य हैं। उनके अनेक संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। एतदर्थ वे धन्यवाद के पात्र हैं। मैं आशा करता हूँ कि इनके द्वारा जिनागम के अन्य ग्रन्थ भी सम्पादित, अनुवादित व प्रकाशित होते रहेंगे। इनके कार्यों के प्रति मेरी शुभाशंसा है। मुझे ऐसा विश्वास है कि संस्कृत व्याकरण सीखने वाले जिज्ञासुओं के लिये उनकी यह कृति अत्यन्त उपयोगी रहेगी।

पूर्वार्द्ध से साभार

साहित्याचार्य डॉ. पन्नालाल जैन, सागर
(सम्प्रति पं. साहब की स्मृति शेष है)

शर्ववर्मकृत व्याकरण ÷

यह व्याकरण समस्त व्याकरणों में श्रेष्ठ, सरल और सर्वांगपूर्ण है। इसमें प्रत्याहार सम्बन्धी कोई परेशानी महसूस नहीं होती। इसके इतिहास सम्बन्धी प्रामाणिकता नीरज जैन (खातेगाँव) के लघु शोध प्रबन्ध के अवलोकन से मिल जायेगी।

शर्ववर्मकृत व्याकरण की मूलभूत– **"कलाप–व्याकरण"** है। इसमें चार अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में सन्धि के माध्यम से पांच पद हैं। प्रथमपाद में – सञ्ज्ञाएँ, द्वितीयपाद में – स्वरसन्धि, तृतीय पाद में – प्रकृतिभावसन्धि, चतुर्थपाद में –व्यञ्जनसन्धि और अनुस्वारसन्धि तथा पंचमपाद में –विसर्गसन्धि पर्यन्त ७६ सूत्र निरूपित हैं।

द्वितीय अध्याय में चतुष्टय, कारक, समास और तद्धित के माध्यम से पाद कहे गये हैं। चतुष्टय (लिंग) प्रकरण को तीन पादों के माध्यम से तथा कारकप्रकरण, समासप्रकरण और तद्धितप्रकरण को एक–एक पाद का अवलम्बन लेकर प्रकट किया है। इन चारों प्रकरणों के माध्यम से १ से लेकर ४३४ सूत्र तक कहे गये हैं।

तृतीय अध्याय में आख्यात (धातु) के माध्यम से आठ पाद हैं। जिसमें १ से लेकर ४३६ सूत्र निरूपित हैं।

चतुर्थ अध्याय में कृदन्त प्रकरण के माध्यम से छह पाद हैं। जिसमें १ से लेकर ५४६ सूत्रों का सृजन किया गया है।

इस प्रकार **"कलाप–व्याकरण"** में ७६ + ४३४ + ४३६ + ५४६ = १४६८ सूत्र हैं। इसी व्याकरण को प्रक्रियानुसार सूत्रों को व्यवस्थित कर **"कातन्त्र–रूपमाला"** नाम दिया गया है। जिसको पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध रूप दो खण्डों में विभाजित किया है। प्रथम खण्ड में सन्धि, चतुष्टय (लिंग) कारक, समास और तद्धित प्रकरण निरूपित हैं। तथा द्वितीय खण्ड में आख्यात (धातु) और कृदन्त प्रकरण को संजोया गया है।

सूत्र –

अल्पाक्षरमसन्दिग्धं, सारवद्विश्वतो मुखम्।
अस्तोभमनवद्यं च, सूत्रं सूत्रविदो विदुः।।

अर्थात् थोड़े अक्षरों में जहाँ अधिक अर्थ का प्रकाशन हो, सन्देह रहित, सारवान्, व्यापक रूप से प्रभावकारी, खण्डन रहित और श्रद्धेय पदावली को सूत्र कहते हैं। इसके छह भेद हैं – १. सञ्ज्ञासूत्र, २. परिभाषा सूत्र, ३. विधिसूत्र, ४. नियमसूत्र, ५. अतिदेशसूत्र, ६. अधिकारसूत्र।

कातन्त्र–रूपमाला का अध्ययनक्रम –

इस व्याकरण में सञ्ज्ञासन्धि, लिंग, अव्यय, प्रत्यय, कारक, समास, तद्धित, आख्यात (धातु)

जब कि यह विषय मात्र सिद्धान्त कौमुदी में है। लघु सिद्धान्त और मध्यसिद्धान्त कौमुदी में नहीं।

ध्यान रखने योग्य – "कातन्त्र–रूपमाला" में वर्णों को अकार से लेकर हकार तक क्रमशः कहा है। सन्धि प्रकरण में भी अकार आदि के क्रम से प्रयोग सिद्ध किये हैं। परन्तु वर्णों के कथन में य र ल व को अक्रम से रखा है। क्रम – इस प्रकार होना चाहिए। य व र ल। क्योंकि स्वर संधि प्रकरण में इवर्ण के बाद उवर्ण का कथन है। इवर्ण के स्थान पर यकार तथा उवर्ण के स्थान पर वकार होता है। यथा – **"इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः"** (४४) तथा **"वमुवर्णः"** (४५)। परन्तु व्यञ्जनान्त लिंग प्रकरण में जो क्रम वर्णों का रखा है, उसी क्रम से यकारान्त के बाद रकारान्त शब्दों का प्रयोग किया है। यथा– **"यकारान्तो प्रसिद्धः। रेफान्तः पुल्लिंगश्चत्वार् शब्दः"** (सूत्र नं. ३०८ की टीका)। वर्णों को जिस क्रम से रखा है, उसी क्रम से सूत्रगत दर्शाया गया है। यथा– **"अन्तःस्था यरलवाः"** (१६)।

सूत्रगत अक्रम यथा – "वर्गप्रथमेभ्यः शकारः स्वरयवरपरश्छकारं न वा" (७१) तथा **"यवलेषु वा"** (६४)। क्रम लकार के वाद वकार का है, परन्तु सूत्र में लकार के पूर्व वकार का उल्लेख किया है।

"कातन्त्र–रूपमाला" में उल्लेखित सञ्ज्ञाएँ –

व्याकरण की गति के लिये सञ्ज्ञाओं की जानकारी आवश्यक है। अतः प्रत्येक व्याकरणेच्छुक को सञ्ज्ञाएँ कण्ठस्थ कर लेना चाहिये।

सञ्ज्ञा सूत्र

१. वर्ण	÷	सिद्धो वर्णसमाम्नायः।।१।।
२. स्वर	÷	तत्र चतुर्दशादौ स्वराः।।२।।
३. समान	÷	दश समानाः।।३।।
४. सवर्ण	÷	तेषां द्वौ द्वावन्यो न्यस्य सवर्णौ।।४।।
५. सवर्ण	÷	ऋकारऌकारौ च।।५।।
६. ह्रस्व	÷	पूर्वो ह्रस्वः।।६।।
७. दीर्घ	÷	परो दीर्घः।।७।।
८. नामि	÷	स्वरो वर्णवर्जो नामि।।८।।
९. सन्ध्यक्षर	÷	एकारादीनि सन्ध्यक्षराणि।।९।।
१०. व्यञ्जन	÷	कादीनि व्यञ्जनानि।।११।।
११. वर्ग	÷	ते वर्गाः पञ्च पञ्च पञ्च।।१२।।
१२. अघोष	÷	वर्गाणां प्रथमद्वितीयाः शषसाश्चाघोषाः।।१३।।
१३. घोष	÷	घोषवन्तो न्ये।।१४।।

भय बना रहता है। भाषा के साथ भी यही बात है। भाषा को व्यवस्थित बनाये रखने के लिए उसका अनुशासन आवश्यक है। इसीलिए व्याकरण को शब्दानुशासन भी कहा जाता है। व्याकरण या शब्दानुशासन के द्वारा ही साधुशब्द का ज्ञान होता है। व्याकरण एवं शब्दानुशासन शब्दों की निम्न व्युत्पत्ति से यह स्पष्ट हो जाता है कि ये शब्द – सिद्धि के साधन हैं।

"व्याक्रियन्ते = व्युत्पाद्यन्ते शब्दा अनेनेति व्याकरणम्"

इसी प्रकार – **"अनुशिष्यन्ते शब्दा अनेनेति शब्दानुशासनम्।"** उपर्युक्त विवरण से व्याकरण या शब्दानुशासन की महत्ता स्वतः सिद्ध हो जाती है।

संस्कृतवाङ्मय में व्याकरण का स्थान बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। वस्तुतः व्याकरण ज्ञान के बिना दिगम्बराचार्यों के ग्रन्थों का तथा संस्कृत साहित्य, स्मृति, पुराण, काव्य आदि किसी भी शास्त्रान्तर में प्रवेश नहीं हो सकता।

इसीलिए भाषागत शिष्ट शब्दों के परिज्ञान के लिए व्याकरण का आविर्भाव हुआ है। व्याकरण का ध्येय इष्ट–अन्वय–आख्यान एवं अनिष्ट–निवृत्ति ही है। शब्द साधुत्व ज्ञान इसका अन्यतम लक्ष्य है। साधु शब्द का ज्ञान न होने से भयंकर अनर्थ की सम्भावना रहती है। व्याकरण–ज्ञान के बिना शब्दों का उचित प्रयोग नहीं हो सकता और शब्दों का उचित प्रयोग न होने से अर्थ का अनर्थ हो जाता है। जरा सी उच्चारण सम्बन्धी भूल से कभी–कभी स्वजन (सम्बन्धी) श्वजन (कुत्ता) सकल (सम्पूर्ण) शकल (खण्ड) और सकृत् (एक बार) शकृत् (विष्ठा) बन जाता है। निम्नरोचक श्लोक में इसी ओर संकेत किया गया है –

यद्यपि बहु नाधीषे, तथापि पठ पुत्र व्याकरणम्।
स्वजनः श्वजनो माभूत् सकलः शकलः सकृच्छकृत्।।

संस्कृत व्याकरण की परम्परा अतिप्राचीन है। कुछैक प्रसंगों को छोड़कर प्रायः एक सी प्रयोग सिद्धि होती है। इसलिए व्याकरण का महत्व निर्विवाद है।

"कातन्त्र–रूपमाला" का अपर नाम **"कौमार"** व्याकरण भी है जैसा कि कहा है –

तेन ब्राह्म्यै कुमार्यै च, कथितं पाठहेतवे।
कालापकं तत्कौमारं, नाम्ना शब्दानुशासनम् ।।४।।

लघुत्रिमुनिकल्पतरुकार ने नौ व्याकरणों का उल्लेख किया है –

"ऐन्द्रं चान्द्रं काशकृत्स्नं, कौमारं शाकटायनम्।
सारस्वतं चापिशलं, शाकलं पाणिनीयम्।।" एक अक्षर कम है।

अर्थात् लघुत्रिमुनिकल्पतरुकार के क्रमानुसार कथन से कौमार (कातन्त्र–व्याकरण) पाणिनीय व्याकरण से पूर्ववर्ती व्याकरण है।

भास्कराचार्य ने आठ व्याकरणों का उल्लेख किया है – वैयाकरणों की गणना करते हुए वोपदेव ने भी अपने **"कविकल्पद्रुम"** में आठ वैयाकरणों का उल्लेख किया है –

भारत की प्रज्ञा है। इसीलिए संस्कृत हमारे लिए सदैव संरक्षणीय है क्योंकि संस्कृत ही हमारी प्रतिष्ठा है –

"भारस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतिश्चापि संस्कृतम्।"

शब्द की उत्पत्ति संज्ञा से और धातु से होती है। संज्ञा से शब्द की उत्पत्ति, तद्धित से होती है तथा धातु से शब्द की उत्पत्ति, कृदन्त द्वारा होती है।

गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से कातन्त्र–रूपमाला का हिन्दी अनुवाद कर उसे चार भागों में प्रकाशित किया गया। पूर्वार्द्ध भाग को पूर्व में पंचसंधि के रूप में प्रकाशित किया था। सम्प्रति लिंग–प्रकरण को संशोधित एवं संवर्धित कर प्रकाशित किया जा रहा है। आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज और पंडित जी के मुखारविन्द से जितना ग्रहण किया उतना तो व्यक्त नहीं कर पाया, फिर भी कोशिश अपनी क्षमतानुसार पूरी की है। फिर भी कहीं व्याख्या करने में प्रमाद हो गया हो तो विद्वज्जन मुझे दिशा बोध दें।

कातन्त्र–रूपमाला के अनुवाद के लिये शनैः शनैः जिनका निर्देशन मुझे मिलता रहा, उनका मैं अन्तःकरण से ऋणी हूँ और ऋणी हूँ अपने **विद्यागुरु पंडित श्री पन्नालाल जी साहित्याचार्य,** सागर का जिनका दिशाबोध प्रत्यक्ष–परोक्ष मुझे सदैव मिलता रहा।

कातन्त्र–रूपमाला की विस्तृत टीका पूर्व में आप सबको प्राप्त हो चुकी है। नये परिवेश में **"पञ्च–सन्धि"** की विस्तृत व्याख्या जैनैन्द्र–महावृत्ति तथा पाणिनिकृत व्याकरण के सूत्र को समानान्तर रख, प्रस्तुत किया गया। सम्प्रति व्यञ्जनान्तलिंग–प्रकरण को संशोधित एवं संवर्धित कर प्रकाशित किया जा रहा है, जो व्याकरण सीखने वालो के लिये यह व्याख्या अत्युपयोगी होगी।

"लिंग–प्रकरण" का प्रकाशन, आचार्य श्री के **"पचासवें स्वर्ण संयमपदारोहण** वर्ष २०१७–२०१८ के पावन प्रसंग पर, उनके श्रीकर कमलों में सादर–सविनय सिद्ध–श्रुत–आचार्य भक्ति के साथ समर्पित है।

प्रस्तुत कातन्त्र–रूपमाला लिंग–प्रकरण का अनुवाद अपनी क्षमतानुसार किया है। फिर भी **"को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे"** के न्याय से अनुवाद करने में कहीं प्रमाद हो गया हो तो विलक्षणजन मुझे दिशाबोध दे।

६१०, संजीवनी नगर, गढ़ा, जबलपुर (म.प्र.)

ब्र. प्रदीप शास्त्री "पीयूष"

०६४२४६–१४१४६, ०६८२६१–४४६५४ (म.प्र)

०६६३४८–६६०६१ (उ.प्र.), ०६८२६६–४५५३५ (राज.), ०६५६०४–६८५४७ (दिल्ली)

दो शब्द

संस्कृत भाषा या व्याकरण को समझने के लिए, व्याकरणज्ञाचार्यों ने निम्न छह अधिकारों का वर्णन किया है। यथा – संधि, लिंग, समास, तद्धित, धातु और कृदन्त।

सन्धि की परिभाषा वादिपर्वतवज्र श्रीमद्भावसेनत्रैविद्य कातन्त्र–रूपमाला की संस्कृत टीका में निम्न प्रकार करते हैं। यथा – **"पूर्वोत्तर वर्णानामव्यवधानेन परस्परेण सन्धानं संश्लेषः सन्धिः।"**

अर्थात् पूर्व + उत्तर वर्णों को बिना व्यवधान (वाधा रहित) के जोड़ देने को (मिला देने को) सन्धि कहते हैं। जिसका विभाग पंच सन्धि के रूप में किया जाता है। यथा – १. स्वरसन्धि, २. प्रकृतिभावसन्धि, ३. व्यञ्जनसन्धि, ४. विसर्गसन्धि, ५. स्यादिसन्धि।

लिंग की परिभाषा आचाय श्री सर्ववर्मन् जी महाराज निम्न सूत्र के माध्यम से कहते हैं–

"धातुविभक्तिवर्जमर्थवल्लिङ्गम्।।१२५।।"

अर्थात् – धातु और विभक्ति से रहित अर्थवत् शब्दरूप की लिंग सञ्ज्ञा होती है।

लिंग (संज्ञा) को दो भागों में विभाजित किया है। १. स्वरान्त और २. व्यञ्जनान्त। स्वरान्त और व्यञ्जनान्त को भी तीन–तीन भागों में विभाजित किया है। यथा – १. स्वरान्त पुल्लिंग, २. स्वरान्त स्त्रीलिंग और ३. स्वरान्त नपुंसकलिंग।

अ से लेकर औ तक चौदह स्वर कहलाते हैं। यथा – **"तत्र चतुर्दशादौ स्वरः"** (२)। तथा क से लेकर ह तक तैतीस व्यञ्जन होते हैं। यथा – **"कादीनि व्यञ्जनानि"** (११)।

कातन्त्र–रूपमाला ग्रन्थ को पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध रूप में विभाजित किया गया है। पूर्वार्द्ध में सन्धि, लिंग, समास और तद्धित विषय का प्ररूपण किया है। तथा उत्तरार्द्ध में धातु तथा कृदन्त का कथन किया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के हिन्दी अनुवाद में श्रद्धेय ब्र. भैया प्रदीप जी पीयूष ने स्वरान्त–पुल्लिंग, स्वरान्त–स्त्रीलिंग तथा स्वरान्त–नपुंसकलिंग की विस्तृत व्याख्या की है। एक–एक प्रयोग को सूक्ष्मतर दर्शाने से पाठकगण यदि थोड़ी मेहनत करें तो वे स्वतः ही इस अनुवाद के द्वारा अध्ययन कर सकते हैं। तथा करा सकते हैं।

इस ग्रन्थ के अनुवाद के पूर्व ब्र. पीयूष जी द्वारा पंचसन्धि का विस्तृत अनुवाद कर, प्रकाशित कराकर व्याकरण के पाठकगणों को एक सुलभ उपहार समर्पित किया है। इसी क्रम में पूर्वार्द्ध के तृतीय भाग के रूप में "व्यञ्जनान्त–लिंग प्रकरण" को "सन्तशिरोमणि आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज के स्वर्ण संयममहोत्सववर्ष के पावन प्रसंग पर प्रकाशित किया जा रहा है।

एतदर्थ इस ग्रन्थ का गौरव स्वतः ही वृद्धि को प्राप्त होता है।

मैं ब्र. भैया पीयूष जी से अत्यधिक अपेक्षा रखता हूँ कि वे शीघ्र ही "व्यञ्जान्तलिंग प्रकरण" को भी प्रकाशित करा कर समस्त पाठक गणों को उपलब्ध करायें। इसी पुनीत भावना के साथ ब्र. भैया जी को सादर वन्दना.....।

पं. सुमत प्रकाश जैन (चीफ. ईन्जी.रि.)
१–६३६ विद्याधर नगर, द्वारका स्वीट के पास
जयपुर (राज.) ०६४१३३००६१०

को फल दिया जाता है, अतः "मुनि" सम्प्रदान – कारक है। अतः मुनि में चतुर्थी विभक्ति लगेगी। यथा – महेशः मुनये फलं ददाति।

अपादान – जिस स्थान या वस्तु से कोई दूसरी वस्तु अलग (पृथक्) होती है, उस स्थान या वस्तु को "अपादान" कहते हैं। जैसे – "महेश ग्राम से आता है। यहाँ किसी व्यक्ति–विशेष का ग्राम–विशेष से पृथक् होता है। अतः "ग्राम" अपादान–कारक है। अतः ग्राम में पंचमी विभक्ति लगेगी। यथा – महेशः ग्रामात् आगच्छति।

स्वामी (सम्बन्ध) – दो वस्तुओं के सम्बन्ध को प्रकट करने को स्वामी या सम्बन्ध कहते हैं। स्वामी दो वस्तुओं के सम्बन्ध को प्रकट करता है। जैसे – यह पुस्तक महेश की है। यहाँ पुस्तक का सम्बन्ध महेश से है, अतः "महेश" स्वामी (सम्बन्ध) कारक है। अतः महेश में षष्ठी विभक्ति लगेगी। यथा – महेशस्य इदं पुस्तकं अस्ति।

अधिकरण – जिस स्थान पर कोई कार्य होता है या जिस शब्द से आधार का बोध होता है, उसे अधिकरण कहते हैं। जैसे – महेश चटाई पर बैठता है। यहाँ बैठना क्रिया का आधार चटाई हैं, अतः "चटाई" अधिकरण कारक है। अतः "चटाई" (कट) में सप्तमी विभक्ति लगेगी। यथा – महेशः कटे तिष्ठति।

सम्बुद्धि (सम्बोधन) – सम्बुद्धि का प्रयोग किसी को पुकारने के लिए होता है। अतः पुकारने के लिए सम्बुद्धि का प्रयोग होता है। सुम्बुद्धि में प्रथमा विभक्ति का ही प्रयोग होता है। जैसे – हे महेश यहाँ आओ। यहाँ महेश सम्बुद्धि कारक है, अतः "महेश" में प्रथमा विभक्ति लगेगी। यथा – हे महेश अत्र आगच्छतु।

नोट – सम्बुद्धि के एकवचन में विसर्ग का लोप हो जाता है।

यहाँ ध्यान रहे कि कारक और विभक्ति शब्द पर्यायवाची नहीं हैं। यह आवश्यक नहीं कि कर्ता कारक सदैव प्रथमा विभक्ति में ही हो या कर्म कारक द्वितीया विभक्ति में ही। कर्मवाच्य में तो कर्ता कारक तृतीया विभक्ति में और कर्मकारक प्रथमा विभक्ति में होता है। और भाववाच्य में भी कर्ता तृतीया विभक्ति में ही होता है।

अन्य कुछैक स्थलों पर विशेष नियमों के अनुसार कारक में परिवर्तन हो जाता है।

प्रस्तुत स्वरान्त पुल्लिंग प्रकरण की विस्तृत व्याख्या का प्रकाशन "श्रीदिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति बरेला, जबलपुर" द्वारा किया गया है।

प्रस्तुत कातन्त्र–रूपमाला लिंग–प्रकरण का प्रकाशन हो रहा है। यह अत्यधिक प्रसन्नता का विषय है। हम भी इस व्याकरण के हृदय को समझ सकें यही प्रार्थना वीर प्रभु से करते हैं।

पं. महेश चन्द शास्त्री
पुष्प पुंज, ३० सरलाबाग, दयालबाग
आगरा (उ.प्र.) ०६३५६७–६३५०८

लेकिन जैन आचार्य भावसेनत्रैविद्य कातन्त्र की टीका कातन्त्र–रूपमाला में उपर्युक्त मतों का खण्डन करते हुए कहते हैं –

(१) **तेन ब्राह्म्यै कुमार्यै च कथितं पाठहेतवे।**
कालापकं तत्कौमारं नाम्ना शब्दानुशासनम्।।१।।

भावार्थ – स्त्रियों की ६४ कलायें होती हैं और पुरुषों की बहत्तर, इन सभी कलाओं को बतलाने वाले/प्राप्त कराने वाले श्री तीर्थंकर ऋषभदेव भगवान् हैं। उन ऋषभदेव भगवान् ने ही **"ब्राह्मी"** और **"कुमारी"** को पढ़ाने के लिए इस व्याकरण को कहा है, अत एव यह शब्दानुशासन कालापक और कौमार नाम से भी प्रसिद्ध है।

(२) **तन्न युक्तं यतः केकी, वक्ति प्लुतस्वरानुगम्।**
त्रिमात्रं च शिखी ब्रूयादिति प्रामाणिकोक्तिः ।।२।।
न चात्र मातृकाम्नाये स्वरेषु प्लुतसङ्ग्रहः।
तस्मात् श्रीऋषभादिष्टमित्ये प्रतिपद्यताम्।।३।।

भावार्थ – कुछ लोग ऐसा भी कहते हैं कि स्कन्दवाही शिखी की पुच्छ से ये सूत्र निकले हुए हैं, अतः इसे **"कालापक"** कहते हैं। तब आचार्य कहते हैं कि यह बात नहीं है, क्योंकि केकी– मयूर प्लुत स्वर का अनुसरण करते हुए बोलता है। वह प्लुत त्रिमात्रिक है, और वह मयूर त्रिमात्रिक बोलता है, यह बात प्रामाणिक है। किन्तु इस व्याकरण में वर्ण समुदाय में स्वरों में प्लुत का संग्रह नहीं किया है, इसलिये यह व्याकरण श्री ऋषभदेव से ही उत्पन्न हुआ है[1]।

कातन्त्र व्याकरण का रचनाकाल –

कातन्त्र व्याकरण का रचनाकाल अत्यन्त विवादास्पद है। अतः उसके कालनिर्णय में जो प्रमाण उपलब्ध होते हैं उनके आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि – शर्ववर्मा ने सातवाहन नृपति को व्याकरण का बोध कराने के लिये कातन्त्र व्याकरण पढ़ाया था[2]।

यह सातवाहन नृपति आन्ध्रकुल का व्यक्ति है। कई ऐतिहासिक आन्ध्रकुल को विक्रम के पश्चात् जोड़ते हैं, परन्तु यह भूल है। आन्ध्रकुल वस्तुतः विक्रम से पूर्ववर्ती है।

कातन्त्र व्याकरण विशुद्ध लौकिक भाषा का व्याकरण है, और वह भी अत्यन्त संक्षिप्त। व्याकरणकार ऐसा मानते हैं कि यह महाभाष्य से प्राचीन ग्रन्थ है, इसका काल युधिष्ठिर मीमांसक २००० वि. पू. मानते हैं।

कातन्त्र व्याकरण के कर्ता –

गुरुपद हालकार ने अपने "व्याकरण दर्शन इतिहास" में शर्ववर्मा को कातन्त्र की विस्तृत वृत्ति का रचयिता लिखा है[3]।

---

१. कातन्त्र–रूपमाला पृ. क्र. ११२, २. कथासरित्सागर लम्बक १, तरंग ६,७, ३. द्र. पं. भगवदत्त जी कृत भारतवर्ष का इतिहास द्वि. संस्करण, पृ. ४३७

थे, जिसने आख्यातान्त भागों की रचना की और बाद में कृदन्त भागों की रचना किसी कात्यायन ने की। श्रीमतिदत्त ने कातन्त्र परिशिष्ट लिखकर यह व्याकरण पूरा किया।"

कातन्त्र व्याकरण पर टीका या विस्तार ग्रन्थ –

कातन्त्र व्याकरण पर कई टीकायें और वृत्तियाँ लिखी गईं उनका वर्णन निम्नानुसार है –

ग्रन्थकार	**ग्रन्थ**
(१) शर्ववर्मा	**कातन्त्र व्याकरण**
(२) श्रीपतिदत्त	**कातन्त्र परिशिष्ट**
(३) गोपीनाथतर्कचरण	**व्याख्या**
(४) दुर्गसिंह (८–९ वीं शती)	**कातन्त्रवृत्ति, कातन्त्रवृत्ति टीका**
(५) त्रिलोचन दास (११ वीं शती)	**कातन्त्रवृत्तिपंजिका**
(६) श्री गौतम पण्डित	**कलापदीपिका (दुर्गसिंह वृत्ति पर टीका ग्रन्थ)**
(७) वर्धमान (१२ वीं शती)	कातन्त्रविस्तर
(८) जगद्धर	कातन्त्रबालबोधिनी
(९) श्री त्रिविक्रम	उद्योत (कातन्त्रपंजिका की व्याख्या)
(१०) श्री भावसेन	कातन्त्ररूपमाला
(११) दुर्गसिंह	कातन्त्र धातुपाठ
(१२) श्रीमणिकाण्ठभट्टाचार्येण	**त्रिलोचन चन्द्रिका (टीका ग्रन्थ)**
(१३) पुण्डरीकाक्ष विद्यासागर (१५ वीं शती)	**कातन्त्र प्रदीप**
	आख्यात मंजरी (दुर्गसिंह कृत टीका पर टिप्पणी)
(१४) श्री विद्यानन्द	**कातन्त्रोत्तर (दुर्ग टीका पर व्याख्या)**
(१५) श्रीमती समनाम विदुषी	**कातन्त्रवाक्यविस्तर**
(१६) श्री हरिराम	**व्याख्यासार या सन्धि चन्द्रिका**
(१७) श्रीशिवानन्दशर्मा के पुत्र श्री रामदास चक्रवर्ती	**कातन्त्र चन्द्रिका**
(१८) रमानाथ चक्रवर्ती	**मनोरमा व्याख्या**
(१९) दुर्गसिंह	**कातन्त्र चैत्रकुटि वृत्ति**

"इस प्रकार व्याकरण पर अनेक विस्तार और टीका ग्रन्थ लिखे गये हैं। कातन्त्र व्याकरण अत्यन्त सुबोध शैली में लिखे जाने के कारण इसका प्रचार न केवल भारतवर्ष में अपितु विदेशों में भी था। मध्य एशिया में भूखनन से प्राप्त कुबा नामक राज्य का पता लगा है, उसमें जो प्राचीन साहित्य मिला है उससे विदित हुआ है कि उस समय वहाँ बौद्ध धर्म के अनेक मठ थे और उनमें संस्कृत पढ़ाने के लिये कातन्त्र व्याकरण का प्रयोग किया जाता था[1]।"

---

१. जैनहितैषी अंक ४, वीर निर्वाण संवत् २४४१, में छपा लेख "कातन्त्र व्याकरण का विदेशों में प्रचार" देखें।

देश का राजा बना दिया गया।

कातन्त्ररूपमाला का परिचय

कातन्त्र रूपमाला सन् १६२६ में बम्बई से प्रकाशित वादिपर्वतभावसेन के द्वारा प्रणीत ग्रन्थ है। यह एक प्रकरण क्रमानुसारी व्याख्या ग्रन्थ है। इस समय कातन्त्र व्याकरण की मूल प्रति अनुपलब्ध होने से इसमें कुछ सूत्र छूट गये हैं।

ग्रन्थकार ने सर्वप्रथम वीर को नमस्कार करते हुए बालबोध के लिये इस व्याकरण टीका ग्रन्थ का मङ्गलाचरण किया है –

"वीरं प्रणम्य सर्वज्ञं, विनष्टाशेषदोषकरम्।
कातन्त्ररूपमालेयं, बालबोधाय कथ्यते।।"

यह ग्रन्थ एक प्रक्रियानुसारी प्रणाली में लिखा गया है। इसे दो भाग में विभक्त किया गया है। प्रथम भाग में ५६४ सूत्र हैं तथा उत्तरार्द्ध भाग में लगभग ८०६ सूत्र हैं।

व्याकरण के प्रथम सन्दर्भ में सन्धि, लिंग, अव्यय कारक, समास एवं तद्धित प्रकरण हैं। द्वितीय सन्दर्भ में तिङन्त और कृदन्त प्रकरण हैं।

कातन्त्ररूपमाला के ग्रन्थकार आचार्य भावसेन का परिचय –

कातन्त्र रूपमाला के कर्ता आचार्य भावसेन हैं जो दक्षिणप्रान्तीय थे। जैन आचार्यों में शब्दागम – व्याकरण, तर्कागम – न्याय शास्त्र और परमागम – सिद्धान्त, इन तीन विद्याओं में निपुण आचार्य को त्रैविद्य उपाधि से अलंकृत किया जाता था। इससे स्पष्ट है कि आचार्य भावसेन इन तीनों विद्याओं के प्रकाण्ड विद्वान् थे। इस ग्रन्थ के अन्त में दी हुई प्रशस्ति से स्पष्ट है कि आचार्य भावसेन सेनगण के दिगम्बर आचार्य थे। सेनगण की पट्टावली में भी इनका उल्लेख मिलता है।

"वादिगिरिवज्रदण्ड", "वादिपर्वतवज्र" "वादिगिरिसुरेश्वर" आदि विशेषणों से स्पष्ट है कि ये शास्त्रार्थी विद्वान् थे। **"तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा"** के लेखक स्व. डॉ. नेमिचन्द्रजी ज्योतिषाचार्य आरा ने तृतीय भाग में ऊहापोह कर उनका समय तेरहवीं शताब्दी का मध्य भाग निर्धारित किया है। इनके द्वारा लिखित निम्न ग्रन्थ उपलब्ध हैं[1]।

(१) प्रमाण प्रमेय, (२) कथाविचार, (३) शाकटायन व्याकरण टीका, (४) कातन्त्ररूपमाला, (५) न्यायसूत्रावलि, (६) भक्ति मुक्तिविचार, (७) सिद्धान्तसार, (८) न्यायदीपिका, (९) सप्तपदार्थी टीका, (१०) विश्वतत्त्वप्रकाश।

कातन्त्र रूपमाला के प्रथम सन्दर्भ और द्वितीय सन्दर्भ भागों को निम्न प्रकरणों में विभक्त किया है–

---

१. तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा तृतीय भाग पृ. २५६–२६४

१. कातन्त्र–रूपमाला, २. जैनेन्द्र–महावृत्ति और ३.पाणिनि–व्याकरण की समानान्तर सञ्ज्ञाएँ

कातन्त्र में	जैनेन्द्र में	पाणिनि में
वर्ण	अल्	अल्
स्वर	अच्	अच्
व्यञ्जन	हल्	हल्
समानसञ्ज्ञक	अक्	अक्
सवर्ण	स्व	सवर्ण
ह्रस्व	प्र	ह्रस्व
दीर्घ	दी	दीर्घ
	प	प्लुत
नामि	इच्	इच्
अनामि	(०)	(०)
सन्ध्यक्षर	एच्	एच्
असन्ध्यक्षर	अक्	अक्
अघोष	खर्	खर्
घोष	हश्	हश्
अशिट्	हय्	हय्
शिट्	शल्	शल्
ऊष्माण	ऊष्माण	ऊष्माण
धुट्	झल्	झल्
अधुट्	यम्	यम्
अनुनासिक	ञम्	ञम्
अन्तःस्थ	यण्	यण्
लिंग	मृत्	प्रातिपदिक

कातन्त्र–रूपमाला

व्यञ्जनान्त–लिङ्ग–प्रकरणम्

श्री शर्ववर्मकृतकलाप–व्याकरणस्य
वादिपर्वतवज्रश्रीमद्भावसेनत्रैविद्यकृता टीका

कातन्त्र–रूपमाला

व्यञ्जनान्त–लिंगप्रकरणम्

ग्रन्थकारस्य मङ्गलाचरणम्

वीरं प्रणम्य सर्वज्ञं, विनष्टाशेष–दोषकम्।
कातन्त्र–रूपमालेयं, बाल–बोधाय कथ्यते।।१।।

अन्वयार्थ – **(विनष्ट–अशेषदोषकम्)** नष्ट हो गये हैं, सम्पूर्ण दोष जिनके ऐसे **(सर्वज्ञं वीरं)** सर्वज्ञ महावीर भगवान् को अथवा चौबीसों तीर्थंकरों को **(प्रणम्य)** नमस्कार कर **(इयं कातन्त्ररूपमाला)** यह कातन्त्ररूपमाला नामक व्याकरण **(बालबोधाय)** अज्ञानी/अनभिज्ञ जनों को ज्ञान कराने के लिये **(कथ्यते)** कही जाती है अर्थात् लिखी जाती है।।१।।

भावार्थ – बाल शब्द का अर्थ मन्दबुद्धि है। अन्यत्र बाल शब्द के भिन्न अर्थ भी दृष्टिगोचर होते हैं। यथा – **बालस्त्रिविधाः प्रोक्ताः – मतिकृताः, कालकृताः शरीरपरिमाण–कृताश्चेति।** अर्थात् – बाल तीन प्रकार के हैं – बुद्धिकृत बाल, उम्र में बाल और शरीर के प्रमाण से बाल।

यहाँ मतिकृत बाल को ग्रहण करना चाहिये, अन्य को नहीं। क्योंकि दिगम्बर जैनदर्शन के अनुसार आठ वर्ष अन्तर्मुहूर्त की अवस्था को प्राप्त जीव, संयम को धारण कर सर्वज्ञ बन सकता है।।१।।

नोट – इस श्लोक में गणधरों को तथा मुनिराजों के लिये नमस्कार किया गया है। क्यों नमस्कार किया है यह नहीं दर्शाया है, जो कि होना चाहिये। क्योंकि विशेषण के बिना विशेष्य का कथन कैसे सम्भव है।।३।।

गुरुभक्त्या वयं सार्द्ध,–द्वीप–द्वितय–वर्त्तिनः।
वन्दामहे त्रिसङ्ख्योन,–नव–कोटि–मुनीश्वरान्।।४।।

अन्वयार्थ – (वयं) हम सब **(सार्द्धद्वीपद्वितयवर्त्तिनः)** ढाई द्वीप में प्रवर्तन करने वाले **(त्रिसंख्योन)** तीन कम **(नवकोटि)** नौ करोड़ **(मुनीश्वरान्)** मुनिराजों को **(गुरुभक्त्या)** गुरुभक्ति से **(वन्दामहे)** वन्दना करते हैं/वन्दना करता हूँ।।४।।

भावार्थ – ढाई द्वीप में विराजमान – छठे गुणस्थानवर्ती प्रमत्तसंयत मुनिराजों की संख्या ५,९३,९८,२०६ है। सातवें गुणस्थानवर्ती अप्रमत्तसंयत मुनिराजों की संख्या २,९६,९९,१०३ है। आठवें गुणस्थानवर्ती अपूर्वकरण मुनिराजों की संख्या ८९७ है। नौवें गुणस्थानवर्ती अनिवृत्तिकरण मुनिराजों की संख्या ८९७ है। दशवें गुणस्थानवर्ती सूक्ष्मसाम्पराय मुनिराजों की संख्या ८९७ है। ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती उपशान्तकषाय मुनिराजों की संख्या २९९ है। बारहवें गुणस्थानवर्ती क्षीणमोह मुनिराजों की संख्या ५९८ है। तेरहवें गुणस्थानवर्ती सयोगकेवली मुनिराजों की संख्या ८,९८,५०२ है। चौदहवें गुणस्थानवर्ती अयोगकेवली मुनिराजों की संख्या ५९८ है। इस प्रकार छठें गुणस्थान से लेकर चौदह गुणस्थान तक मुनिराजों की संख्या तीन कम नौ करोड़ होती है। अधिक से अधिक इतने मुनिराज हो सकते हैं।

अज्ञान–तिमिरान्धस्य, ज्ञानाञ्जन–शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः।।५।।

अन्वयार्थ – (येन) जिन्होंने **(ज्ञानाञ्जनशलाकया)** ज्ञान रूपी अञ्जन की शलाका से **(अज्ञानतिमिरान्धस्य)** अज्ञान रूपी अन्धकार से आवरणीय/ढके **(चक्षुः)** नेत्र **(उन्मीलितं)** खोल दिये हैं **(तस्मै)** उन **(श्रीगुरवे)** श्री गुरु को **(नमः)** नमस्कार हो।।५।।

भावार्थ – आचार्य, उपाध्याय और साधु इन तीन रूपों में दिगम्बर मुनि होते हैं। ये ही सच्चे गुरु होते हैं। ऐसे गुरु महाराज हमारे अज्ञान रूपी अन्धकार को नष्ट करने में समर्थ हैं। जिन्होंने हमारे नेत्र खोल दिये हैं, ऐसे गुरु महाराज के लिये मेरा बारम्बार नमस्कार हो।

।। अथ व्यञ्जनान्त–लिङ्गाद्विभक्तय उच्यन्ते ।।

।। अथ व्यञ्जनान्ताः पुल्लिङ्गशब्दा यथाक्रमेणोच्यन्ते ।।

अब व्यञ्जनलिंग से विभक्तियाँ कहीं जाती हैं। सन्धि प्रकरण अत्यन्त उपयोगी होने के कारण सर्वप्रथम कहा गया। उसके बाद स्वरान्तलिंग प्रकरण कहा गया। अब व्यञ्जनान्त लिंग प्रकरण कहा जाता है। पूर्वार्द्ध के प्रथम खण्ड सन्धि प्रकरण में १२४ सूत्र हैं। पूर्वार्द्ध के द्वितीय खण्ड स्वरान्तलिंग प्रकरण में १२५ से २५३ तक १२९ सूत्र हैं। पूर्वार्द्ध के तृतीय खण्ड व्यञ्जनान्तलिंग प्रकरण में २५४ से ३६५ तक ११० सूत्र हैं।

अब व्यञ्जनान्त पुल्लिंग शब्दों का प्रकरण यथाक्रम से कहा जाता है। व्यञ्जनान्त वर्ण क्.....ह, पर्यन्त हैं।

व्यञ्जनान्तलिंग प्रकरण प्रारम्भ करने के पूर्व आचार्य भगवन्त सर्वज्ञ प्रभु को नमस्कार स्वरूप मध्य मंगलाचरण कहते हैं।अब व्यञ्जनान्तलिंग प्रकरण कहा जाता है। व्यञ्जनान्तलिंग प्रकरण प्रारम्भ करने के पूर्व आचार्य भगवन्त सर्वज्ञ प्रभु को नमस्कार स्वरूप मध्य मंगलाचरण कहते हैं।

सर्वज्ञं तमहं वन्दे, परं ज्योतिस्तमो पहम्।
प्रवृत्ता यन्मुखाद्देवी, सर्वभाषा सरस्वती।।१।।

श्लोकार्थ – (अहं) मैं **(तमो पहम्)** अन्धकार से रहित **(परं ज्योतिः) उत्कृष्ट ज्योति स्वरूप (तम्)** उस **(सर्वज्ञम्)** सर्वज्ञप्रभु को **(वन्दे)** नमस्कार करता हूँ। **(यन्मुखात्)** जिनके मुख से **(सर्वभाषा)** सर्वभाषामयी **(सरस्वती देवी)** सरस्वती देवी **(प्रवृत्ता)** प्रवृत्त हुई।

नोट – व्यञ्जनान्तलिंग में सि, भ्याम्, भिस्, भ्यस् और सुप् विभक्तियों के होने पर ही विभक्ति कार्य होता है। औ जस् आदि स्वर वाली विभक्तियों के होने पर, कुछ भी कार्य नहीं होता है। परन्तु नकारान्त शब्द, श्वन्, युवन् तथा मघवन् आदि शब्दों में स्वर विभक्ति के होने पर भी कार्य होता है। जिन की चर्चा यथाक्रम करेंगे।

गकार के स्थान पर ककार प्रथम अक्षर की अनुवृत्ति आ रही है।

(२.२०४)विधिसूत्रम् – वा विरामे।।२४२।।

विरामे धुटां प्रथमस्तृतीयश्च वा भवति। सुवाक्, सुवाग्। सुवाचौ। सुवाचः। एवं सम्बुद्धौ। सुवाचम्। सुवाचौ। सुवाचः। सुवाचा। सुवाग्भ्याम्। सुवाग्भिः। सुवाचे। सुवाग्भ्याम्। सुवाग्भ्यः। सुवाचः। सुवाचोः। सुवाचाम्। सुवाचि। सुवाचोः। सुपि। गत्वम्।

अर्थ – विराम होने पर धुटों के प्रथम अक्षर को विकल्प से तृतीय होता है।

सुवाक्, सुवाग् – सुवाच् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "सुवाच् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "सुवाच्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "सुवाग्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश हो कर, "सुवाक्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा ककार के स्थान पर विकल्प से गकार आदेश हो कर **"सुवाग्"** तथा **"सुवाक्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

सुवाचौ – सुवाच् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "सुवाच् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुवाचौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवाचः – सुवाच् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "सुवाच् + अस्" इस स्थिति में "**व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"सुवाचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसी प्रकार सम्बुद्धि में भी **"हे सुवाक्, हे सुवाग्, हे सुवाचौ, हे सुवाचः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

सुवाचम् – सुवाच् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "सुवाच् + अम्" इस स्थिति में "**व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुवाचम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवाचा – सुवाच् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "सुवाच् + आ" इस स्थिति में "**व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुवाचा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश हो जाता है। गकार आदेश हो जाने पर –

(०००)विधिसूत्रम् – अघोषे प्रथमः।।१२१।।

अघोषे परे धुटां प्रथमो भवति। इति कत्वम्। नामिकरेत्यादिना सस्य षत्वम्।

अर्थ – अघोष परे होने पर धुट् वर्णों के स्थान पर प्रथम अक्षर होता है।

सुवाग् + सु इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र द्वारा गकार के स्थान पर, ककार आदेश तथा **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "सुवाक् + षु" इस स्थिति में ककार और षकार को क्षकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(०००)विधिसूत्रम् – कषयोगे क्षः।।२५५।।

ककारषकारयोर्योगे क्षो भवति। सुवाक्षु।

अर्थ – ककार और षकार के योग होने पर दोनों के स्थान पर क्ष आदेश होता है।

अर्थात् सुवाक् शब्द का क् और सु विभक्ति के स्थान पर आदेशित षकार, इन दोनों के स्थान पर "क्ष" आदेश हो जायेगा।

सुवाक्षु – सुवाच् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "सुवाच् + सु" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "सुवाग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "सुवाक् + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"**(१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर तथा **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र से क्–ष् के स्थान पर क्षकार आदेश हो कर **"सुवाक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवाक् + सु यहाँ ककार को वैकल्पिक खकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(०००)विधिसूत्रम् – कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा।।२५६।।

कवर्गप्रथमस्य द्वितीयो भवति शषसेषु परतो वा। सुवाख्सु। प्रत्यञ्च् शब्दस्य तु भेदः। चवर्गदृगादीनां चेत्यत्र चवर्गग्रहणबलादञ्च् युज् क्रुञ्चां प्रागेव गत्वम्।

अर्थ – शकार, षकार तथा सकार परे होने पर कवर्ग के प्रथम अक्षर के स्थान पर द्वितीय अक्षर होता है।

शंका – "प्रत्यञ्च्" शब्द में मकार, नकार तो है नहीं फिर अनुस्वार कैसे होगा ?

समाधान – शब्दों के मध्य में रहने वाले ङ्, ञ्, ण्, न्, म्, ये अनुनासिक मकार और नकार के स्थान पर तद्रूप आदेश हो कर सिद्ध होते हैं।

यथा – "प्रति + अञ्च्" यहाँ सर्वप्रथम अन्च् शब्द था, चवर्ग के कारण, नकार को **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से ञकार आदेश हुआ है।

शंका – अन्त रहित मकार–नकार हो ऐसा क्यों कहा ?

समाधान – अगर अन्त रहित मकार और नकार नही कहते तो "प्रशान् करोति" के नकार को भी अनुस्वार हो जाता।

शंका – धुट् परे हो ऐसा क्यों कहा ?

समाधान – अगर धुट् परे नहीं कहते तो "गम् + यते" तथा "हन् + यते" यहाँ भी मकार – नकार को अनुस्वार हो जाता। तब **"गम्यते"** और **"हन्यते"** प्रयोग नहीं बनते।

यथा – अन्च् धातु के नकार के स्थान पर अनुस्वार हो कर "अंच्" हुआ। यहाँ अनुस्वार से परे चवर्ग है। अतः अनुस्वार को चवर्ग का पंचम अक्षर हो कर "अञ्च्" शब्द बना है।

"प्रत्यञ्ग्" शब्द के ञकार (नकार) के स्थान पर अनुस्वार आदेश हो कर "प्रत्यंग्" इस स्थिति में अनुस्वार को ङकार परवर्ग करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.२५१)विधिसूत्रम् – वर्गे वर्गान्तः।।२५८।।

अनन्त्यो नुस्वारो वर्गे परे वर्गस्यान्तो भवति।

अर्थ – वर्ग परे होने पर अन्त रहित अनुस्वार के स्थान पर वर्ग के अन्त का अक्षर होता है।

अर्थात् अन्त रहित अनुस्वार से कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग तथा पवर्ग के होने पर अनुस्वार भी उसी वर्ग का पञ्चम अक्षर हो जाता है।

यथा – प्रत्यंग् पद में अनुस्वार से परे गकार है, अतः अनुस्वार को कवर्ग का पंचम अक्षर ङ् हो कर "प्रत्यङ्ग्" शब्द बना है।

सम्बुद्धि में पूर्ववत् **हे प्रत्यङ्, हे प्रत्यञ्चौ, हे प्रत्यञ्चः**, रूप सिद्ध होते हैं।

प्रत्यञ्चम् – प्रत्यञ्च् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "प्रत्यञ्च् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्रत्यञ्चम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर प्रत्यञ्च् + अस् इस स्थिति में नकार (ञकार) की अनुषंग सञ्ज्ञा करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१२)सञ्ज्ञासूत्रम् – व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः।।२६०।।

धातुलिङ्गयोरन्त्याद् व्यञ्जनाद् यः पूर्वो नकारः सो नुषङ्गसञ्ज्ञो भवति। अघुट् स्वरे लोपमित्यनुवर्तते। व्यञ्जने चैषां निरिति च।

अर्थ – धातु और लिंग के अन्त्य व्यञ्जन से पूर्व जो नकार है उसकी अनुषंगसञ्ज्ञा होती है।

अर्थात् "प्रत्यञ्च्" पद के अन्त में चकार है और चकार से पूर्व ञकार (नकार) है। अतः ञकार (नकार) की अनुषंग सञ्ज्ञा उपर्युक्त सूत्र से हो जाती हैं।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"अन्त्यात्पूर्व उपधा"** (७६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है। **"अघुट्स्वरे लोपम्"** (१८७) तथा **"व्यञ्जने चैषां निः"** (१८८) सूत्रों की भी अनुवृत्ति आ रही है।

"प्रत्यञ्च् + अस्" यहाँ ञकार अनुषंग का लोप करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.११६)विधिसूत्रम् – अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्।।२६१।।

अक्रुञ्चेरिदनुबन्धवर्जितस्यानुषङ्गो लोपमापद्यते अघुट्स्वरे व्यञ्जने च परे।

अर्थ – अघुट् स्वर और व्यञ्जन परे होने पर क्रुञ्च् तथा इकार अनुबन्ध शब्दों को छोड़कर, अनुषंगसञ्ज्ञक का लोप होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"अघुट्स्वरे लोपम्"** (१८७) सूत्र की तथा **"व्यञ्जने चैषां निः"** (१८८) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही हैं।

भावार्थ – शब्दों की उत्पत्ति प्रायः धातुओं से हुआ करती है। कुछ धातुओं के इकार का अनुबन्ध लोप होने पर **"अत एव वर्जनादिदनुबन्धानां धातूनां नुरागमो स्तीति"।** इस परिभाषा द्वारा नु का आगम होता है। तथा कुछ धातुओं में पहले से ही नकार रहता है। जिन धातुओं में पहले से ही नकार होगा, वे इकार अनुबन्ध रहित धातुएँ कहलायेंगी। उन धातुओं के नकार की अनुषंग सञ्ज्ञा हो कर नकार का लोप हो जायेगा।

प्रतीचा – प्रत्यञ्च् (प्रति + अञ्च्) शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में टा विभक्ति के आने पर, "प्रति – अञ्च् + आ" इस स्थिति में, **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा प्रति के इकार को दीर्घ ईकार कर, "प्रतीच् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्रतीचा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रत्यग्भ्याम् – प्रत्यञ्च् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "प्रत्यञ्च् + भ्याम्" इस स्थिति में, **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर "प्रत्यञ्ग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप करने पर **"प्रत्यग्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रत्यग्भिः – प्रत्यञ्च् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "प्रत्यञ्च् + भिस्" इस स्थिति में, **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "प्रत्यञ्ग् + भिस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"प्रत्यग्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रतीचे – प्रत्यञ्च् (प्रति + अञ्च्) शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "प्रति – अञ्च् + ए" इस स्थिति में, **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा प्रति के इकार को दीर्घ ईकार कर, "प्रतीच् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्रतीचे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रत्यग्भ्यः – प्रत्यञ्च् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "प्रत्यञ्च् + भ्यस्" इस स्थिति में, **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "प्रत्यञ्ग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"प्रत्यग्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रत्यक्षु – प्रत्यञ्च् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "प्रत्यञ्च् + सु" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "प्रत्यञ्ग् + सु" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार कर, "प्रत्यंग् + सु" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ङकार आदेश कर, "प्रत्यङ्ग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "प्रत्यङ्क् + सु" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "प्रत्यक् + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "प्रत्यक् + षु" इस स्थिति में **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र की सहायता से **"प्रत्यक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है। अथवा **"कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा"** (२५६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर खकार आदेश करने पर **"प्रत्यख्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रत्यञ्च् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	प्रत्यङ्	प्रत्यञ्चौ	प्रत्यञ्चः
सम्बोधन	हे प्रत्यङ्	हे प्रत्यञ्चौ	हे प्रत्यञ्चः
द्वितीया	प्रत्यञ्चम्	प्रत्यञ्चौ	प्रतीचः
तृतीया	प्रतीचा	प्रत्यग्भ्याम्	प्रत्यग्भिः
चतुर्थी	प्रतीचे	प्रत्यग्भ्याम्	प्रत्यग्भ्यः
पंचमी	प्रतीचः	प्रत्यग्भ्याम्	प्रत्यग्भ्यः
षष्ठी	प्रतीचः	प्रतीचोः	प्रतीचाम्
सप्तमी	प्रतीचि	प्रतीचोः	प्रत्यक्षु, प्रत्यख्सु

अब क्रुञ्च् (पक्षी) शब्द के प्रयोग सिद्ध करते हैं।

क्रुङ् – क्रुञ्च् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "क्रुञ्च् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, **"क्रुञ्च्"** इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, **"क्रुञ्ग्"** इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार (जो कि नकार के रूप

ञकार के स्थान पर अनुस्वार कर, "क्रुंग् + भिस्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ङकार आदेश कर, "क्रुङ्ग् + भिस्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से गकार का लोप कर तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"क्रुङ्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

क्रुञ्चे – क्रुञ्च् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "क्रुञ्च् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"क्रुञ्चे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

क्रुङ्भ्यः – क्रुञ्च् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "क्रुञ्च् + भ्यस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "क्रुञ्ग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५६) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार कर, "क्रुंग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ङकार आदेश कर, "क्रुङ्ग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से गकार का लोप कर तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"क्रुङ्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

क्रुञ्चः – क्रुञ्च् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि्–ङस् विभक्ति के आने पर, "क्रुञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"क्रुञ्चः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

क्रुञ्चोः – क्रुञ्च् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "क्रुञ्च् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"क्रुञ्चोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

क्रुञ्चाम् – क्रुञ्च् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "क्रुञ्च् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"क्रुञ्चाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

क्रुञ्चि – क्रुञ्च् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "क्रुञ्च् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"क्रुञ्चि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इदनुबन्धवर्जितस्येति किं ? सुकन्स्शब्दः। कसि गतिशासनयोः। अत एव वर्जनादिदनुबन्धानां धातूनां नुरागमो स्तीति। सुपूर्वकः सुष्ठु कंस्ते क्विप्। क्विप् सर्वापहारिलोपः। कृत्तद्धितसमासाश्चेति लिङ्गसञ्ज्ञा। प्रथमैकवचनं सिः। व्यञ्जनाच्चेति सेर्लोपः। मनोरनुस्वारो धुटि इति नकारस्यानुस्वारे प्राप्ते सर्वविधिभ्यो लोपविधि–र्बलवानिति न्यायात् संयोगान्तस्य लोप इति नित्यं सकारलोपः। सुकन्। स्वरे परे मनोरनुस्वारो धुटि इति अनुस्वारः। महत्साहचर्याद्धातोर्दीर्घो न स्यात्। सुकंसौ। सुकंसः। सुकंसम् सुकंसौ। सुकंसः सुकंसा। सुकन्भ्याम्। सुकन्भिः। इत्यादि सम्बोधने पि तद्वत्।

शंका – इत् अनुबन्ध को छोड़कर क्यों कहा ?

समाधान – सुकन्स् शब्द "**कसि गतिशासनयोः**" धातु से निष्पन्न होता है। धातु के इकार का अनुबन्ध लोप होने पर **"अत एव वर्जनादिदनुबन्धानां धातूनां नुरागमो स्तीति"** इस परिभाषा द्वारा धातुओं को नु का आगम होता है।

अर्थात् कुछ धातुओं में नकार पहले से ही रहता है। कुछैक धातुओं में इकार का अनुबन्ध लोप होने पर नु का आगम होता है।

सु उपसर्ग पूर्वक कसि धातु में इकार का अनुबन्ध लोप हुआ है। अतः धातु से क्विप् प्रत्यय कर, "क्विप्" का सर्वापहारिलोप हो जाने पर, **"अत एव वर्जनादिदनुबन्धानां धातूनां नुरागमो स्तीति"** इस परिभाषा द्वारा नु का आगम होता है। **"सुकन्स्"** शब्द निष्पन्न होता है तथा **"कृत्तद्धितसमासाश्च"** (४२३) सूत्र से लिंग सञ्ज्ञा होती है।

सुकन् – सुकन्स् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में "सि" विभक्ति के आने पर, "सुकन्स् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "सुकन्स्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५८) सूत्र द्वारा नकार को अनुस्वार, तथा **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से सकार का लोप, इस प्रकार युगपत् दो सूत्रों की प्राप्ति होने पर **"सर्वविधिभ्यो लोपविधिर्बलवानिति न्यायात्"** अर्थात् – सभी विधियों में लोप विधि बलवान् होती है। इस परिभाषा के कारण **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२६०) सूत्र से सकार का लोप हो कर **"सुकन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन आदि विभक्तियों में पूजता के सहचर्य से धातु को दीर्घ न हो।

नोट – किससे और कैसे दीर्घ होना यह स्पष्ट नहीं हुआ है।

सुकंसे – सुकन्स् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "सुकन्स् + ए" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५८) सूत्र द्वारा नकार को अनुस्वार कर, "सुकंस् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुकंसे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुकन्भ्यः – सुकन्स् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "सुकन्स् + भ्यस्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२६०) सूत्र से सकार का लोप कर, "सुकन् + भ्यस्" इस स्थिति में **"लिंगान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र द्वारा नकार का लोप प्राप्त होने पर, **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से सकार का लोप अलुप्तवत् होने से, नकार का लोप नहीं होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"सुकन्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुकंसः – सुकन्स् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि्–ङस् विभक्ति के आने पर, "सुकन्स् + अस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५८) सूत्र द्वारा नकार को अनुस्वार कर, "सुकंस् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"सुकंसः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुकंसोः – सुकन्स् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "सुकन्स् + ओस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५८) सूत्र द्वारा नकार को अनुस्वार कर, "सुकंस् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"सुकंसोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुकंसाम् – सुकन्स् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "सुकन्स् + आम्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५८) सूत्र द्वारा नकार को अनुस्वार कर, "सुकंस् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुकंसाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुकंसि – सुकन्स् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "सुकन्स् + ङि" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५८) सूत्र द्वारा नकार को अनुस्वार कर, "सुकंस् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुकंसि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राञ्चौ – प्राञ्च् शब्द से (पूजा अर्थ में) प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राञ्चौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राञ्चः – प्राञ्च् शब्द से (पूजा अर्थ में) प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"प्राञ्चः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसी प्रकार सम्बुद्धि में **हे प्राङ्, हे प्राञ्चौ, हे प्राञ्चः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

प्राञ्चम् – प्राञ्च् शब्द से (पूजा अर्थ में) द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राञ्चम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राञ्च् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, अनुषंग के लोप का निषेध करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(०००)विधिसूत्रम् – नाञ्चेः पूजायाम्।।२६४।।

पूजार्थे वर्तमानस्य अञ्चेरनुषङ्गस्य लोपो न भवति अघुट् स्वरे व्यञ्जने च परे। प्राङ्। प्राञ्चौ। प्राञ्चः। हे प्राङ्। हे प्राञ्चौ। हे प्राञ्चः। प्राञ्चम्। प्राञ्चौ। प्राञ्चः। प्राञ्चा प्राङ्भ्याम्। प्राङ्भिः। इत्यादि। सुपि विशेषः। ङात्परस्य सस्य षो भवति। प्राङ्षु। अञ्चु गतिपूजनयोः। प्रपूर्वकः प्राञ्चतीति क्विप् सर्वापहारिलोपः। कृत्तद्धित–समासाश्चेति लिङ्गसञ्ज्ञा। यत्र गत्यर्थस्तत्र अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत् इत्यनुषङ्गलोपः। यत्र पूजार्थस्तत्र नाञ्चेः पूजायामिति अघुट्स्वरे व्यञ्जने अनुषङ्गलोपो न भवति। अदद्रञ्चञ्च्–शब्दस्य तु भेदः। अञ्चु अदस्पूर्वः–अमुमञ्चतीति क्विप् चेति क्विप् प्रत्ययः। क्विपि सति –

अर्थ – अघुट् स्वर और व्यञ्जन परे होने पर पूजार्थ में वर्तमान अञ्च् धातु के अनुषंग का लोप नहीं होता है।

अञ्चु धातु गति और पूजा अर्थ में प्रयुक्त होती है। गति अर्थ में अनुषंग का लोप हो जायेगा।

प्राञ्चे – प्राञ्च् शब्द से (पूजा अर्थ में) चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप प्राप्त होने पर, **"नाञ्चेः पूजायाम्"** (२६४) सूत्र से निषेध कर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राञ्चे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राङ्भ्यः – प्राञ्च् शब्द से (पूजा अर्थ में) चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + भ्यस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "प्राञ्ग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप प्राप्त होने पर, **"नाञ्चेः पूजायाम्"** (२६४) सूत्र से निषेध कर, **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार कर, "प्रांग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ङकार आदेश कर, "प्राङ्ग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५९) सूत्र से गकार का लोप कर तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"प्राङ्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राञ्चः – प्राञ्च् शब्द से (पूजा अर्थ में) पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप प्राप्त होने पर, **"नाञ्चेः पूजायाम्"** (२६४) सूत्र से निषेध कर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"प्राञ्चः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राञ्चोः – प्राञ्च् शब्द से (पूजा अर्थ में) षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप प्राप्त होने पर, **"नाञ्चेः पूजायाम्"** (२६४) सूत्र से निषेध कर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"प्राञ्चोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अब प्र उपसर्ग पूर्वक अञ्चु धातु का गति अर्थ में प्रयोग सिद्ध करते हैं। गति अर्थ में शसादि विभक्तियों के आने पर अनुषंग का लोप हो जायेगा।

प्राङ् – प्र + अञ्च् शब्द से (गति अर्थ में) प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "प्र + अञ्च् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "प्र + अञ्च्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "प्र + अञ्ग्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार कर, "प्र + अंग्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ङकार आदेश कर, "प्र + अङ्ग्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से गकार का लोप हो कर "प्र + अङ्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि करने पर, **"प्राङ्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राञ्चौ – प्राञ्च् शब्द से (गति अर्थ में) प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राञ्चौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राञ्चः – प्राञ्च् शब्द से (गति अर्थ में) प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"प्राञ्चः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसी प्रकार सम्बुद्धि में **हे प्राङ्, हे प्राञ्चौ, हे प्राञ्चः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

प्राञ्चम् – प्राञ्च् शब्द से (गति अर्थ में) द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राञ्चम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राचः – प्राञ्च् शब्द से (गति अर्थ में) द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अञ्च् के ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "प्र अच् + अस्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा प्र के अकार को दीर्घ आकार कर, "प्राच् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"प्राचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राचः – प्राञ्च् शब्द से (गति अर्थ में) पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "प्र अच् + अस्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा प्र के अकार को दीर्घ आकार कर, "प्राच् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"प्राचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राचोः – प्राञ्च् शब्द से (गति अर्थ में) षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अञ्च् के ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "प्र अच् + ओस्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा प्र के अकार को दीर्घ आकार कर, "प्राच् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"प्राञ्चोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राचाम् – प्राञ्च् शब्द से (गति अर्थ में) षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अञ्च् के ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "प्र अच् + आम्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा प्र के अकार को दीर्घ आकार कर, "प्राच् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राचाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राचि – प्राञ्च् शब्द से (गति अर्थ में) सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अञ्च् के ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "प्र अच् + इ" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा प्र के अकार को दीर्घ आकार कर, "प्राच् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राचि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्यङ् – सम्यञ्च् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "सम्यञ्च् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "सम्यञ्च्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर "सम्यञ्ग्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार (जो कि नकार के रूप में है) के स्थान पर अनुस्वार कर, "सम्यंग्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ङकार आदेश कर, "सम्यङ्ग्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से गकार का लोप हो कर, **"सम्यङ्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्यञ्चौ – सम्यञ्च् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "सम्यञ्च् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सम्यञ्चौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्यञ्चः – सम्यञ्च् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "सम्यञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"सम्यञ्चः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बुद्धि में पूर्ववत् **हे सम्यङ्, हे सम्यञ्चौ, हे सम्यञ्चः**, रूप सिद्ध होते हैं।

सम्यञ्चम् – सम्यञ्च् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "सम्यञ्च् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सम्यञ्चम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

समीचः – सम्यञ्च् (समि + अञ्च्) शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "समि – अञ्च् + अस्" इस स्थिति में, **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अञ्च् के ञकार (नकार) की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार (नकार) का लोप कर, **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा समि के इकार को दीर्घ ईकार कर, "समीच् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"समीचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

समीचः – सम्यञ्च् (समि + अञ्च्) शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "समि – अञ्च् + अस्" इस स्थिति में, **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अञ्च् के ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा समि के इकार को दीर्घ ईकार कर, "समीच् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"समीचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

समीचोः – सम्यञ्च् (प्रति + अञ्च्) शब्द से षष्ठी–सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "समि – अञ्च् + ओस्" इस स्थिति में, **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अञ्च् के ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा समि के इकार को दीर्घ ईकार कर, "समीच् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"समीचोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

समीचाम् – सम्यञ्च् (समि + अञ्च्) शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "समि – अञ्च् + आम्" इस स्थिति में, **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा समि के इकार को दीर्घ ईकार कर, "समीच् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"समीचाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

समीचि – सम्यञ्च् (प्रति + अञ्च्) शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "समि – अञ्च् + इ" इस स्थिति में, **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा समि के इकार को दीर्घ ईकार कर, "समीच् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"समीचि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदस् पूर्वक अञ्चु धातु से क्विप् प्रत्यय के होने पर, अदस् शब्द के स्थान पर अद्रि आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(४.५००)विधिसूत्रम्–विष्वग्देवयोश्चान्त्यस्वरादेरद्र्यञ्चतौ क्वौ।।२६५।।

विष्वग्देवयोः सर्वनाम्नश्चान्त्यस्वरादेरवयवश्चाञ्चतौ क्विबन्ते परे अद्रिरादेशो भवति। इति सकारसहितस्य अकारस्य अद्रिरादेशः। इवर्णो यत्वम्। अदद्र्यञ्च् इति स्थिते सति –

अर्थ – क्विबन्त अञ्चु परे होने पर विष्वक् और देव के सर्वनाम सञ्ज्ञक अन्त्यस्वरादि के अवयव के स्थान पर अद्रि आदेश होता है।

अर्थात् अदस् शब्द के सकार सहित अकार के स्थान (यानी अदस् के अस् के स्थान) पर अद्रि आदेश कर, अद्–अद्रि इस स्थिति में इकार को **"इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः"** (४४) सूत्र से इकार के स्थान पर यकार आदेश हो कर, "अदद्र्यञ्च्" शब्द निष्पन्न होता है। क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारि लोप हो गया।

अदद्र्यञ्च् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, बहुलता से दकार के स्थान पर, मकार तथा दकार से परे वर्ण के स्थान पर उकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(०००)विधिसूत्रम् – अदद्र्यञ्चो दस्य बहुलम्।।२६६।।

अदद्र्यञ्चो दकारस्य बहुलं मकारो भवति मात् परस्य रस्य उत्वं च। अदमुयङ्। अदमुयञ्चौ। अदमुयञ्चः। एवं सम्बुद्धौ। अदमुयञ्चम्। अदमुयञ्चौ।

अर्थ – अदद्र्यञ्च् शब्द के दकार के स्थान पर बहुलता से मकार होता है और मकार से परे रेफ के स्थान पर उकार होता है।

बहुल के चार अर्थ होते हैं। कहीं, पर को, कार्य होता है। कहीं, पूर्व को, कार्य होता है। कहीं, दोनों को, कार्य होता है। और कहीं दोनों को ही नहीं होता है। जैसे – "अदद्र्यञ्च" शब्द के दकार के स्थान पर मकार आदेश क्रमशः होंगे। अदमुयञ्च्, अमुद्र्यञ्च्, अमुमुयञ्च्, तथा अदद्र्यञ्च् ये चार शब्द बनने पर रूप भी चार प्रकार से क्रमशः सिद्ध करके दिखायेंगे।

अदमुयञ्चौ – "अदद्रयञ्च्" शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "अदद्रयञ्च् + औ" इस स्थिति में **"अदद्रयञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पर दकार के स्थान पर मकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, "अदमुयञ्च् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अदमुयञ्चौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदमुयञ्चः – "अदद्रयञ्च्" शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "अदद्रयञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"अदद्रयञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पर दकार के स्थान पर मकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, "अदमुयञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"अदमुयञ्चः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसी प्रकार सम्बोधन में भी **"हे अदमुयङ्", "हे अदमुयञ्चौ", "हे अदमुयञ्चः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

अदमुयञ्चम् – "अदद्रयञ्च्" शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "अदद्रयञ्च् + अम्" इस स्थिति में **"अदद्रयञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पर दकार के स्थान पर मकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, "अदमुयञ्च् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अदमुयञ्चम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदद्रयञ्च् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "अदद्रयञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि + अच्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर "अदद्रीच् + अस् इस स्थिति में **"अदद्रयञ्चो दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, अदमुईच् + अस् इस स्थिति में **"वमुवर्णः"** (४५) सूत्र से उकार के स्थान पर वकार आदेश की प्राप्ति का निषेध करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर, "अदद्रीच् + आ" इस स्थिति में **"अदद्रयञ्चो दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, "अदमुईच् + आ" इस स्थिति में **"वमुवर्णः"** (४५) सूत्र की प्राप्ति होने पर, **"नोतो वः"** (२६७) सूत्र से निषेध कर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अदमुईचा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदमुयग्भ्याम् – अदद्रयञ्च् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "अदद्रयञ्च् + भ्याम्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अदद्रयञ्ग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "अदद्रयंग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ङकार आदेश कर, "अदद्रयङ्ग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ङकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "अदद्रयग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"अदद्रयञ्चो दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश करने पर, **"अदमुयग्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदमुयग्भिः – अदद्रयञ्च् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "अदद्रयञ्च् + भिस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अदद्रयञ्ग् + भिस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "अदद्रयंग् + भिस्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ङकार आदेश कर, "अदद्रयङ्ग् + भिस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ङकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "अदद्रयग् + भिस्" इस स्थिति में **"अदद्रयञ्चो दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र से अन्तिम दकार के स्थान पर मकार आदेश तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, "अदमुयग् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"अदमुयग्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदमुईचे – अदद्रयञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "अदद्रि + अञ्च् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०)

अदमुईचोः – अदद्र्यञ्च् (अदद्रि+अञ्च्) शब्द से षष्ठी–सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "अदद्रि + अञ्च् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि + अच् + ओस्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर, "अदद्रीच् + ओस् इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चो दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, अदमुईच् + ओस् इस स्थिति में **"वमुवर्णः"** (४५) सूत्र से उकार के स्थान पर वकार आदेश की प्राप्ति का **"नोतो वः"** (२६७) सूत्र से निषेध कर, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश कर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अदमुईचोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदमुईचाम् – अदद्र्यञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "अदद्रि + अञ्च् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि + अच् + आम्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर, "अदद्रीच् + आम्" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चो दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, अदमुईच् + आम्" इस स्थिति में **"वमुवर्णः"** (४५) सूत्र से उकार के स्थान पर वकार आदेश की प्राप्ति का **"नोतो वः"** (२६७) सूत्र से निषेध कर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अदमुईचाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदमुईचि – अदद्र्यञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "अदद्रि + अञ्च् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि + अच् + इ" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर "अदद्रीच् + इ" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चो दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, अदमुईच् + इ" इस स्थिति में **"वमुवर्णः"** (४५) सूत्र से उकार के स्थान पर वकार आदेश की प्राप्ति का **"नोतो वः"** (२६७) सूत्र से निषेध कर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अदमुईचे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुद्र्यङ् – अदद्र्यञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से सि विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "अदद्र्यञ्च्" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पूर्व दकार के स्थान पर, मकार तथा अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुद्र्यञ्च्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अमुद्र्यञ्ग्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "अमुद्र्यंग्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ङकार आदेश कर, "अमुद्र्यङ्ग्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५९) सूत्र से गकार का लोप हो कर **"अमुद्र्यङ्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुद्र्यञ्चौ – "अदद्र्यञ्च्" शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + औ" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पूर्व दकार के स्थान पर मकार तथा अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुद्र्यञ्च् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अमुद्र्यञ्चौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुद्र्यञ्चः – "अदद्र्यञ्च्" शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + जस्" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पूर्व दकार के स्थान पर, मकार तथा अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुद्र्यञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"अमुद्र्यञ्चः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसी प्रकार सम्बोधन में भी **"हे अमुद्र्यङ्", "हे अमुद्र्यञ्चौ", "हे अमुद्र्यञ्चः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

अमुद्र्यञ्चम् – "अदद्र्यञ्च्" शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + अम्" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पूर्व दकार के स्थान पर, मकार तथा अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुद्र्यञ्च् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अदमुयञ्चम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

"अमुद्रच्यग्भिः – अदद्रच्यञ्च् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "अदद्रच्यञ्च् + भिस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अदद्रच्यञ्ग् + भिस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "अदद्रच्यंग् + भिस्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ङकार आदेश कर, "अदद्रच्यङ्ग् + भिस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ङकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "अदद्रच्यग् + भिस्" इस स्थिति में **"अदद्रच्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पूर्व दकार के स्थान पर मकार तथा अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुद्रच्यग् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसो–र्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अमुद्रच्यग्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुद्रीचे – अदद्रच्यञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "अदद्रि + अञ्च् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि + अच् + ए" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर "अदद्रीच् + ए" इस स्थिति में **"अदद्रच्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पूर्व दकार के स्थान पर मकार तथा अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुद्रीच् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अमुद्रीचे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुद्रच्यग्भ्यः – अदद्रच्यञ्च् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "अदद्रच्यञ्च् + भ्यस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अदद्रच्यञ्ग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "अदद्रच्यंग्+भ्यस्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ङकार आदेश कर, "अदद्रच्यङ्ग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ङकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "अदद्रच्यग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"अदद्रच्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पूर्व दकार के स्थान पर मकार

अमुद्रीचि – अदद्र्यञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "अदद्रि + अञ्च् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि + अच् + इ" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर "अदद्रीच् + इ" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पूर्व दकार के स्थान पर मकार तथा अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अमुद्रीचि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुद्रयक्षु, अमुद्रयख्सु – अदद्र्यञ्च् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च्+सु" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अदद्र्यञ्ग्+सु" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "अदद्र्यंग् + सु" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ङकार आदेश कर, "अदद्र्यङ्ग् + सु" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ङकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "अदद्र्यग् + सु" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से पूर्व दकार के स्थान पर मकार तथा अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुद्र्यग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "अमुद्र्यक् + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्यय– विकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "अमुद्र्यक् + षु" इस स्थिति में **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र की सहायता से **"अमुद्रयक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है। अथवा "अमुद्र्यक् + सु" इस स्थिति में **"कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा"** (२५६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर खकार आदेश करने पर **"अमुद्रयख्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुमुयञ्चः – "अदद्र्यञ्च्" शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + जस्" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार तथा दकार परक अकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुमुयञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"अमुमुयञ्चः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसी प्रकार सम्बोधन में भी **"हे अमुमुयङ्", "हे अमुमुयञ्चौ", "हे अमुमुयञ्चः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

अमुमुयञ्चम् – "अदद्र्यञ्च्" शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + अम्" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार तथा दकार परक अकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुमुयञ्च् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अमुमुयञ्चम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुमुईचः – अदद्र्यञ्च् (अदद्रि+अञ्च्) शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च्+अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार (नकार) की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार (नकार) का लोप कर, "अदद्रि + अच् + अस्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर "अदद्रीच् + अस् इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार तथा दकार परक अकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, अमुमुईच् + अस् इस स्थिति में **"वमुवर्णः"** (४५) सूत्र से उकार के स्थान पर वकार आदेश की प्राप्ति का **"नोतो वः"** (२६७) सूत्र से निषेध कर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"अमुमुईचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुमुईचा – अदद्र्यञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार (नकार) की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से

अमुमुईचे – अदद्र्यञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "अदद्रि + अञ्च् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि + अच् + ए" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर "अदद्रीच् + ए" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार तथा दकार परक अकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुमुईच् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अमुमुईचे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुमुयग्भ्यः – अदद्र्यञ्च् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + भ्यस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अदद्र्यञ्ग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "अदद्र्यंग्+भ्यस्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ङकार आदेश कर, "अदद्र्यङ्ग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ङकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "अदद्र्यग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार तथा दकार परक अकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुमुयग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अमुमुयग्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुमुईचः – अदद्र्यञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "अदद्रि + अञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि + अच् + अस्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर "अदद्रीच् + अस् इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार तथा दकार परक अकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुमुईच् + अस् इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अमुमुईचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुमुयक्षु, अमुमुयख्सु – अदद्रयञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अदद्रयञ्ग् + सु" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ङकार आदेश कर, "अदद्रयङ्ग् + सु" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, **"अदद्रयञ्चो दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र से दोनों दकार के स्थान पर मकार आदेश कर तथा दकार परक अकार तथा रेफ के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुमुयग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर, **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र की सहायता से **"अमुमुयक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है। अथवा "अमुमुयक् + सु" इस स्थिति में **"कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा"** (२५६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर खकार आदेश करने पर **"अमुमुयख्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुमुयञ्च् (अदद्रयञ्च्) शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अमुमुयङ्	अमुमुयञ्चौ	अमुमुयञ्चः
सम्बोधन	हे अमुमुयङ्	हे अमुमुयञ्चौ	हे अमुमुयञ्चः
द्वितीया	अमुमुयञ्चम्	अमुमुयञ्चौ	अमुमुईचः
तृतीया	अमुमुईचा	अमुमुयग्भ्याम्	अमुमुयग्भिः
चतुर्थी	अमुमुईचे	अमुमुयग्भ्याम्	अमुमुयग्भ्यः
पंचमी	अमुमुईचः	अमुमुयग्भ्याम्	अमुमुयग्भ्यः
षष्ठी	अमुमुईचः	अमुमुईचोः	अमुमुईचाम्
सप्तमी	अमुमुईचि	अमुमुईचोः	अमुमुयक्षु

अदद्रयङ्। अदद्रयञ्चौ। अदद्रयञ्चः। अदद्रयञ्चम्। अदद्रयञ्चौ। अदद्रीचः। अदद्रीचा। अदद्रयग्भ्याम्। अदद्रयग्भिः। अदद्रयक्षु।

४. **"अदद्रयञ्च्"** शब्द की सिद्धि **"अमुद्रयञ्च्"** की तरह ही है।

अदद्रीचः – अदद्र्यञ्च् (अदद्रि+अञ्च्) शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार (नकार) की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार (नकार) का लोप कर, "अदद्रि + अच् + अस्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर "अदद्रीच् + अस् इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार आदि आदेश नहीं होने पर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"अदद्रीचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदद्रीचा – अदद्र्यञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार (नकार) की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार (नकार) का लोप कर, "अदद्रि + अच् + आ" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर "अदद्रीच् + आ इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार आदि आदेश नहीं होने पर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अदद्रीचा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदद्र्यग्भ्याम् – अदद्र्यञ्च् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + भ्याम्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अदद्र्यञ्ग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से नकार (ञकार) के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "अदद्र्यंग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ङकार आदेश कर, "अदद्र्यङ्ग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "अदद्र्यग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"अदद्र्यञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार आदि आदेश नहीं होने पर, **"अदद्र्यग्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदद्र्यग्भिः – अदद्र्यञ्च् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "अदद्र्यञ्च् + भिस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के

"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः" (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि + अच् + अस्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर "अदद्रीच् + अस् इस स्थिति में **"अदद्रयञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार आदि आदेश नहीं होने पर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अदद्रीचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदद्रीचोः — अदद्रयञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से षष्ठी–सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "अदद्रि अञ्च् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि अच् + ओस्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर, "अदद्रीच् + ओस् इस स्थिति में **"अदद्रयञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार आदि आदेश नहीं होने पर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अदद्रीचोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदद्रीचाम् — अदद्रयञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "अदद्रि + अञ्च् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि + अच् + आम्" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"** (२६२) सूत्र से अञ्च् के अकार का लोप तथा अद्रि के इकार को दीर्घ ईकार कर "अदद्रीच् + आम्" इस स्थिति में **"अदद्रयञ्चौ दस्य बहुलम्"** (२६६) सूत्र द्वारा बहुलता से दोनों दकार के स्थान पर मकार आदि आदेश नहीं होने पर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अदद्रीचाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदद्रीचि — अदद्रयञ्च् (अदद्रि + अञ्च्) शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "अदद्रि + अञ्च् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से ञकार की अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक ञकार का लोप कर, "अदद्रि + अच् + इ" इस स्थिति में **"अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः"**

इस प्रकार अदस् शब्द पूर्वक अञ्चु धातु से निष्पन्न (१) अदमुयञ्च् (२) अमुद्र्यञ्च् (३) अमुमुयञ्च् तथा (४) अदद्र्यञ्च् शब्दों की रूपमाला सिद्ध होती है।

"बहुल" का अर्थ श्लोक द्वारा स्पष्ट करते हैं।

परतः केचिदिच्छन्ति, केचिदिच्छन्ति पूर्वतः।
उभयोः केचिदिच्छन्ति, केचिन्नेच्छन्ति चोभयोः।।१६।।

श्लोकार्थ – बहुल कहने से कोई पर कार्य चाहते हैं, कोई पूर्व कार्य चाहते हैं, कोई पूर्व और पर दोनों कार्य चाहते हैं, कोई दोनों ही कार्य नहीं चाहते।

यथा – पर कार्य – अर्थात् अदद्र्यञ्च् शब्द के पर दकार को मकार तथा उकार आदेश, पर कार्य कहलायेगा। यथा – अदमुयञ्च्।

पूर्व कार्य – अदद्र्यञ्च् शब्द के पूर्व दकार को मकार तथा उकार आदेश, पूर्व कार्य कहलायेगा। यथा – अमुद्र्यञ्च्।

दोनों कार्य – अदद्र्यञ्च् शब्द के दोनों दकार के स्थान पर मकार तथा उकार आदेश, दोनों कार्य कहलायेंगे। यथा – अमुमुयञ्च्।

दोनों कार्य नहीं – कोई भी आदेश नहीं होना ही दोनों कार्य नहीं हुये कहलायेगा। यथा – "अदद्र्यञ्च्" मूल्य शब्द ही रहेगा।

उदञ्च्शब्दस्य तु भेदः। उदङ्। उदञ्चौ। उदञ्चः। उदञ्चम्। उदञ्चौ। शसादौ।

उदञ्च् शब्द में भेद है। घुट् विभक्तियों में पूर्ववत् – **उदङ्, उदञ्चौ, उदञ्चः। हे उदङ्, हे उदञ्चौ, हे उदञ्चः। उदञ्चम्। उदञ्चौ**। इत्यादि प्रयोग सिद्ध होते हैं।

उदङ् – उदञ्च् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "उदञ्च् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "उदञ्च्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "उदञ्ग्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार (जो कि नकार के रूप में है) के स्थान पर अनुस्वार कर, "उदंग्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ङकार आदेश कर, "उदङ्ग्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से गकार का लोप हो कर **"उदङ्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उदीचः – उदञ्च् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "उदञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"उदङ् उदीचिः"** (२६८) सूत्र द्वारा उदञ्च् के स्थान पर उदीचि आदेश कर, अनुबन्ध लोप कर, "उदीच् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"उदीचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उदीचा – उदञ्च् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "उदञ्च् + आ" इस स्थिति में **"उदङ् उदीचिः"** (२६८) सूत्र द्वारा उदञ्च् के स्थान पर उदीचि आदेश कर, अनुबन्ध लोप कर, "उदीच् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"उदीचा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उदग्भ्याम् – उदञ्च् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "उदञ्च् + भ्याम्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "उदञ्ग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार (जो कि नकार के रूप में है) के स्थान पर अनुस्वार कर, "उदंग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ङकार आदेश कर, "उदङ्ग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप हो कर, **"उदग्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उदग्भिः – उदञ्च् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "उदञ्च् + भिस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "उदञ्ग् + भिस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार कर, "उदंग् + भिस्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ङकार आदेश कर, "उदङ्ग् + भिस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "उदग् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"उदग्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उदीचे – उदञ्च् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "उदञ्च् + ए" इस स्थिति में **"उदङ् उदीचिः"** (२६८) सूत्र द्वारा उदञ्च् के स्थान पर उदीचि आदेश कर, अनुबन्ध लोप कर, "उदीच् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"उदीचे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उदक्षु, उदख्सु – उदञ्च् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "उदञ्च् + सु" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "उदञ्ग् + सु" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से नकार (ञकार) के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "उदंग् + सु" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ङकार आदेश कर, "उदङ्ग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "उदङ्क् + सु" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "उदक् + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्यय विकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "उदक् + षु" इस स्थिति में **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र की सहायता से **"उदक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है। अथवा "उदक् + सु" इस स्थिति में **"कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा"** (२५६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर खकार आदेश करने पर **"उदख्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उदञ्च् शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	उदङ्	उदञ्चौ	उदञ्चः
सम्बोधन	हे उदङ्	हे उदञ्चौ	हे उदञ्चः
द्वितीया	उदञ्चम्	उदञ्चौ	उदीचः
तृतीया	उदीचा	उदग्भ्याम्	उदग्भिः
चतुर्थी	उदीचे	उदग्भ्याम्	उदग्भ्यः
पंचमी	उदीचः	उदग्भ्याम्	उदग्भ्यः
षष्ठी	उदीचः	उदीचोः	उदीचाम्
सप्तमी	उदीचि	उदीचोः	उदक्षु

तिर्यञ्च् शब्द में भेद है। घुट् विभक्तियों में पूर्ववत् **तिर्यङ्, तिर्यञ्चौ, तिर्यञ्चः। हे तिर्यङ्, हे तिर्यञ्चौ, हे तिर्यञ्चः। तिर्यञ्चम्, तिर्यञ्चौ**। इत्यादि प्रयोग सिद्ध होते हैं।

तिर्यङ् – तिर्यञ्च् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "तिर्यञ्च् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "तिर्यञ्च्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर,

तिरश्चः – तिर्यञ्च् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "तिर्यञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"तिर्यङ् तिरश्चिः"** (२६६) सूत्र द्वारा तिर्यञ्च् के स्थान पर तिरश्चि आदेश कर, अनुबन्ध लोप कर, "तिरश्च् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"तिरश्चः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तिरश्चा – तिर्यञ्च् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "तिर्यञ्च् + आ" इस स्थिति में **"तिर्यङ् तिरश्चिः"** (२६६) सूत्र द्वारा तिर्यञ्च् के स्थान पर तिरश्चि आदेश कर, अनुबन्ध लोप कर, "तिरश्च् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"तिरश्चा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तिर्यग्भ्याम् – तिर्यञ्च् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "तिर्यञ्च् + भ्याम्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "तिर्यञ्ग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "तिर्यंग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ङकार आदेश कर, "तिर्यङ्ग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "तिर्यग् + भ्याम्" इस स्थिति में **"तिर्यग्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तिर्यग्भिः – तिर्यञ्च् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "तिर्यञ्च् + भिस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "तिर्यञ्ग् + भिस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "तिर्यंग् + भिस्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ङकार आदेश कर, "तिर्यङ्ग् + भिस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "तिर्यग् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"तिर्यग्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तिरश्चे – तिर्यञ्च् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "तिर्यञ्च् + ए" इस स्थिति में **"तिर्यङ् तिरश्चिः"** (२६६) सूत्र द्वारा तिर्यञ्च् के स्थान पर तिरश्चि आदेश कर, अनुबन्ध लोप कर, "तिरश्च् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"तिरश्चे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तिर्यक्षु, तिर्यख्सु – सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "तिर्यञ्च् + सु" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "तिर्यञ्ग् + सु" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से ञकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "तिर्यंग् + सु" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ङकार आदेश कर, "तिर्यङ्ग् + सु" इस स्थिति में **"व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः"** (२६०) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञा कर, **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से ङकार का लोप कर, "तिर्यग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "तिर्यक् + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्यय विकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "तिर्यक् + षु" इस स्थिति में **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र की सहायता से **"तिर्यक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है। अथवा "तिर्यक् + सु" इस स्थिति में **"कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा"** (२५६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर खकार आदेश करने पर **"तिर्यख्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तिर्यञ्च् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	तिर्यङ्	तिर्यञ्चौ	तिर्यञ्चः
सम्बोधन	हे तिर्यङ्	हे तिर्यञ्चौ	हे तिर्यञ्चः
द्वितीया	तिर्यञ्चम्	तिर्यञ्चौ	तिरश्चः
तृतीया	तिरश्चा	तिर्यग्भ्याम्	तिर्यग्भिः
चतुर्थी	तिरश्चे	तिर्यग्भ्याम्	तिर्यग्भ्यः
पंचमी	तिरश्चः	तिर्यग्भ्याम्	तिर्यग्भ्यः
षष्ठी	तिरश्चः	तिरश्चोः	तिरश्चाम्
सप्तमी	तिरश्चि	तिरश्चोः	तिर्यक्षु

।। इस प्रकार चकारान्त शब्दों का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

अब छकारान्त पुल्लिंग शब्द में प्राच्छ् शब्द का विवेचन करते हैं।

प्राच्छौ – प्राच्छ् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राच्छौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राच्छः – प्राच्छ् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "प्राच्छ् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"प्राच्छः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बुद्धि में भी पूर्ववत् **हे प्राट्–ड्, हे प्राच्छौ, हे प्राच्छः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

प्राच्छम् – प्राच्छ् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "प्राच्छ् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राच्छम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राच्छा – प्राच्छ् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "प्राच्छ् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राच्छा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राड्भ्याम् – प्राच्छ् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "प्राच्छ् + भ्याम्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र की प्राप्ति थी, परन्तु **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से छकार के स्थान पर डकार आदेश कर, **"निमित्ताभावे नैमित्तिकस्याप्यभावः"** इस परिभाषा के कारण, चकार का भी अभाव होने पर, **"प्राड्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राड्भिः – प्राच्छ् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "प्राच्छ् + भिस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु, **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से छकार के स्थान पर डकार आदेश कर, **"निमित्ताभावे नैमित्तिकस्याप्यभावः"** इस परिभाषा के कारण, चकार का भी अभाव होने पर, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"प्राड्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राच्छे – प्राच्छ् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "प्राच्छ् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राच्छे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राच्छ् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	प्राट्, प्राड्	प्राच्छौ	प्राच्छः
सम्बोधन	हे प्राट्, प्राड्	हे प्राच्छौ	हे प्राच्छः
द्वितीया	प्राच्छम्	प्राच्छौ	प्राच्छः
तृतीया	प्राच्छा	प्राड्भ्याम्	प्राड्भिः
चतुर्थी	प्राच्छे	प्राड्भ्याम्	प्राड्भ्यः
पंचमी	प्राच्छः	प्राड्भ्याम्	प्राड्भ्यः
षष्ठी	प्राच्छः	प्राच्छोः	प्राच्छाम्
सप्तमी	प्राच्छि	प्राच्छोः	प्राट्सु, प्राट्त्सु

।। इस प्रकार छकारान्त पुल्लिंग शब्द का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

अब जकारान्त पुल्लिंग शब्द में युज् शब्द का विवेचन करते हैं।

युज् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, नु का आगम करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१०५)विधिसूत्रम् – युजेरसमासे नुर्घुटि।।२७१।।

युज्शब्दस्य असमासे नुरागमो भवति घुटि परे।

अर्थ – घुट् विभक्ति परे होने पर युज् शब्द को समास रहित होने पर नु का आगम होता है।

युजिर् धातु से क्विप् प्रत्यय करने पर युज् शब्द बनता है।

घुट् – "पञ्चादौ घुट्" (१५६) सूत्र द्वारा सि, औ, जस्, अम् और औ ये पांच घुट् विभक्तियाँ कहीं गई हैं।

युज् शब्द से असमास कहने से अर्थात् समास रहित युज् शब्द को घुट् विभक्ति के होने पर, नु का आगम होता है। यदि युज् शब्द समास के साथ होगा तो नुम् का आगम नहीं होगा। यथा – अश्वयुज् शब्द समास सहित है। अतः यहाँ नु का आगम नहीं होगा।

युञ्जः – युज् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "युज् + अस्" इस स्थिति में **"युजेरसमासे नुर्घुटि"** (२७१) सूत्र द्वारा नु का आगम कर, "युन्ज् + अस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से नकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "युंज् + अस्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ञकार आदेश कर, "युञ्ज् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"युञ्जः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बुद्धि में भी पूर्ववत् **हे यङ्, हे युञ्जौ, हे युञ्जः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

युञ्जम् – युज् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "युज् + अम्" इस स्थिति में **"युजेरसमासे नुर्घुटि"** (२७१) सूत्र द्वारा नु का आगम कर, "युन्ज् + अम्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से नकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "युंज् + अम्" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर ञकार आदेश कर, "युञ्ज् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"युञ्जम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

नोट – युज् शब्द से द्वितीयादि विभक्तियों के बहुवचन में शस् आदि विभक्तियों के आने पर नु का आगम नहीं होगा। क्योंकि शस् आदि विभक्तियाँ अघुट् हैं।

युजः – युज् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "युज् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"युजः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

युजा – युज् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "युज् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"युजा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

युग्भ्याम् – युज् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "युज् + भ्याम्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से जकार के स्थान पर गकार आदेश हो कर **"युग्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

युक्षु, युख्सु – युज् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "युज् + सु" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से जकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "युग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "युक् + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "युक् + षु" इस स्थिति में **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र की सहायता से **"युक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है। अथवा "युक् + सु" इस स्थिति में **"कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा"** (२५६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर खकार आदेश करने पर **"युख्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

युज् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	युङ्	युञ्जौ	युञ्जः
सम्बोधन	हे युङ्	हे युञ्जौ	हे युञ्जः
द्वितीया	युञ्जम्	युञ्जौ	युजः
तृतीया	युजा	युग्भ्याम्	युग्भिः
चतुर्थी	युजे	युग्भ्याम्	युग्भ्यः
पंचमी	युजः	युग्भ्याम्	युग्भ्यः
षष्ठी	युजः	युजोः	युजाम्
सप्तमी	युजि	युजोः	युक्षु, युख्सु

अश्वयुज् आदिक शब्दों के समासत्व होने से नु का आगम नहीं होगा। शेष प्रक्रिया युज् शब्द की तरह ही रहेगी।

अश्वयुक्–ग् – अश्वयुज् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "अश्वयुज् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "अश्वयुज्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से जकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अश्वयुग्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "अश्वयुक्" इस स्थिति में **"विरामे वा"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार – गकार आदेश होने पर, **"अश्वयुक्–ग्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

अश्वयुग्भ्यः – अश्वयुज् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "अश्वयुज् + भ्यस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से जकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अश्वयुक् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर, **"अश्वयुग्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अश्वयुजः – अश्वयुज् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि्–ङस् विभक्ति के आने पर, "अश्वयुज् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"अश्वयुजः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अश्वयुजोः – अश्वयुज् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "अश्वयुज् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"अश्वयुजोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अश्वयुजाम् – अश्वयुज् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "अश्वयुज्+आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अश्वयुजाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अश्वयुजि – अश्वयुज् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "अश्वयुज् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अश्वयुजि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अश्वयुक्षु, अश्वयुख्सु – अश्वयुज् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "अश्वयुज् + सु" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से जकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "अश्वयुग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "अश्वयुक् + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "अश्वयुक् + षु" इस स्थिति में **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र की सहायता से **"अश्वयुक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है। अथवा "अश्वयुक् + सु" इस स्थिति में **"कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा"** (२५६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर खकार आदेश करने पर **"अश्वयुख्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुमग्–साधुमक् – "साधुमस्ज्" शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "साधुमस्ज् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "साधुमस्ज्" इस स्थिति में **"संयोगादेर्धुटः"** (२७३) सूत्र से साधुमस्ज् के सकार का लोप कर, "साधुमज्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से जकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "साधुमग्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर "साधुमक्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक गकार–ककार आदेश करने पर, **"साधुमग्–क्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

"साधुमस्ज्" शब्द से प्रथमा–द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, सकार के स्थान पर दकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.२०२)विधिसूत्रम् – धुटां तृतीयः।।२७४।।

धुटां तृतीयो भवति घोषवति सामन्ये। इति सस्य तृतीयत्वे प्राप्ते ऌवर्णतवर्गलसा दन्त्या इति न्यायात् सकारस्य दकारः। तवर्गश्चटवर्गयोगे चटवर्गौ इति दकारस्य जकारः। साधुमज्जौ। इत्यादि। देवेज् शब्दस्य तु भेदः। सौ– हशषछान्ते इत्यादिना डत्वम्। देवेट्, देवेड्। देवेजौ। देवेजः। सम्बोधने पि तद्वत्। देवेजम्। देवेजौ। देवेजः। देवेजा। देवेड्भ्याम्। देवेड्भिः।

अर्थ – घोष वर्ण परे होने पर धुट् अक्षरों को तृतीय अक्षर होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"इसुस्दोषां घोषवति रः"** (३४४) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

घोषसञ्ज्ञक वर्ण – ग्, घ्, ङ्। ज्, झ्, ञ्। ड्, ढ्, ण्। द्, ध्, न्। ब्, भ्, म्। य्, र्, ल्, व्। ह् ये घोषसञ्ज्ञक वर्ण कहलाते हैं।

अर्थात् "साधुमस्ज्" शब्द में सकार धुट् वर्ण है, तथा जकार घोष वर्ण है। अतः सकार को तृतीय अक्षर **"ऌवर्णतवर्गलसा दन्त्या"** परिभाषा द्वारा उच्चारण स्थान के कारण दकार आदेश होगा।

अर्थात् ऌवर्ण, तवर्ग, लकार तथा सकार इनका उच्चारण दन्त्य से होता है। अर्थात् दकार और सकार का उच्चारण स्थान एक होने से सकार के स्थान पर दकार आदेश होगा। **"साधुमद्ज्"** यहाँ **"तवर्गश्चटवर्गयोगे चटवर्गौ"** (२६१) सूत्र से दकार के स्थान पर जकार आदेश हो कर **"साधुमज्ज्"** शब्द बनने पर विभक्ति कार्य करना चाहिये।

साधुमज्जे – "साधुमस्ज्" शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से सकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "साधुम द् ज् + ए" इस स्थिति में, दकार का संयोग जकार के साथ होने पर, **"तवर्गश्चटवर्गयोगे चटवर्गौ"** (२६१) सूत्र द्वारा दकार के स्थान पर जकार आदेश कर, "साधुमज्ज् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"साधुमज्जे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुमग्भ्यः – "साधुमस्ज्" शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "साधुमस्ज् + भ्यस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से जकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "साधुमस्ग्+भ्यस्" इस स्थिति में **"संयोगादेर्धुटः"** (२७३) सूत्र से सकार का लोप कर, "साधुमग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"साधुमग्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुमज्जः – "साधुमस्ज्" शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "साधुमस्ज् + अस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से सकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "साधुम द् ज् + अस्" इस स्थिति में, दकार का संयोग जकार के साथ होने पर, **"तवर्गश्चटवर्गयोगे चटवर्गौ"** (२६१) सूत्र द्वारा दकार के स्थान पर जकार आदेश कर, "साधुमज्ज् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"साधुमज्जः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुमज्जोः – "साधुमस्ज्" शब्द से षष्ठी – सप्तमी – विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "साधुमस्ज् + ओस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से सकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "साधुम द् ज् + ओस्" इस स्थिति में, दकार का संयोग जकार के साथ होने पर, **"तवर्गश्चटवर्गयोगे चटवर्गौ"** (२६१) सूत्र द्वारा दकार के स्थान पर जकार आदेश कर, "साधुमज्ज् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"साधुमज्जोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चतुर्थी	साधुमज्जे	साधुमग्भ्याम्	साधुमग्भ्यः
पंचमी	साधुमज्जः	साधुमग्भ्याम्	साधुमग्भ्यः
षष्ठी	साधुमज्जः	साधुमज्जोः	साधुमज्जाम्
सप्तमी	साधुमज्जि	साधुमज्जोः	साधुमक्षु, साधुमख्सु

इसी प्रकार **"साधुतक्ष्"** शब्द के रूप जानना चाहिये।

"साधुतक्ष्" शब्द में (क्–ष्) संयोग के आदि में ककार वर्ण है। अतः **"संयोगादेर्धुटः"** (२७३) सूत्र से विराम और व्यञ्जन के होने पर ककार का लोप होगा तथा **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर डकार आदेश हो कर कार्य होगा।

साधुतड्, साधुतट् – साधुतक्ष् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + स्" इस स्थिति में **"संयोगादेर्धुटः"** (२७३) सूत्र से ककार का लोप कर, "साधुतष् + स्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर, डकार आदेश कर, "साधुतड् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "साधुतड्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर तथा **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक डकार–टकार आदेश करने पर, **"साधुतड्–ट्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

साधुतक्षौ – साधुतक्ष् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"साधुतक्षौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुतक्षः – साधुतक्ष् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"साधुतक्षः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **"हे साधुतड्–ट्", "हे साधुतक्षौ", "हे साधुतक्षः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

साधुतक्षम् – साधुतक्ष् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"साधुतक्षम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुतक्षाम् – साधुतक्ष् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"साधुतक्षाम्** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुतक्षि – साधुतक्ष् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"साधुतक्षि** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुतट्त्सु, साधुतट्सु – साधुतक्ष् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + सु" इस स्थिति में **"संयोगादेर्धुटः"** (२७३) सूत्र से ककार का लोप कर, "साधुतष् + सु" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर, डकार आदेश कर, "साधुतड् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर, "साधुतट् + सु" इस स्थिति में **"टात् सुप्तादिर्वा"** (२७५) सूत्र द्वारा वैकल्पिक तकार का आगम करने पर, **"साधुतट्त्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"साधुतट्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुतक्ष् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	साधुतड्–ट्	साधुतक्षौ	साधुतक्षः
सम्बोधन	हे साधुतड्–ट्	हे साधुतक्षौ	हे साधुतक्षः
द्वितीया	साधुतक्षम्	साधुतक्षौ	साधुतक्षः
तृतीया	साधुतक्षा	साधुतड्भ्याम्	साधुतड्भिः
चतुर्थी	साधुतक्षे	साधुतड्भ्याम्	साधुतड्भ्यः
पंचमी	साधुतक्षः	साधुतड्भ्याम्	साधुतड्भ्यः
षष्ठी	साधुतक्षः	साधुतक्षोः	साधुतक्षाम्
सप्तमी	साधुतक्षि	साधुतक्षोः	साधुतट्त्सु, साधुतट्सु

देवेज् शब्द में भेद है।

देव उपपद यज् धातु से **"स्वपिवचियजादीनां यण्परोक्षाशीःषु"** (६५६) सूत्र से यज् के यकार के स्थान पर इकार आदेश कर, "देव + इज्" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्णे ए"** (२७) सूत्र से सन्धि करने पर "देवेज्" शब्द बनता है। यजादि का **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र में उल्लेख होने से देवेज् के जकार के स्थान पर, डकार आदेश हो कर, कार्य होगा।

देवेड्भ्यः – देवेज् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "देवेज् + भ्यस्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से जकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "देवेड् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"देवेड्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

देवेजः – देवेज् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि्–ङस् विभक्ति के आने पर, "देवेज् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"देवेजः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

देवेजोः – देवेज् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "देवेज् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"देवेजोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

देवेजि – देवेज् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "देवेज् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"देवेजि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर वैकल्पिक तकार का आगम करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(०००)विधिसूत्रम् – टात् सुप्तादिर्वा ।।२७५।।

टकरात्परः सुप् तादिर्वा भवति। तेन देवेट्त्सु, देवेट्सु। एवं सम्राज्–प्रभृतयः। झञटवर्गान्ता अप्रसिद्धाः। तकारान्तः पुल्लिङ्गो मरुत्शब्दः। मरुत्, मरुद्। मरुतौ। मरुतः। सम्बोधने पि। तद्वत्। मरुतम्। मरुतौ। मरुतः। मरुता। धुटां तृतीय इत्यनेन दत्वे मरुद्भ्याम् इत्यादि। उदनुबन्धस्य भवन्त्शब्दस्य तु भेदः। दीर्घमामि सनौ इति वर्तते।

अर्थ – टकार से परे सु के आदि में तकार का आगम विकल्प से होता है।

अर्थात् "देवेट् + सु" इस स्थिति में उपर्युक्त सूत्र द्वारा विकल्प से तकार का आगम होता है। "देवेट् + त् सु" प्रयोग सिद्ध होता है।

झकारान्त, ञकारान्त, टवर्गान्त पुल्लिंग शब्द अप्रसिद्ध हैं।

अब तकारान्त पुल्लिंग शब्द में मरुत् शब्द का विवेचन करते हैं।

मरुत्, मरुद् – मरुत् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "मरुत् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक दकार–तकार आदेश करने पर, **"मरुद्–त्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

मरुतौ – मरुत् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "मरुत् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मरुतौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मरुतः – मरुत् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "मरुत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"मरुतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **"हे मरुत्–मरुद्", "हे मरुतौ", "हे मरुतः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

मरुता – मरुत् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "मरुत् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मरुता"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मरुद्भ्याम् – मरुत् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "मरुत् + भ्याम्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश हो कर, **"मरुद्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मरुद्भिः – मरुत् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "मरुत् + भिस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "मरुद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"मरुद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मरुते – मरुत् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "मरुत् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मरुते"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उत् अनुबन्धक भवन्त् (आप) शब्द में भेद है। भवन्त् शब्द यद्यपि त्यदादि के अन्तर्गत है। परन्तु द्वि शब्द पर्यन्त ही त्यदादि का कार्य होता है।

भवन्त् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर तथा **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का भी लोप हो कर **"भवन्"** इस स्थिति में अग्रिम सूत्र से दीर्घ आदेश होगा।

"दीर्घमामि सनौ" (१७०) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

भवन्त् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, दीर्घ आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.६७)विधिसूत्रम् – अन्त्वसन्तस्य चाधातोस्सौ।।२७६।।

अन्तु अस् इत्येवमन्तस्याधातोरस्य दीर्घो सौ असम्बुद्धौ। लिङ्गान्तनकारस्य इति नकारस्य लोपे प्राप्ते।

अर्थ – सम्बुद्धि रहित सि परे होने पर, अन्तु और अस् के धातु भिन्न अकार के स्थान पर दीर्घ आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"दीर्घमामि सनौ"** (१७०) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

"भवन्" यहाँ उपर्यक्त सूत्र से दीर्घ हो कर, "भवान्" प्रयोग बनता है।

"भवन्त्" शब्द में सि और तकार का लोप होने के बाद **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार के लोप की प्राप्ति का अग्रिम सूत्र से निषेध करते हैं।

(२.२००)विधिसूत्रम् – नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ।।२७७।।

नकारसंयोगान्तौ लुप्तावप्यलुप्तवद्भवतः। पूर्वविधौ दीर्घादिके कर्त्तव्ये। नकारग्रहणं राजन्शब्दार्थम्। भवान्। भवन्तौ। भवन्तः।

अर्थ – नकार और संयोगान्त के लुप्त होने पर वे अलुप्तवत् होते हैं, अलुप्तवत् होने से दीर्घादि पूर्वविधि करना चाहिये।

नकार के लोप होने पर, "राजभ्याम्", "राजभिः", "राजसु" आदि में दीर्घ आदि नहीं होगा। संयोगान्त के लोप होने पर विद्वान् आदि में दीर्घ हो जायेगा। सुकन्भ्याम् में भी संयोग का लोप हुआ है। अतः नकार को वर्गान्त नहीं हुआ।

उकार होने से वन्त् का अभाव भी हो जायेगा। क्योंकि सन्निपातलक्षण की विधि का अनिमित्त होने से वह उसका विघातक होता है। क्योंकि कहा भी है– **"जो जिसके आश्रित उत्पन्न होता है वह उसी के साथ नष्ट हो जाता है।"** "भवन्त्" शब्द में व के पूर्व उकार होने से वन्त् का अभाव होने पर "भ उ + स्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से सन्धि कर, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश कर, **"हे भोः"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"हे भवन्"** प्रयोग बनता है।

हे भोः, हे भवन् – भवन्त् शब्द से सम्बुद्धि के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + स्" इस स्थिति में **"भवतो वादेरुत्वं सम्बुद्धौ"** (२७८) सूत्र द्वारा वकार के पूर्व उकार का आगम कर, **"यो यमाश्रित्य समुत्पन्नः स तं प्रति सन्निपातः"** इस परिभाषा के कारण "भवन्त्" शब्द में व के पूर्व उकार होने से वन्त् का अभाव होने पर, "भ उ + स्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से सन्धि कर, "भो + स्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्जनीय आदेश कर, **"हे भोः"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "भवन्त्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का भी लोप कर, "भवन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का भी लोप प्राप्त होने पर **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर, **"हे भवन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन और बहुवचन में पूर्ववत् **"हे भवन्तौ", "हे भवन्तः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

भवन्तम् – भवन्त् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"भवन्तम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवतः – भवन्त् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "भवत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"भवतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवता – भवन्त् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + आ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "भवत् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"भवता"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवताम् – भवन्त् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + आम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "भवत् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"भवताम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवति – भवन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + इ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "भवत् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"भवतिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवत्सु – भवन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + सु" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप करने पर, **"भवत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवन्त् शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	भवान्	भवन्तौ	भवन्तः
सम्बोधन	हे भोः, भवन्	हे भवन्तौ	हे भवन्तः
द्वितीया	भवन्तम्	भवन्तौ	भवतः
तृतीया	भवता	भवद्भ्याम्	भवद्भिः
चतुर्थी	भवते	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः
पंचमी	भवतः	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः
षष्ठी	भवतः	भवतोः	भवताम्
सप्तमी	भवति	भवतोः	भवत्सु

इसी प्रकार भगवन्त् और अघवन्त् शब्दों के रूप जानना चाहिये। सम्बुद्धि में विकल्प से रहित गोमन्त्, धनवन्त्, यावन्त्, तावन्त्, एतावन्त्, इयन्त्, कियन्त्, आदि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

शंका – ये शब्द किस प्रकार सिद्ध होते हैं ?

समाधान – भग–ज्ञान, भग जिसका है, वह भगवान् हैं। अर्थात् उत्कृष्ट ज्ञान से युक्त भगवान् कहलाते हैं।

अन्त्य स्वरादि के लोप के लिये डकार का कथन किया है। यद्, तद् और एतद् शब्दों के अद् का लोप होने पर, य् + आवन्त्, त् + आवन्त्, एत् + आवन्त् यहाँ **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से यावन्त्, तावन्त् और एतावन्त् शब्द बनते हैं। "यावन्त्" आदि शब्द बनने पर, **"कृत्तद्धितसमासाश्च"** (४२३) सूत्र से लिंग संज्ञा होती है। प्रथमा विभक्ति के एकवचन में परिमाण अर्थ में **"यावान्, तावान्, एतावान्"** प्रथमान्त प्रयोग सिद्ध होते हैं।

यावान् – यत् शब्द से परिमाण अर्थ में **"यत्तदेतेभ्यो डावन्तुः"** (२७६) सूत्र से डावन्तु प्रत्यय कर, **"डानुबन्धे न्त्यस्वरादेर्लोपः"** (२८०) सूत्र से यद् के अद् का लोप कर, य् + आवन्त् = "यावन्त्" शब्द बनने पर, **"कृत्तद्धितसमासाश्च"** (४२३) सूत्र से यावन्त् शब्द की लिंगसञ्ज्ञा हो जायेगी। यावन्त् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "यावन्त् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "यावन्त्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का लोप कर, "यावन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का भी लोप प्राप्त होने पर, **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर, **"अन्त्वसन्तस्य चाधातोस्सौ"** (२७६) सूत्र से दीर्घ आदेश हो कर, **"यावान्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यावन्तौ – यावन्त् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "यावन्त् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"यावन्तौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यावन्तः – यावन्त् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "यावन्त् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"यावन्तः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे यावन् – यावन्त् शब्द से सम्बुद्धि के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "यावन्त् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "यावन्त्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का भी लोप कर, "यावन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का भी लोप प्राप्त होने पर **"नसंयोगान्ताव–लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर, **"हे यावन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन और बहुवचन में पूर्ववत् **"हे यावन्तौ", "हे यावन्तः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

यावतः – यावन्त् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "यावन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "यावत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"यावतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यावतोः – यावन्त् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "यावन्त् + ओस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "यावत् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"यावतोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यावताम् – यावन्त् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "यावन्त् + आम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "यावत् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"यावताम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यावति – यावन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "यावन्त् + इ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "यावत् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"यावतिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यावत्सु – यावन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "यावन्त् + सु" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप करने पर, **"यावत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यावन्त् शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	यावान्	यावन्तौ	यावन्तः
सम्बोधन	हे यावन्	हे यावन्तौ	हे यावन्तः
द्वितीया	यावन्तम्	यावन्तौ	यावतः
तृतीया	यावता	यावद्भ्याम्	यावद्भिः
चतुर्थी	यावते	यावद्भ्याम्	यावद्भ्यः
पंचमी	यावतः	यावद्भ्याम्	यावद्भ्यः
षष्ठी	यावतः	यावतोः	यावताम्
सप्तमी	यावति	यावतोः	यावत्सु

डियन्तु में डकार और उकार का अनुबन्ध लोप हो जाता है। डियन्तु में से इयन्त् शेष रहता है। इदम् के अम् का **"डानुबन्धे न्त्यस्वरादेर्लोपः"** (२८०) सूत्र से लोप हो कर "इद् + इयन्त्" इस स्थिति में **"एकदेशविकृतमनन्यवत्"** इस परिभाषा की सहायता से **"तत्रेदमिः"** (५२१) सूत्र से इदम् के स्थान पर इ आदेश होने पर "इ + इयन्त्" इस स्थिति में **"इवर्णावर्णयोर्लोपः स्वरे प्रत्यये ये च"** (४७६) सूत्र से इदम् के इकार का भी लोप हो कर "इयन्त्" शेष रहता है। "इयन्त्" शब्द बनने पर, **"कृत्तद्धितसमासाश्च"** (४२३) सूत्र से लिंग संज्ञा होती है। इयन्त् शब्द से सि आदि विभक्तियाँ आने पर पूर्ववत् **"इयान्, इयन्तौ, इयन्तः"** इत्यादि पूर्ववत् प्रयोग सिद्ध होते हैं।

इयान् – इदम् शब्द से परिमाण अर्थ में **"इदमो डियन्तुः"** (२८१) सूत्र से डियन्तु प्रत्यय कर, **"डानुबन्धे न्त्यस्वरादेर्लोपः"** (२८०) सूत्र से इदम् के अम् का लोप कर, "इद् + इयन्त्" इस स्थिति में **"एकदेशविकृतमनन्यवत्"** इस परिभाषा की सहायता से **"तत्रेदमिः"** (५२१) सूत्र से इदम् के स्थान पर इ आदेश कर, "इ + इयन्त्" इस स्थिति में **"इवर्णावर्णयोर्लोपः स्वरे प्रत्यये ये च"** (४७६) सूत्र से इदम् के इकार का लोप कर, "इयन्त्" शब्द बनने पर, **"कृत्तद्धितसमासाश्च"** (४२३) सूत्र से "इयन्त्" शब्द की लिंगसञ्ज्ञा कर, प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "इयन्त् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "इयन्त्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का भी लोप कर, "इयन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का भी लोप प्राप्त होने पर, **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर, **"अन्त्वसन्तस्य चाधातोस्सौ"** (२७६) सूत्र से दीर्घ आदेश हो कर **"इयान्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इयन्तौ – इयन्त् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "इयन्त् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"इयन्तौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इयन्तः – इयन्त् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "इयन्त् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"इयन्तः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे इयन् – इयन्त् शब्द से सम्बुद्धि के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "इयन्त् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "इयन्त्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का भी लोप कर, "इयन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का भी लोप प्राप्त होने पर **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर, **"हे इयन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इयतः – इयन्त् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "इयन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "इयत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"इयतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इयतोः – इयन्त् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "इयन्त् + ओस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "इयत् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"इयतोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इयताम् – इयन्त् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "इयन्त् + आम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "इयत् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"इयताम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इयति – इयन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "इयन्त् + इ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "इयत् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"इयतिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इयत्सु – इयन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "इयन्त् + सु" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप करने पर, **"इयत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इयन्त् शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	इयान्	इयन्तौ	इयन्तः
सम्बोधन	हे इयन्	हे इयन्तौ	हे इयन्तः
द्वितीया	इयन्तम्	इयन्तौ	इयतः
तृतीया	इयता	इयद्भ्याम्	इयद्भिः
चतुर्थी	इयते	इयद्भ्याम्	इयद्भ्यः
पंचमी	इयतः	इयद्भ्याम्	इयद्भ्यः
षष्ठी	इयतः	इयतोः	इयताम्
सप्तमी	इयति	इयतोः	इयत्सु

हे कियन् – कियन्त् शब्द से सम्बुद्धि के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "कियन्त् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "कियन्त्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का लोप कर, "कियन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर **"नसंयोगान्ता–वलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर, **"हे कियन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन और बहुवचन में पूर्ववत् **"हे कियन्तौ", "हे कियन्तः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

कियन्तम् – कियन्त् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "कियन्त् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"कियन्तम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कियतः – कियन्त् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "कियन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "कियत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"कियतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कियता – कियन्त् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "कियन्त् + आ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "कियत् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"कियता"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कियद्भ्याम् – कियन्त् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "कियन्त् + भ्याम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप कर, "कियत् + भ्याम्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश करने पर **"कियद्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कियद्भिः – कियन्त् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "कियन्त् + भिस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप कर, "कियत् + भिस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "कियद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"कियद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कियत्सु – कियन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "कियन्त् + सु" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप करने पर, **"कियत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कियन्त् शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	कियान्	कियन्तौ	कियन्तः
सम्बोधन	हे कियन्	हे कियन्तौ	हे कियन्तः
द्वितीया	कियन्तम्	कियन्तौ	कियतः
तृतीया	कियता	कियद्भ्याम्	कियद्भिः
चतुर्थी	कियते	कियद्भ्याम्	कियद्भ्यः
पंचमी	कियतः	कियद्भ्याम्	कियद्भ्यः
षष्ठी	कियतः	कियतोः	कियताम्
सप्तमी	कियति	कियतोः	कियत्सु

नोट – उपर्युक्त भाव पूर्व में प्रकट कर आये हैं। सूत्र की टीका में होने से पुनः कह दिया है।

अब भगवन्त् (भगवान्) शब्द के प्रयोग सिद्ध करते हैं।

भगवान् – भगवन्त् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "भगवन्त् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "भगवन्त्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का लोप कर, "भगवन्" इस स्थिति में **"अन्त्वसन्तस्य चाधातोस्सौ"** (२७६) सूत्र से दीर्घ कर, "भगवान्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर, **"भगवान्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

नोट – भगवन्त् शब्द में तकार का संयोग था। **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का लोप हुआ है। अतः **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र द्वारा तकार दृष्टिगोचर हो रहा है। अतः नकार का लोप नहीं हुआ है।

भगवन्तौ – भगवन्त् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "भगवन्त् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"भगवन्तौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन में पूर्ववत् **हे भगवन्तौ,** बहुवचन में **हे भगवन्तः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

भगवन्तम् – भगवन्त् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "भगवन्त् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"भगवन्तम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भगवतः – भगवन्त् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "भगवन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "भगवत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"भगवतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भगवता – भगवन्त् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "भगवन्त् + आ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "भगवत् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"भगवता"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भगवद्भ्याम् – भगवन्त् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "भगवन्त् + भ्याम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप कर, "भगवत् + भ्याम्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश करने पर **"भगवद्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भगवद्भिः – भगवन्त् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "भगवन्त् + भिस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप कर, "भगवत् + भिस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "भगवद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"भगवद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भगवते – भगवन्त् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "भगवन्त् + ए" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "भगवत् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"भगवते"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भगवद्भ्यः – भगवन्त् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "भगवन्त् + भ्यस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप कर, "भगवत् + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "भगवद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"भगवद्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसी प्रकार अघवन्त् शब्द के रूप जानना चाहिये।

शन्तृङन्त और क्विबन्त प्रत्यय होने से धातु अपने धातुत्व का त्याग नहीं करती है। अर्थात् जिन धातुओं से शन्तृङ् और क्विप् प्रत्यय होते हैं वे धातुऐं अपने स्वभाव को नहीं छोड़ती हैं।

भू धातु से शन्तृङ् प्रत्यय होने पर "भवन्त्" (होता हुआ) शब्द बनता है। **"अन्त्वसन्तस्य चाधातोस्सौ"** (२७६) सूत्र में अधातु को दीर्घ होता है। परन्तु भवन्त् शब्द में धातुत्व होने से दीर्घ नहीं होगा। प्रथमा विभक्ति के एकवचन में **"भवन्"** प्रयोग बनेगा। शेष रूप पूर्व भवन्त् वत् जानना चाहिये।

भवन् – भवन्त् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "भवन्त्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का भी लोप कर, "भवन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का भी लोप प्राप्त होने पर **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर हो कर **"भवन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवन्तौ – भवन्त् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"भवन्तौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवन्तः – भवन्त् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"भवन्तः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे भोः, हे भवन् – भवन्त् शब्द से सम्बुद्धि के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + स्" इस स्थिति में **"भवतो वादेरुत्वं सम्बुद्धौ"** (२७८) सूत्र द्वारा वकार के पूर्व उकार का आगम कर, **"यो यमाश्रित्य समुत्पन्नः स तं प्रति सन्निपातः"** इस परिभाषा के कारण "भवन्त्" शब्द में व के पूर्व उकार होने से वन्त् का अभाव होने पर, "भ उ + स्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से सन्धि कर, "भो + स्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्जनीय आदेश हो कर, **"हे भोः"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "भवन्त्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का भी लोप कर, "भवन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर, **"हे भवन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवद्भ्यः – भवन्त् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + भ्यस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप कर, "भवत् + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "भवद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"भवद्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवतः – भवन्त् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "भवत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"भवतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवतोः – भवन्त् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + ओस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "भवत् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"भवतोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवताम् – भवन्त् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + आम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "भवत् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"भवताम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवति – भवन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + इ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "भवत् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"भवतिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

भवत्सु – भवन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "भवन्त् + सु" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप करने पर, **"भवत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अब ददन्त् शब्द के प्रयोग सिद्ध करते हैं। ददन्त् शब्द में भेद है। **"युजेरसमासे नुर्घुटि"** (२७१) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

ददन्त् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, **"ददन्त्"** शब्द के नकार का लोप करने के लिए अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१०६)विधिसूत्रम् – अभ्यस्तादन्तिरनकारः।।२८४।।

अभ्यस्तात्परो न्तिरनकारो भवति घुटि परे। ददत्, ददद्। ददतौ। ददतः। इत्यादि। एवं दधन्त्–जक्षन्त्–जाग्रन्त्–प्रभृतयः। महन्तशब्दस्य तु भेदः। दीर्घमामि सनौ, घुटि चासम्बुद्धौ इति वर्तते।

अर्थ – घुट् परे होने पर अभ्यस्त सञ्ज्ञक से परे अन्त्, नकार से रहित होता है।

अर्थात् घुट् परे होने पर अभ्यस्त सञ्ज्ञक से परे अन्त् के नकार का लोप हो जाता है।

ददन्त् शब्द के नकार का लोप हो कर ददत् शेष रहता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"युजेरसमासे नुर्घुटि"** (२७१) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

भावार्थ – ददन्त् शब्द जुहोत्यादिगणी दा धातु से बनता है। जुहोत्यादिगण में धातु को द्वित्व हो कर **"पूर्वो भ्यासः"** (७१५) सूत्र से पूर्व दकार की अभ्यास सञ्ज्ञा होती है और **"द्वयमभ्यस्तम्"** (७१७) सूत्र से पर (द्वितीय) दकार की अभ्यस्तसञ्ज्ञा होती है। अतः **"ददन्त्"** शब्द में पर दकार अभ्यस्तसञ्ज्ञक होने से उपर्युक्त सूत्र से ददन्त् के स्थान पर ददत् आदेश होता है।

ददत्, ददद् – ददन्त् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + स्" इस स्थिति में **"द्वयमभ्यस्तम्"** (७१७) सूत्र से पर (द्वितीय) दकार की अभ्यस्त सञ्ज्ञा कर, **"अभ्यस्तादन्तिरनकारः"** (२८४) सूत्र से ददन्त् के नकार का लोप कर, "ददत् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "ददत्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक दकार – तकार आदेश करने पर **"ददत्, ददद्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

ददद्भ्याम् – ददन्त् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + भ्याम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से ददन्त् के नकार का लोप कर, "ददत् + भ्याम्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश करने पर **"ददद्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ददद्भिः – ददन्त् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + भिस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से ददन्त् के नकार का लोप कर, "ददत् + भिस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "ददद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"ददद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ददते – ददन्त् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + ए" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से ददन्त् के नकार का लोप कर, "ददत् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"ददते"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ददद्भ्यः – ददन्त् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + भ्यस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से ददन्त् के नकार का लोप कर, "ददत् + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "ददद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"ददद्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ददतः – भवन्त् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से ददन्त् के नकार का लोप कर, "ददत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"ददतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ददतोः – ददन्त् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + ओस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से ददन्त् के नकार का लोप कर, "ददत् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"ददतोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

जक्षन्त् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	जक्षत्, जक्षद्	जक्षतौ	जक्षतः
सम्बोधन	हे जक्षत्	हे जक्षतौ	हे जक्षतः
द्वितीया	जक्षतम्	जक्षतौ	जक्षतः
तृतीया	जक्षता	जक्षद्भ्याम्	जक्षद्भिः
चतुर्थी	जक्षते	जक्षद्भ्याम्	जक्षद्भ्यः
पंचमी	जक्षतः	जक्षद्भ्याम्	जक्षद्भ्यः
षष्ठी	जक्षतः	जक्षतोः	जक्षताम्
सप्तमी	जक्षति	जक्षतोः	जक्षत्सु

जाग्रन्त् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	जाग्रत्, जाग्रद्	जाग्रतौ	जाग्रतः
सम्बोधन	हे जाग्रत्, जाग्रद्	हे जाग्रतौ	हे जाग्रतः
द्वितीया	जाग्रतम्	जाग्रतौ	जाग्रतः
तृतीया	जाग्रता	जाग्रद्भ्याम्	जाग्रद्भिः
चतुर्थी	जाग्रते	जाग्रद्भ्याम्	जाग्रद्भ्यः
पंचमी	जाग्रतः	जाग्रद्भ्याम्	जाग्रद्भ्यः
षष्ठी	जाग्रतः	जाग्रतोः	जाग्रताम्
सप्तमी	जाग्रति	जाग्रतोः	जाग्रत्सु

महन्त् शब्द में भेद है। **"दीर्घमामि सनौ"** (१७०) तथा "**घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

महान्तौ – महन्त् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "महन्त् + औ" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ कर, "महान्त् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"महान्तौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

महान्तः – महन्त् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "महन्त् + अस्" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ कर, "महान्त् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"महान्तः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे महन् – महन्त् शब्द से सम्बुद्धि के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "महन्त् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "महन्त्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का लोप कर, "महन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का भी लोप प्राप्त होने पर **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर, **"हे महन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन में पूर्ववत् **हे महान्तौ,** बहुवचन में **हे महान्तः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

महान्तम् – महन्त् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "महन्त् + अम्" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ कर, "महान्त् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"महान्तम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

महतः – महन्त् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "महन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "महत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"महतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

महता – महन्त् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "महन्त् + आ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "महत् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"महता"** प्रयोग सिद्ध होता है।

महताम् – महन्त् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "महन्त् + आम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "महत् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"महताम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

महति – महन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "महन्त् + इ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "महत् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"महति"** प्रयोग सिद्ध होता है।

महत्सु – महन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "महन्त् + सु" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से नकार का लोप करने पर, **"महत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शंका– सम्बुद्धि रहित हो ऐसा क्यों कहा ?

समाधान– अगर सम्बुधि रहित नहीं कहते तो सम्बुधि में भी दीर्घ हो कर "**हे महान्"** रूप सिद्ध हो जाता।

महन्त् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	महान्	महान्तौ	महान्तः
सम्बोधन	हे महन्	हे महान्तौ	हे महान्तः
द्वितीया	महान्तम्	महान्तौ	महतः
तृतीया	महता	महद्भ्याम्	महद्भिः
चतुर्थी	महते	महद्भ्याम्	महद्भ्यः
पंचमी	महतः	महद्भ्याम्	महद्भ्यः
षष्ठी	महतः	महतोः	महताम्
सप्तमी	महति	महतोः	महत्सु

।। इस प्रकार तकारान्त शब्दों का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

अब थकारान्त पुल्लिंग शब्द में अग्निमथ् शब्द का विवेचन करते हैं।

अग्निमथे – अग्निमथ् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "अग्निमथ् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अग्निमथे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अग्निमद्भ्यः – अग्निमथ् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "अग्निमथ् + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से थकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "अग्निमद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"अग्निमद्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अग्निमथः – अग्निमथ् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "अग्निमथ् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"अग्निमथः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अग्निमथोः – अग्निमथ् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "अग्निमथ् + ओस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६०) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "अग्निमथ् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"अग्निमथोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अग्निमथाम् – अग्निमथ् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "अग्निमथ् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अग्निमथाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अग्निमथि – अग्निमथ् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "अग्निमथ् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अग्निमथि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अग्निमत्सु – अग्निमथ् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "अग्निमथ् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से थकार के स्थान पर तकार आदेश करने पर, **"अग्निमत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वविदम् – तत्त्वविद् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "तत्त्वविद् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"तत्त्वविदम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वविदा – तत्त्वविद् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "तत्त्वविद + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"तत्त्वविदा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वविद्भ्याम् – तत्त्वविद् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "तत्त्वविद् + भ्याम्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से थकार के स्थान पर दकार आदेश करने पर **"तत्त्वविद्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वविद्भिः – तत्त्वविद् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "तत्त्वविद् + भिस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से थकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "तत्त्वविद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"तत्त्वविद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वविदे – तत्त्वविद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "तत्त्वविद् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"तत्त्वविदे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वविद्भ्यः – तत्त्वविद् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "तत्त्वविद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से थकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "तत्त्वविद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"तत्त्वविद्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वविदः – तत्त्वविद् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "तत्त्वविद् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"तत्त्वविदः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वविदोः – तत्त्वविद् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "तत्त्वविद् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"तत्त्वविदोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विपादः – द्विपाद् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "द्विपाद् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"द्विपादः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **हे द्विपाद्–द्विपात्, हे द्विपादौ, हे द्विपादः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

द्विपादम् – द्विपाद् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "द्विपाद् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"द्विपादम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विपाद् शब्द से बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर समासान्त पाद् शब्द को पद् आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१२६)विधिसूत्रम् – पात्पदं समासान्तः।।२८६।।

समासस्यान्तः पाच्छब्दः पदमापद्यते अघुटस्वरे परे। द्विपदः। द्विपदा। द्विपाद्–भ्यामित्यादि। चतुष्पाद्–व्याघ्रपाद्–प्रभृतयः। त्यद्शब्दस्य तु भेदः। सौ–

अर्थ – अघुट् स्वर वाली विभक्तियाँ परे होने पर समासान्त पाद् शब्द के स्थान पर पद् आदेश होता है।

अघुट्स्वर वाली विभक्तियाँ – शस्, टा, ङे, ङसि, ङस्, ओस्, आम्, ङि विभक्तियाँ अघुट्स्वर वाली विभक्तियाँ कहलाती हैं।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"अघुट्स्वरादौ सेट्कस्यापि वन्सेर्वशब्दस्योत्वम्"** (३१८) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

द्विपदः – द्विपाद् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "द्विपाद् + अस्" इस स्थिति में **"पात्पदं समासान्तः"** (२८६) सूत्र से पाद् के स्थान पर पद् आदेश कर, "द्विपद् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"द्विपदः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विपदा – द्विपाद् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "द्विपाद् + आ" इस स्थिति में **"पात्पदं समासान्तः"** (२८६) सूत्र से पाद् के स्थान पर पद् आदेश कर, "द्विपद् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"द्विपदा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विपात्सु – द्विपाद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "द्विपाद् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से दकार के स्थान पर तकार आदेश करने पर, **"द्विपात्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विपाद् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	द्विपात्–द्	द्विपादौ	द्विपादः
सम्बोधन	हे द्विपात्	हे द्विपादौ	हे द्विपादः
द्वितीया	द्विपादम्	द्विपादौ	द्विपदः
तृतीया	द्विपदा	द्विपाद्भ्याम्	द्विपाद्भिः
चतुर्थी	द्विपदे	द्विपाद्भ्याम्	द्विपाद्भ्यः
पंचमी	द्विपदः	द्विपाद्भ्याम्	द्विपाद्भ्यः
षष्ठी	द्विपदः	द्विपदोः	द्विपदाम्
सप्तमी	द्विपदि	द्विपदोः	द्विपात्सु

इसी प्रकार चतुष्पाद्, व्याघ्रपाद् इत्यादि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

त्यद् शब्द में भेद है।

त्यद् शब्द सर्वनाम संज्ञक शब्द है। अतः जस्, ङे, ङसि, आम् और ङि विभक्तियों में विशेष कार्य होता है।

त्यद् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, तकार के स्थान पर सकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१७५)विधिसूत्रम् – तस्य च।।२८७।।

त्यदादीनां तकारस्य सकारो भवति सौ विभक्तौ। स्यः। त्यौ। त्ये। अन्यत्र सर्वशब्दवत्। एवं एतत्–तद्–शब्दौ। एषः। एतौ। एते। इत्यादि। एवं तत् शब्दः। सः। तौ। ते। इत्यादि।

अर्थ – सि विभक्ति परे होने पर त्यद् आदि शब्दों के तकार के स्थान पर सकार आदेश होता है।

त्यद्, तद्, और एतद् शब्दों के आदि तकार को सकार आदेश हो कर स्यद्, सद्, एषद् (**"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर एषद् शब्द बना है।) इत्यादि आदेश होते हैं।

तौ – तद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "तद् + औ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + औ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + औ" इस स्थिति में **"ओकारे औ औकारे च"** (४०) सूत्र से सन्धि हो कर **"तौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ते – तद् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "त + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + जस्" इस स्थिति में **"जस् सर्व इः"** (१५२) सूत्र से जस् के स्थान पर "इ" आदेश कर, "त + इ" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्णे ए"** (२७) सूत्र से सन्धि करने पर, **"ते"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे स – तद् शब्द से आमन्त्रण की विवक्षा में सि विभक्ति के आने पर, "तद् + स्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + स्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर "त + स्" इस स्थिति में **"तस्य च"** (२८७) सूत्र से तकार के स्थान पर सकार आदेश कर, "स + स्" इस स्थिति में **"हस्वनदीश्रद्धाभ्यः सिर्लोपम्"** (१३४) सूत्र से सम्बुद्धिसञ्ज्ञक सि का लोप हो कर **"हे स"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन तथा बहुवचन में पूर्ववत् **"हे तौ"** तथा **"हे ते"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

तम् – तद् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "तद् + अम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + अम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + अम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति होने पर, **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से लिंगान्त अकार का लोप कर, "त् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"तम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तान् – तद् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में "शस्" विभक्ति के आने पर, "तद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + अस्" इस स्थिति में **"शसि सस्य च नः"** (१३७) सूत्र से त के अकार को दीर्घ तथा सकार के स्थान पर नकार आदेश कर, "ता + अन्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से पुनः दीर्घ तथा पर का लोप करने पर, **"तान्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तस्मात् – तद् शब्द से पञ्चमी विभक्ति के एकवचन में "ङसि" विभक्ति के आने पर, "तद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + अस" इस स्थिति में **"ङसिरात्"** (१४४) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"ङसिः स्मात्"** (१५४) सूत्र से ङसि के स्थान पर "स्मात्" आदेश कर, "तस्मात्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार अथवा तकार आदेश हो कर **"तस्माद्–तस्मात्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

तस्य – तद् शब्द से षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङस् विभक्ति के आने पर, "तद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + अस्" इस स्थिति में **"ङस् स्यः"** (१४५) सूत्र से ङस् के स्थान पर "स्य" आदेश हो कर **"तस्य"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तयोः – तद् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "तद् + ओस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + ओस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + ओस्" इस स्थिति में **"ओसि च"** (१४६) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "ते + ओस्" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से "एकार" के स्थान पर अय् आदेश कर, "तय् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "तयोस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"तयोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तेषाम् – तद् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "तद् + आम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + आम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + आम्" इस स्थिति में **"सुरामि सर्वतः"** (१५५) सूत्र से सु का आगम कर, उकार का अनुबन्धलोप कर, "त + साम्" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर "ते + साम्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"तेषाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतौ – एतद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "एतद् + औ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + औ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + औ" इस स्थिति में **"ओकारे औ औकारे च"** (४०) सूत्र से सन्धि हो कर **"एतौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एते – एतद् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "एतद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + अस्" इस स्थिति में **"जस् सर्व इः"** (१५२) सूत्र से जस् के स्थान पर "इ" आदेश कर, "एत + इ" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्णे ए"** (२७) सूत्र से सन्धि करने पर, **"एते"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे एष – एतद् शब्द से आमन्त्रण की विवक्षा में सि विभक्ति के आने पर, "एतद् + स्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + स्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + स्" इस स्थिति में **"तस्य च"** (२८७) सूत्र से तकार के स्थान पर सकार आदेश कर, "एस + स्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "एष + स्" इस स्थिति में **"ह्रस्वनदी–श्रद्धाभ्यः सिर्लोपम्"** (१३४) सूत्र से सम्बुद्धिसञ्ज्ञक सि का लोप हो कर **"हे एष"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन तथा बहुवचन में पूर्ववत् **"हे एतौ"** तथा **"हे एते"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

एतम् – एतद् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "एतद् + अम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + अम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + अम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र की प्राप्ति होने पर, **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से लिंगान्त अकार का लोप कर, "एत् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"एतम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतस्मै – एतद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "एतद् + ए" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + ए" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + ए" इस स्थिति में **"ङेर्यः"** (१४२) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"स्मै सर्वनाम्नः"** (१५३) सूत्र से ङे के स्थान पर "स्मै" आदेश हो कर **"एतस्मै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतेभ्यः – एतद् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "एतद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र की प्राप्ति होने पर **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "एते + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"एतेभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतस्मात् – एतद् शब्द से पञ्चमी विभक्ति के एकवचन में "ङसि" विभक्ति के आने पर, "एतद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + अस" इस स्थिति में **"ङसिरात्"** (१४४) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"ङसिः स्मात्"** (१५४) सूत्र से ङसि के स्थान पर "स्मात्" आदेश कर, "एतस्मात्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार अथवा तकार आदेश हो कर **"एतस्माद्–एतस्मात्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

एतस्य – एतद् शब्द से षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङस् विभक्ति के आने पर, "एतद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (२८७) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + अस्" इस स्थिति में **"ङस् स्यः"** (१४५) सूत्र से ङस् के स्थान पर "स्य" आदेश हो कर **"एतस्य"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतयोः – एतद् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "एतद् + ओस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (२८७) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + ओस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + ओस्" इस स्थिति में **"ओसि च"** (१४६) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "एते + ओस्" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से "एकार" के स्थान पर अय् आदेश कर, "एतय् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "एतयोस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"एतयोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अब एतद् और इदम् शब्द को द्वितीयादि विभक्तियों के होने पर, अन्वादेश के विषय में एन आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१७६)विधिसूत्रम् – एतस्य चान्वादेशे द्वितीयायां चैनः।।२८८।।

एतस्य इदमश्च टौसोर्द्वितीयायां च एनादेशो भवति कथितस्यानुकथनविषये। एनम्। एनौ। एनान्। एनेन। एनयोः। इति दकारान्ताः। धकारान्तः पुल्लिङ्गस्तत्त्व–बुध्शब्दः। विरामव्यञ्जनादिष्विति वर्त्तते।

अर्थ – टा, ओस् और द्वितीया विभक्ति परे होने पर, एतद् और इदम् शब्द के स्थान पर एन आदेश होता है, कहे गये विषय को पुनः कहना हो तो।

किसी कार्य का बोधन कराने के लिये ग्रहण किये हुए का पुनः दूसरे कार्य का बोधन कराने के लिये ग्रहण करना "अन्वादेश" कहलाता है। अथवा– किसी अज्ञात कार्य को जनाने या विधान करने के लिये जिस का प्रथम एक बार ग्रहण हो चुका हो, यदि पुनः दूसरे अज्ञात कार्य को जनाने या विधान करने के लिये उस का ग्रहण किया जावे तो वह पुनर्ग्रहण "अन्वादेश" कहलाता है।

यथा – **"अनेन व्याकरणम् अधीतम् एनं छन्दो ध्यापय"** (इस ने व्याकरण पढ़ लिया है। अब इसे छन्द शास्त्र पढ़ाओ)। यहाँ **"व्याकरण"** पढ़ लिया है, इस कार्य के लिये **"अनेन"** का ग्रहण किया गया है। पुनः छन्दो ध्ययन के लिये भी उसका ग्रहण किया गया है। अतः दूसरी बार उस का ग्रहण **"अन्वादेश"** हुआ।

इसी प्रकार **"अनयोः पवित्रं कुलम्, एनयोः प्रभूतं स्वम् "** (इन दोनों का कुल पवित्र है तथा इनका धन भी बहुत है।) **"अनेन छात्रेण रात्रिरधीता अथो एनेनाहरप्यधीतम्"** (इस छात्र ने रात भर पढ़ा और इसने दिन भर भी पढ़ा।) **अनयोः छात्रयोः शोभनं शीलम् अथो एनयोः कुशाग्रा मेधा** (ये दोनों छात्र अच्छे आचार वाले हैं और इन की बुद्धि भी तीक्ष्ण है।)

एतद् और इदम् के स्थान पर एन आदेश हो कर विभक्तियाँ आने पर **एनं, एनौ, एनान्। एनेन। एनयोः**। इत्यादि प्रयोग सिद्ध होते हैं।

एतयोः – एतद् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "एतद् + ओस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (२८७) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + ओस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + ओस्" इस स्थिति में **"एतस्य चान्वादेशे द्वितीयायां चैनः"** (२८८) सूत्र से एत के स्थान पर, एन आदेश कर, "एन + ओस्" इस स्थिति में **"ओसि च"** (१४६) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "एने + ओस्" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से "एकार" के स्थान पर अय् आदेश कर, "एनय् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "एतयोस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"एतयोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

।। इस प्रकार दकारान्त शब्दों का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

अब धकारान्त पुल्लिंग शब्द में तत्त्वबुध् शब्द का विवेचन करते हैं।

"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्नहिवन्सीनां च" (३१६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

तत्त्वबुध् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर बकार के स्थान पर भकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१६२)विधिसूत्रम् – हचतुर्थान्तस्य धातोस्तृतीयादेरादिचतुर्थत्व–मकृतवत्।।२८६।।

हचतुर्थान्तस्य तृतीयादेर्धातोरादिचतुर्थत्वं भवति विरामे व्यञ्जनादौ च स चाकृतवत्। तत्त्वभुत्, तत्त्वभुद्। तत्त्वबुधौ। तत्त्वबुधः। सम्बोधने पि तद्वत्। तत्त्वबुधा। तत्त्वभुद्भ्याम्। तत्त्वभुद्भिः। इत्यादि। इति धकारान्ताः। नकारान्तः पुल्लिङ्गराजन् शब्दः। घुटि चासम्बुद्धाविति दीर्घः। लिंगान्तनकारस्येति नकारलोपः। राजा। राजानौ। राजानः।

अर्थ – विराम अथवा व्यञ्जनादि परे होने पर हकारान्त और चतुर्थान्त धातु के आदि में रहने वाले तृतीय अक्षर के स्थान पर चतुर्थ अक्षर होता है और वह अकृतवत् होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्नहिवन्सीनां च"** (३१६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

अर्थात् – किसी भी शब्द के अन्त में चतुर्थ अक्षर होना चाहिये तथा आदि में तृतीय अक्षर होगा तो विराम अथवा व्यञ्जन परे होने पर तृतीय अक्षर को चतुर्थ अक्षर होता है। यथा – बुध्, गुढ्, दुह्, इत्यादि।

तत्त्वभुद्भिः – तत्त्वबुध् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "तत्त्वबुध् + भिस्" इस स्थिति में **"हचतुर्थान्तस्य धातोस्तृतीयादेरादिचतुर्थत्व–मकृतवत्"** (२८६) सूत्र से बकार के स्थान पर भकार आदेश कर, "तत्त्वभुध् + भिस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से धकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "तत्त्वभुद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"तत्त्वभुद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वबुधे – तत्त्वबुध् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "तत्त्वबुध् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"तत्त्वबुधे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वभुद्भ्यः – तत्त्वबुध् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "तत्त्वबुध् + भ्यस्" इस स्थिति में **"हचतुर्थान्तस्य धातोस्तृतीयादेरादि–चतुर्थत्वमकृतवत्"** (२८६) सूत्र से बकार के स्थान पर भकार आदेश कर, "तत्त्वभुध् + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से धकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "तत्त्वभुद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"तत्त्वभुद्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वबुधः – तत्त्वबुध् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि – ङस् विभक्ति के आने पर, "तत्त्वबुध् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"तत्त्वबुधः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वबुधोः – तत्त्वबुध् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ङसि – ङस् विभक्ति के आने पर, "तत्त्वबुध् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"तत्त्वबुधोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वबुधि – तत्त्वबुध् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "तत्त्वबुध् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"तत्त्वबुधि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तत्त्वभुत्सु – तत्त्वबुध् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "तत्त्वबुध् + सु" इस स्थिति में **"हचतुर्थान्तस्य धातोस्तृतीयादेरादिचतुर्थत्वभकृतवत्"** (२८६) सूत्र से बकार के स्थान पर भकार आदेश कर, "तत्त्वभुध् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से भकार के स्थान पर तकार आदेश करने पर, **"तत्त्वभुत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

राजा – राजन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "राजन् + स्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ कर, "राजान् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "राजान्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप हो कर **"राजा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

राजानौ – राजन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "राजन् + औ इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से दीर्घ कर, "राजान् + औ इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"राजानौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

राजानः – राजन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "राजन् + जस्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से दीर्घ कर, "राजान् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"राजानः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में सम्बुद्धि सञ्ज्ञक सि विभक्ति के आने पर लिंगान्त नकार के लोप का निषेध करने के लिए अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१६६)निषेधसूत्रम् – न सम्बुद्धौ।।२६०।।

लिङ्गान्तनकारस्य लोपो न भवति सम्बुद्धौ। हे राजन्। राजानम्। राजानौ। अघुट्स्वरे अवमसंयोगादनो इत्यादिना लोपः। पृथक्करणान्नपुंसकस्य वा– हे साम, हे सामन्।

अर्थ – सम्बुद्धि परे होने पर लिंगान्तनकार का लोप नहीं होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"लिंगान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

अर्थात् **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से प्राप्त नकार लोप का निषेध उपर्युक्त सूत्र से किया है।

हे राजन् – राजन् शब्द से सम्बुद्धि के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "राजन् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "राजन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर, **"न सम्बुद्धौ"** (२६०) सूत्र द्वारा लोप का निषेध होने पर **"हे राजन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

राज्ञः – राजन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "राजन् + अस्" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से अन् के अकार का लोप कर, "राज्न् + अस्" इस स्थिति में नकार, चवर्ग के योग में है। अतः **"तवर्गश्चटवर्गयोगे चटवर्गौ"** (२६१) सूत्र द्वारा नकार के स्थान पर ञकार आदेश कर, "राज्ञ् + अस्" इस स्थिति में जकार और ञकार दोनों को "ज्ञकार" रूप कर, "राज्ञ् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"**(२५) सूत्र की सहायता से "राज्ञस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"राज्ञः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसी प्रकार टा आदि अघुट् विभक्तियों में प्रक्रिया जानना चाहिये।

नोट – "ज्ञ" शब्द ज् और "ञ्" के संयोग से बनता है। न कि "ग्" और "य" के संयोग से। अतः उच्चारण करते समय ध्यान रखना चाहिये, कि हम, किस का उच्चारण कर रहे हैं।

राज्ञा – राजन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "राजन् + आ" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से अन् के अकार का लोप कर, "राज्न् + आ" इस स्थिति में नकार चवर्ग के योग में है। अतः **"तवर्गश्चटवर्गयोगे चटवर्गौ"** (२६१) सूत्र द्वारा नकार के स्थान पर ञकार आदेश कर "राज्ञ् + आ" इस स्थिति में जकार और ञकार दोनों के स्थान पर "ज्ञकार" रूप कर, "राज्ञ् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"**(२५) सूत्र की सहायता से **"राज्ञा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

राजभ्याम् – राजन् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "राजन् + भ्याम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "राज + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"राजभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

राजभिः – राजन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "राजन् + भिस्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "राज + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र द्वारा भिस् के स्थान पर ऐस् की प्राप्ति होने पर, **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"राजभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

राज्ञि, राजनि – राजन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "राजन् + इ" इस स्थिति में **"ईङ्योर्वा"** (२५१) सूत्र द्वारा वैकल्पिक अकार का लोप कर, "राज्न् + इ" इस स्थिति में नकार चवर्ग के योग में है। अतः **"तवर्गश्चटवर्गयोगे चटवर्गौ"** (२६१) सूत्र द्वारा नकार को ञकार आदेश कर, "राज्ञ् + इ" इस स्थिति में जकार और ञकार दोनों को "ज्ञकार" रूप कर, "राज्ञ् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"राज्ञि"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"राजनि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

राजसु – राजन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "राजन् + सु" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "राज + सु" इस स्थिति में **"घुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा एकार की प्राप्ति होने पर, **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"राजसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

राजन् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	राजा	राजानौ	राजानः
सम्बोधन	हे राजन्	हे राजानौ	हे राजानः
द्वितीया	राजानम्	राजानौ	राज्ञः
तृतीया	राज्ञा	राजभ्याम्	राजभिः
चतुर्थी	राज्ञे	राजभ्याम्	राजभ्यः
पंचमी	राज्ञः	राजभ्याम्	राजभ्यः
षष्ठी	राज्ञः	राज्ञोः	राज्ञाम्
सप्तमी	राजनि, राज्ञि	राज्ञोः	राजसु

इसी प्रकार तक्षन्, मूर्धन् आदि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

आत्मन्शब्दस्य तु भेदः। आत्मा। आत्मानौ। आत्मानः। हे आत्मन्। इत्यादि। आत्मानम्। आत्मानौ। अघुट्स्वरे अवमसंयोगादिति प्रतिषेधादनो लोपो नास्ति। आत्मनः। आत्मना। इत्यादि। एवं सुपर्वन्–सुशर्मन्–ब्रह्मन्–कृतवर्मन्–प्रभृतयः।

आत्मनः – आत्मन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "आत्मन् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"आत्मनः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

आत्मना – आत्मन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "आत्मन् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"आत्मना"** प्रयोग सिद्ध होता है।

आत्मभ्याम् – आत्मन् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "आत्मन् + भ्याम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "आत्म + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"आत्मभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

आत्मभिः – आत्मन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "आत्मन्+भिस्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "आत्म + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र द्वारा भिस् के स्थान पर ऐस् की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"आत्मभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

आत्मने – आत्मन् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "आत्मन् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"आत्मने"** प्रयोग सिद्ध होता है।

आत्मभ्यः – आत्मन् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "आत्मन् + भ्यस्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "आत्म + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की तथा **"घुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा एकार की प्राप्ति होने पर, **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"आत्मभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसी प्रकार सुपर्वन्, सुशर्मन्, ब्रह्मन्, कृतवर्मन् आदि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

सुपर्वा – सुपर्वन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "सुपर्वन् + स्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ आदेश कर, "सुपर्वान् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "सुपर्वान्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप हो कर **"सुपर्वा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुपर्वाणौ – सुपर्वन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "सुपर्वन् + औ इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से अन् के अकार को दीर्घ कर, "सुपर्वान् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"सुपर्वाणौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुपर्वाणः – सुपर्वन् शब्द से प्रथमा के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "सुपर्वन् + जस्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से अन् के अकार को दीर्घ कर, "सुपर्वान् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "सुपर्वानस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"सुपर्वाणः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे सुपर्वन् – सुपर्वन् शब्द से सम्बुद्धि एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "सुपर्वन् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "सुपर्वन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर, **"न सम्बुद्धौ"** (२६०) सूत्र द्वारा लोप का निषेध होने पर **"हे सुपर्वन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन में पूर्ववत् – **"हे सुपर्वाणौ"** तथा बहुवचन में – **हे सुपर्वाणः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

सुपर्वाणम् – सुपर्वन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "सुपर्वन् + अम्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से अन् के अकार को दीर्घ कर, "सुपर्वान् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"सुपर्वाणम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुपर्वणः – सुपर्वन् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "सुपर्वन् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "सुपर्वणस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"सुपर्वणः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुपर्वणोः – सुपर्वन् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "सुपर्वन् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "सुपर्वणोस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"सुपर्वणोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुपर्वणाम् – सुपर्वन् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "सुपर्वन् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश करने पर **"सुपर्वणाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुपर्वणि – सुपर्वन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "सुपर्वन् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"सुपर्वणि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुपर्वसु – सुपर्वन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सु विभक्ति के आने पर, "सुपर्वन् + सु" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "सुपर्व + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४१) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"सुपर्वसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुपर्वन् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	सुपर्वा	सुपर्वाणौ	सुपर्वाणः
सम्बोधन	हे सुपर्वन्	हे सुपर्वाणौ	हे सुपर्वाणः

सुशर्माणम् – सुशर्मन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "सुशर्मन् + अम्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से अन् के अकार को दीर्घ कर, "सुशर्मान् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"सुशर्माणम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुशर्मणः – सुशर्मन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "सुशर्मन् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "सुशर्मणस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"सुशर्मणः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुशर्मणा – सुशर्मन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "सुशर्मन् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"सुशर्मणा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुशर्मभ्याम् – सुशर्मन् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "सुशर्मन् + भ्याम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "सुशर्म + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"सुशर्मभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुशर्मभिः – सुशर्मन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "सुशर्मन् + भिस्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "सुशर्म + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र द्वारा भिस् के स्थान पर ऐस् की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"सुशर्मभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुशर्मणे – सुशर्मन् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "सुशर्मन् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"सुशर्मणे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुशर्मन् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सुशर्मा	सुशर्माणौ	सुशर्माणः
सम्बोधन	हे सुशर्मन्	हे सुशर्माणौ	हे सुशर्माणः
द्वितीया	सुशर्माणम्	सुशर्माणौ	सुशर्मणः
तृतीया	सुशर्मणा	सुशर्मभ्याम्	सुशर्मभिः
चतुर्थी	सुशर्मणे	सुशर्मभ्याम्	सुशर्मभ्यः
पंचमी	सुशर्मणः	सुशर्मभ्याम्	सुशर्मभ्यः
षष्ठी	सुशर्मणः	सुशर्मणोः	सुशर्मणाम्
सप्तमी	सुशर्मणि	सुशर्मणोः	सुशर्मसु

इसी प्रकार ब्रह्मन् शब्द के रूप जानना चाहिये।

ब्रह्मन् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	ब्रह्मा	ब्रह्माणौ	ब्रह्माणः
सम्बोधन	हे ब्रह्मन्	हे ब्रह्माणौ	हे ब्रह्माणः
द्वितीया	ब्रह्माणम्	ब्रह्माणौ	ब्रह्मणः
तृतीया	ब्रह्मणा	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभिः
चतुर्थी	ब्रह्मणे	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभ्यः
पंचमी	ब्रह्मणः	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभ्यः
षष्ठी	ब्रह्मणः	ब्रह्मणोः	ब्रह्मणाम्
सप्तमी	ब्रह्मणि	ब्रह्मणोः	ब्रह्मसु

करिन् शब्दस्य तु भेदः। सौ–इन्हन् इत्यादिना दीर्घः। करी। करिणौ। करिणः। हे करिन्। इत्यादि। एवं दण्डिन् हस्तिन् गोमिन् तपस्विन् प्रभृतयः।

करिन् (हाथी) शब्द में भेद है। करिन् शब्द को सि विभक्ति के होने पर ही **"इन्हन्पूषार्यम्णां शौ च"** (२४७) सूत्र से दीर्घ होगा।

करी – करिन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "करिन् + स्" इस स्थिति में **"इन्हन्पूषार्यम्णां शौ च"** (२४७) सूत्र द्वारा इकार को दीर्घ कर, "करीन् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "करीन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का भी लोप हो कर **"करी"** प्रयोग सिद्ध होता है।

करिभिः – करिन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "करिन् + भिस्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "करि + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र द्वारा भिस् के स्थान पर ऐस् की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"करिभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

करिणे – करिन् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "करिन् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश करने पर, **"करिणे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

करिणः – करिन् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "करिन् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "करिणस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"करिणः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

करिणोः – करिन् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "करिन् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "करिणोस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"करिणोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

करिणाम् – करिन् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "करिन् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश करने पर, **"करिणाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

करिणि – करिन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "करिन् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश करने पर, **"करिणि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दण्डिनः – दण्डिन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "दण्डिन् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"दण्डिनः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे दण्डिन् – दण्डिन् शब्द से सम्बुद्धि एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "दण्डिन् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "दण्डिन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर, **"न सम्बुद्धौ"** (२६०) सूत्र द्वारा लोप का निषेध होने पर **"हे करिन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन में पूर्ववत् – **"हे करिणौ"** तथा बहुवचन में – **हे करिणः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

दण्डिनम् – दण्डिन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "दण्डिन् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"दण्डिनम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दण्डिना – दण्डिन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "दण्डिन् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"दण्डिना"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दण्डिभ्याम् – दण्डिन् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "दण्डिन् + भ्याम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "दण्डि + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"दण्डिभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दण्डिभिः – दण्डिन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "दण्डिन् + भिस्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "दण्डि + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र द्वारा भिस् के स्थान पर ऐस् की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"दण्डिभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दण्डिने – दण्डिन् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "दण्डिन् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"दण्डिने"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तपस्विन् शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	तपस्वी	तपस्विनौ	तपस्विनः
सम्बोधन	हे तपस्विन्	हे तपस्विनौ	हे तपस्विनः
द्वितीया	तपस्विनम्	तपस्विनौ	तपस्विनः
तृतीया	तपस्विना	तपस्विभ्याम्	तपस्विभिः
चतुर्थी	तपस्विने	तपस्विभ्याम्	तपस्विभ्यः
पंचमी	तपस्विनः	तपस्विभ्याम्	तपस्विभ्यः
षष्ठी	तपस्विनः	तपस्विनोः	तपस्विनाम्
सप्तमी	तपस्विनि	तपस्विनोः	तपस्विषु

वृत्रहन्शब्दस्य तु भेदः। वृत्रहा। वृत्रहणौ। वृत्रहणः। हे वृत्रहन्। वृत्रहणम्। वृत्रहणौ। अघुट्स्वरे लोपे कृते। इन्हन् इत्यादिना दीर्घः। अस्मादेव हन उपधायाः। सावेव दीर्घः क्विपि न दीर्घः।

वृत्रहन् शब्द में भेद है। **"इन्हन्पूषार्यम्णां शौ च"** (२४७) सूत्र में हन् धातु का उल्लेख होने से सि विभक्ति रहते ही दीर्घ होगा अन्य विभक्तियों में नहीं।

वृत्रहा – वृत्रहन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "वृत्रहन् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "वृत्रहन्" इस स्थिति में **"इन्हन्पूषार्यम्णां शौ च"** (२४७) सूत्र से दीर्घ कर, "वृत्रहान्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप करने पर **"वृत्रहा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वृत्रहणौ – वृत्रहन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "वृत्रहन् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"वृत्रहणौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वृत्रहणः – वृत्रहन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "वृत्रहन् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "वृत्रहणस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"वृत्रहणः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शंका– "वृत्रघ्नः" में नकार के स्थान पर णकार आदेश क्यों नहीं हुआ?

समाधान – क्योंकि "वृत्रघ्नः" में हकार को घकार नकार परे रहते होता है। यदि नकार को णकार आदेश कर दिया जायेगा तो हकार भी अपने स्वभाव में आ जायेगा।

वृत्रघ्ना – वृत्रहन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "वृत्रहन् + आ" इस स्थिति में, **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से हन् के अकार का लोप कर, "वृत्रह्न् + आ" इस स्थिति में, **"हनेर्हेर्घिरुपधालोपे"** (२६२) सूत्र द्वारा हकार के स्थान पर घकार आदेश कर, "वृत्रघ्न् + आ" इस स्थिति में, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"वृत्रघ्ना"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वृत्रहभ्याम् – वृत्रहन् शब्द से तृतीया–चतुर्थी–पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "वृत्रहन् + भ्याम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "वृत्रह + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"वृत्रहभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वृत्रहभिः – वृत्रहन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "वृत्रहन् + भिस्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "वृत्रह + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र द्वारा भिस् के स्थान पर ऐस् आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से "वृत्रह + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"वृत्रहभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वृत्रघ्ने – वृत्रहन् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "वृत्रहन् + ए" इस स्थिति में, **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से हन् के अकार का लोप कर, "वृत्रह्न् + ए" इस स्थिति में, **"हनेर्हेर्घिरुपधालोपे"** (२६२) सूत्र द्वारा हकार के स्थान पर घकार आदेश कर, "वृत्रघ्न् + ए" इस स्थिति में, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"वृत्रघ्ने"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वृत्रहभ्यः – वृत्रहन् शब्द से चतुर्थी–पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "वृत्रहन् + भ्यस्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "वृत्रह + भ्यस्" इस स्थिति में, **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से "वृत्रह + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"वृत्रहभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वृत्रहन् शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वृत्रहा	वृत्रहणौ	वृत्रहणः
सम्बोधन	हे वृत्रहन्	हे वृत्रहणौ	हे वृत्रहणः
द्वितीया	वृत्रहणम्	वृत्रहणौ	वृत्रघ्नः
तृतीया	वृत्रघ्ना	वृत्रहभ्याम्	वृत्रहभिः
चतुर्थी	वृत्रघ्ने	वृत्रहभ्याम्	वृत्रहभ्यः
पंचमी	वृत्रघ्नः	वृत्रहभ्याम्	वृत्रहभ्यः
षष्ठी	वृत्रघ्नः	वृत्रघ्नोः	वृत्रघ्नाम्
सप्तमी	वृत्रघ्नि, वृत्रहणि	वृत्रघ्नोः	वृत्रहसु

इसी प्रकार ब्रह्महन्, भ्रूणहन्, ऋणहन् आदि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

ब्रह्महन् शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	ब्रह्महा	ब्रह्महणौ	ब्रह्महणः
सम्बोधन	हे ब्रह्महन्	हे ब्रह्महणौ	हे ब्रह्महणः
द्वितीया	ब्रह्महणम्	ब्रह्महणौ	ब्रह्मघ्नः
तृतीया	ब्रह्मघ्ना	ब्रह्महभ्याम्	ब्रह्महभिः
चतुर्थी	ब्रह्मघ्ने	ब्रह्महभ्याम्	ब्रह्महभ्यः
पंचमी	ब्रह्मघ्नः	ब्रह्महभ्याम्	ब्रह्महभ्यः
षष्ठी	ब्रह्मघ्नः	ब्रह्मघ्नोः	ब्रह्मघ्नाम्
सप्तमी	ब्रह्मघ्नि, ब्रह्महणि	ब्रह्मघ्नोः	ब्रह्महसु

पूषन् शब्द में भेद है। पूषन् शब्द का कथन **"इन्हन्पूषार्यम्णां शौ च"** (२४७) सूत्र में होने से, सि विभक्ति में ही दीर्घ आदेश होगा।

पूषा – पूषन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "पूषन् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "पूषन्" इस स्थिति में **"इन्हन्पूषार्यम्णां शौ च"** (२४७) सूत्र से दीर्घ कर, "पूषान्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप करने पर **"पूषा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

"अन्त्यात्पूर्व उपधा" (७६) सूत्र से अन्तिम वर्ण की उपधा सञ्ज्ञा होती है।

"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ" (२५०) सूत्र से उपधा में रहने वाले अकार का लोप हो कर उपर्युक्त सूत्र से उपधा के उत्तर का अर्थात् नकार का भी लोप होगा।

"पूषन्" शब्द की उपधा में अकार है और उपधा के उत्तर में नकार है। अतः नकार का वैकल्पिक लोप, **"ह्वन्मासदोषपूषां शसादौ स्वरे वा"** (२६३) सूत्र से तथा अकार का लोप **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से करने पर "पूष्" शब्द शेष रहता है।

पूषः, पूष्णः – पूषन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "पूषन्+अस्" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से उपधा के अकार का लोप कर, "पूष्न् + अस्" इस स्थिति में **"ह्वन्मासदोषपूषां शसादौ स्वरे वा"** (२६४) सूत्र द्वारा वैकल्पिक उपधा के उत्तरभूत नकार का लोप कर, "पूष् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश कर, **"पूषः"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"पूष्णः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पूषा, पूष्णा – पूषन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में टा विभक्ति के आने पर, "पूषन् + आ" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से उपधा के अकार का लोप कर, "पूष्न् + आ" इस स्थिति में **"ह्वन्मासदोषपूषां शसादौ स्वरे वा"** (२६४) सूत्र द्वारा वैकल्पिक उपधा के उत्तरभूत नकार का लोप कर, "पूष् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"पूषा"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"पूष्णा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पूषभ्याम् – पूषन् शब्द से तृतीया–चतुर्थी–पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "पूषन् + भ्याम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "पूष + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"पूषभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पूषोः, पूष्णोः – पूषन् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "पूषन् + ओस्" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से उपधा के अकार का लोप कर, "पूष्न् + ओस्" इस स्थिति में **"ह्वन्मासदोषपूषां शसादौ स्वरे वा"** (२६४) सूत्र द्वारा वैकल्पिक उपधा के उत्तरभूत नकार का लोप कर, "पूष् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"पूषोः"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयव–कवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"पूष्णोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पूषाम्, पूष्णाम् – पूषन् शब्द से षष्ठी विभक्ति के एकवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "पूषन् + आम्" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से उपधा के अकार का लोप कर, "पूष्न् + आम्" इस स्थिति में **"ह्वन्मासदोषपूषां शसादौ स्वरे वा"** (२६४) सूत्र द्वारा वैकल्पिक उपधा के उत्तरभूत नकार का लोप कर, "पूष् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"पूषाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्ग–पवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"पूष्णाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पूषि, पूष्णि, पूषणि – पूषन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "पूषन् + इ" इस स्थिति में **"ईङ्योर्वा"** (२५१) सूत्र द्वारा वैकल्पिक उपधा के अकार का लोप कर, "पूष्न् + इ" इस स्थिति में **"ह्वन्मासदोषपूषां शसादौ स्वरे वा"** (२६४) सूत्र द्वारा वैकल्पिक उपधा के उत्तरभूत नकार का लोप कर, "पूष्+इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"पूषि"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"पूष्णि"** प्रयोग सिद्ध होता है। अकार लोप के अभाव में **"पूषणि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पूषसु – पूषन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सु विभक्ति के आने पर, "पूषन् + सु" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "पूष + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"पूषसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे अर्यमन् – अर्यमन् शब्द से सम्बुद्धि एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "अर्यमन् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "अर्यमन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर, **"न सम्बुद्धौ"** (२६०) सूत्र द्वारा लोप का निषेध होने पर **"हे अर्यमन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन में पूर्ववत् – **"हे अर्यमणौ"** तथा बहुवचन में – **हे अर्यमणः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

अर्यमणम् – अर्यमन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "अर्यमन् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर **"अर्यमणम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्यम्णः – अर्यमन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "अर्यमन् + अस्" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से उपधाभूत अकार का लोप कर, "अर्यम्न् + अस्" इस स्थिति में **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "अर्यम्ण् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"अर्यम्णः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्यम्णा – अर्यमन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "अर्यमन् + आ" इस स्थिति में इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से उपधाभूत अकार का लोप कर, "अर्यम्न् + आ" इस स्थिति में **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "अर्यम्ण् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अर्यम्णा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्यमभ्याम् – अर्यमन् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "अर्यमन् + भ्याम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "अर्यम + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"अर्यमभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्यम्णाम् – अर्यमन् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "अर्यमन् + आम्" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से उपधाभूत अकार का लोप कर, "अर्यम्न् + आम्" इस स्थिति में **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "अर्यम्ण् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अर्यम्णाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्यम्णि, अर्यमणि – अर्यमन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "अर्यमन् + इ" इस स्थिति में **"ईङ्योर्वा"** (२५१) सूत्र द्वारा वैकल्पिक उपधा के अकार का लोप कर, "अर्यम्न् + इ" इस स्थिति में **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयव–कवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "अर्यम्ण् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अर्यम्णि"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्पपक्ष में **"अर्यमणि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्यमसु – अर्यमन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सु विभक्ति के आने पर, "अर्यमन् + सु" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "अर्यम + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४१) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"अर्यमसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्यमन् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अर्यमा	अर्यमणौ	अर्यमणः
सम्बोधन	हे अर्यमन्	हे अर्यमणौ	हे अर्यमणः
द्वितीया	अर्यमणम्	अर्यमणौ	अर्यम्णः
तृतीया	अर्यम्णा	अर्यमभ्याम्	अर्यमभिः
चतुर्थी	अर्यम्णे	अर्यमभ्याम्	अर्यमभ्यः
पंचमी	अर्यम्णः	अर्यमभ्याम्	अर्यमभ्यः
षष्ठी	अर्यम्णः	अर्यम्णोः	अर्यम्णाम्
सप्तमी	अर्यम्णि, अर्यमणि	अर्यम्णोः	अर्यमसु

अर्वन्तः – अर्वन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "अर्वन् + अस्" इस स्थिति में **"अर्वन्नर्वन्तिरसावनञ्"** (२६४) सूत्र से अर्वन् के स्थान पर "अर्वन्त्" आदेश कर, "अर्वन्त् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अर्वन्तः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे अर्वन् – अर्वन् शब्द से सम्बुद्धि में सि विभक्ति के आने पर, "अर्वन् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर, **"न सम्बुद्धौ"** (२६०) सूत्र द्वारा निषेध होने पर **"हे अर्वन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन में पूर्ववत् **हे अर्वन्तौ** तथा बहुवचन में **हे अर्वन्तः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

अर्वन्तम् – अर्वन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "अर्वन् + अम्" इस स्थिति में **"अर्वन्नर्वन्तिरसावनञ्"** (२६४) सूत्र से अर्वन् के स्थान पर "अर्वन्त्" आदेश कर, "अर्वन्त् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अर्वन्तम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्वतः – अर्वन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "अर्वन् + अस्" इस स्थिति में **"अर्वन्नर्वन्तिरसावनञ्"** (२६४) सूत्र से अर्वन् के स्थान पर "अर्वन्त्" आदेश कर, "अर्वन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "अर्वत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अर्वतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्वता – अर्वन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "अर्वन् + आ" इस स्थिति में **"अर्वन्नर्वन्तिरसावनञ्"** (२६४) सूत्र से अर्वन् के स्थान पर, "अर्वन्त्" आदेश कर, "अर्वन्त् + आ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "अर्वत् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अर्वता"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्वताम् – अर्वन् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "अर्वन् + आम्" इस स्थिति में **"अर्वन्नर्वन्तिरसावनञ्"** (२६४) सूत्र से अर्वन् के स्थान पर "अर्वन्त्" आदेश कर, "अर्वन्त् + आम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "अर्वत् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अर्वताम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्वतोः – अर्वन् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "अर्वन् + ओस्" इस स्थिति में **"अर्वन्नर्वन्तिरसावनञ्"** (२६४) सूत्र से अर्वन् के स्थान पर "अर्वन्त्" आदेश कर, "अर्वन्त् + ओस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "अर्वत् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अर्वतोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्वति – अर्वन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "अर्वन् + इ" इस स्थिति में **"अर्वन्नर्वन्तिरसावनञ्"** (२६४) सूत्र से अर्वन् के स्थान पर, "अर्वन्त्" आदेश कर, "अर्वन्त् + इ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "अर्वत् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अर्वति"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्वत्सु – अर्वन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सु विभक्ति के आने पर, "अर्वन् + सु" इस स्थिति में **"अर्वन्नर्वन्तिरसावनञ्"** (२६४) सूत्र से अर्वन् के स्थान पर "अर्वन्त्" आदेश कर, "अर्वन्त् + सु" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** सूत्र (२६१) से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप करने पर **"अर्वत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्वन् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अर्वा	अर्वन्तौ	अर्वन्तः
सम्बोधन	हे अर्वन्	हे अर्वन्तौ	हे अर्वन्तः
द्वितीया	अर्वन्तम्	अर्वन्तौ	अर्वतः
तृतीया	अर्वता	अर्वद्भ्याम्	अर्वद्भिः
चतुर्थी	अर्वते	अर्वद्भ्याम्	अर्वद्भ्यः
पंचमी	अर्वतः	अर्वद्भ्याम्	अर्वद्भ्यः
षष्ठी	अर्वतः	अर्वतोः	अर्वताम्
सप्तमी	अर्वति	अर्वतोः	अर्वत्सु

अनर्वाणम् – अनर्वन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "अनर्वन् + अम्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ कर, "अनर्वान् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश करने, **"अनर्वाणम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शस् आदि विभक्तियों के आने पर "अनर्वन्" शब्द में वकार संयोग में होने से **"अवम–संयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से अकार का लोप नहीं होगा।

अनर्वणः – अनर्वन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "अनर्वन् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, "अनर्वणस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अनर्वणः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनर्वणा – अनर्वन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "अनर्वन् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश करने, **"अनर्वणा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनर्वभ्याम् – अनर्वन् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "अनर्वन् + भ्याम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "अनर्व + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"अनर्वभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनर्वभिः – अनर्वन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "अनर्वन् + भिस्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "अनर्व + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र द्वारा भिस् के स्थान पर ऐस् आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से "अनर्व + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"अनर्वभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनर्वसु – अनर्वन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सु विभक्ति के आने पर, "अनर्वन् + सु" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "अनर्व + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"अनर्वसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनर्वन् शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अनर्वा	अनर्वाणौ	अनर्वाणः
सम्बोधन	हे अनर्वन्	हे अनर्वाणौ	हे अनर्वाणः
द्वितीया	अनर्वाणम्	अनर्वाणौ	अनर्वणः
तृतीया	अनर्वणा	अनर्वभ्याम्	अनर्वभिः
चतुर्थी	अनर्वणे	अनर्वभ्याम्	अनर्वभ्यः
पंचमी	अनर्वणः	अनर्वभ्याम्	अनर्वभ्यः
षष्ठी	अनर्वणः	अनर्वणोः	अनर्वणाम्
सप्तमी	अनर्वणि	अनर्वणोः	अनर्वसु

श्वन् (कुत्ता) शब्द में भेद है। घुट् विभक्तियों में राजन् शब्दवत् प्रयोग सिद्ध होते हैं।

श्वा – श्वन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "श्वन् + स्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ कर, "श्वान् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "श्वान्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप हो कर **"श्वा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

श्वानौ – श्वन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "श्वन् + औ" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ कर, "श्वान् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"श्वानौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

श्वानः – श्वन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "श्वन् + अस्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ कर, "श्वान् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "श्वानस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"श्वानः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विशेष – "मघवन्" शब्द से विभक्ति के आने पर, **"सौ च मघवान्मघवा वा"** (२६६) सूत्र द्वारा मघवन्" शब्द को वैकल्पिक मघवन्त् आदेश हो जाता है। मघवन्त् आदेश में उपर्युक्त सूत्र का प्रयोग नहीं होगा। शुद्ध मघवन् शब्द के व को ही उकार आदेश होगा।

शुनः – श्वन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "श्वन् + अस्" इस स्थिति में **"श्वयुवमघोनां च"** (२६५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "श् उ न् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"शुनः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शुना – श्वन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "श्वन् + आ" इस स्थिति में **"श्वयुवमघोनां च"** (२६५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर– "श् उ न् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"शुना"** प्रयोग सिद्ध होता है।

श्वभ्याम् – श्वन् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "श्वन् + भ्याम्" इस स्थिति में **"लिंगान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "श्व + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"श्वभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

श्वभिः – श्वन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "श्वन् + भिस्" इस स्थिति में **"लिंगान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "श्व + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र द्वारा भिस् के स्थान पर ऐस् आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"श्वभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शुने – श्वन् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "श्वन् + ए" इस स्थिति में **"श्वयुवमघोनां च"** (२६५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "श् उ न् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"शुने"** प्रयोग सिद्ध होता है।

"श्वयुवमघोनां च" (२६५) सूत्र पर एक सुभाषित श्लोक अत्यन्त प्रसिद्ध है।

काचं मणिं काञ्चनमेकसूत्रे, ग्रथ्नासि बाले! किमिदं विचित्रम्।
विचारवान् पाणिनिरेकसूत्रे, श्वानं युवानं मघवानमाह।।

श्लोकार्थ– माला गूंथती हुई किसी बाला से प्रश्न किया गया कि तुम कांच, मणि और सोने को एक ही सूत्र (तागे) में क्यों गूंथ रही हो ? वह उत्तर देती है – विचारवान् पाणिनी ने भी तो एक सूत्र में कुत्ते, युवा और इन्द्र को घसीट मारा है। अत्यन्त समुचित उत्तर है। जब पाणिनी जैसे बुद्धिमान् लोग भी असमान वस्तुओं को एक स्थान में बिठाते हैं तो भला मैं बाला (मूर्खा) ऐसा करूँ तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है ?

नोट – जैनेन्द्र–व्याकरण में एवं पाणिनी कृत व्याकरण में भी इसी प्रकार का सूत्र है।

श्वन् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	श्वा	श्वानौ	श्वानः
सम्बोधन	हे श्वन्	हे श्वानौ	हे श्वानः
द्वितीया	श्वानम्	श्वानौ	शुनः
तृतीया	शुना	श्वभ्याम्	श्वभिः
चतुर्थी	शुने	श्वभ्याम्	श्वभ्यः
पंचमी	शुनः	श्वभ्याम्	श्वभ्यः
षष्ठी	शुनः	शुनोः	शुनाम्
सप्तमी	शुनि	शुनोः	श्वसु

अब युवन् (युवा) शब्द की सिद्धि करते हैं।

युवा – युवन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "युवन् + स्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ कर, "युवान् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर तथा **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप हो कर **"युवा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

युवानौ – युवन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "युवन् + औ" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ कर, "युवान् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"युवानौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

युवभिः – युवन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "युवन् + भिस्" इस स्थिति में **"लिंगान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "युव + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र द्वारा भिस् के स्थान पर ऐस् आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"युवभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यूने – युवन् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "युवन् + ए" इस स्थिति में **"श्वयुवमघोनां च"** (२६५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "यु उ न् + ए" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर "यून् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"यूने"** प्रयोग सिद्ध होता है।

युवभ्यः – युवन् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "युवन् + भ्यस्" इस स्थिति में **"लिंगान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "युव + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"युवभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यूनः – युवन् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "युवन् + अस्" इस स्थिति में **"श्वयुवमघोनां च"** (२६५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "यु उ न् + अस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर "यून् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"यूनः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यूनोः – युवन् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "युवन् + ओस्" इस स्थिति में **"श्वयुवमघोनां च"** (२६५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "यु उ न् + ओस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर "यून् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"यूनोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शंका– विभक्ति कहने से सि का भी कथन हो जाता है, फिर विभक्ति और सि को अलग–अलग क्यों कहा ?

समाधान– "अर्वन्नर्वन्तिरसावनञ्" (२६४) सूत्र में सि से रहित कहा था। अतः प्रकृत सूत्र में **"अर्वन्नर्वन्तिरसावनञ्"** सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है। अतः सम्बुद्धि के अतिरिक्त सि का भी ग्रहण किया है। क्योंकि विभक्ति कहने से "सि.....सुप्" तक सभी विभक्तियाँ आ जाती हैं।

मघवन्त् आदेश होने से "भवन्त्" शब्द के समान रूप चलते हैं। परन्तु "भवन्त्" शब्द के प्रथमा विभक्ति के एकवचन में दीर्घ आदेश, **"अन्त्वसन्तस्य चाधातोस्सौ"** (२७६) सूत्र से होगा। तथा मघवन्त् शब्द में दीर्घ निपातनात होगा। क्योंकि **"अन्त्वसन्तस्य चाधातोस्सौ"** (२७६) सूत्र में अन्तु को दीर्घ होता है किन्तु मघवन्त् शब्द में अन्तु है नहीं। क्योंकि आचार्य महाराज ने स्वयम् सूत्र में मघवान् शब्द का प्रयोग किया है। यथा – **"सौ च मघवान्मघवा वा"** (२६६) सूत्र द्वारा मघवन् शब्द को विकल्प से मघवन्त् आदेश होता है। मघवन्त् के अभाव में मूल मघवन् शब्द से सि, औ जस् अम् और औ घुट् विभक्तियों में राजन् शब्दवत् रूप बनते हैं। शस् आदि विभक्तियों में **"श्वयुवमघोनां च"** (२६५) सूत्र से व के स्थान पर उकार आदेश कर सन्धि हो कर **"मघोनः"** आदि प्रयोग सिद्ध होते हैं।

अब सर्वप्रथम मघवन् शब्द को मघवन्त् आदेश कर प्रयोग सिद्ध करते हैं।

मघवान् – मघवन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "मघवन् + स्" इस स्थिति में **"सौ च मघवान्मघवा वा"** (२६६) सूत्र द्वारा विकल्प से मघवन् के स्थान पर, "मघवन्त्" आदेश कर, "मघवन्त् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "मघवन्त्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से तकार का लोप कर "मघवन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का भी लोप प्राप्त होने पर **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर, निपातनात दीर्घ हो कर **"मघवान्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवा – मघवन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "मघवन् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "मघवन्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से दीर्घ कर, "मघवान्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप हो कर **"मघवा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन एवं बहुवचन में पूर्ववत् **हे मघवानौ, हे मघवानः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

मघवन्तम् – मघवन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "मघवन् + अम्" इस स्थिति में **"सौ च मघवान्मघवा वा"** (२६६) सूत्र द्वारा विकल्प से मघवन् के स्थान पर, "मघवन्त्" आदेश कर, "मघवन्त् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मघवन्तम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवानम् – मघवन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "मघवन् + अम्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से दीर्घ कर, "मघवान् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मघवानम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवतः – मघवन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "मघवन् + अस्" इस स्थिति में **"सौ च मघवान्मघवा वा"** (२६६) सूत्र द्वारा विकल्प से मघवन् के स्थान पर, "मघवन्त्" आदेश कर, "मघवन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश् चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "मघवत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"मघवतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघोनः – मघवन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "मघवन् + अस्" इस स्थिति में **"श्वयुवमघोनां च"** (२६५) सूत्र से "व" के स्थान पर उकार आदेश कर, "मघ उ न् + अस्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से सन्धि कर "मघोन् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"मघोनः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवता – मघवन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "मघवन् + आ" इस स्थिति में **"सौ च मघवान्मघवा वा"** (२६६) सूत्र द्वारा विकल्प से मघवन् के स्थान पर, "मघवन्त्" आदेश कर, "मघवन्त् + आ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "मघवत् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मघवता"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवते – मघवन् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "मघवन् + ए" इस स्थिति में **"सौ च मघवान्मघवा वा"** (२६६) सूत्र द्वारा विकल्प से मघवन् के स्थान पर, "मघवन्त्" आदेश कर, "मघवन्त् + ए" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "मघवत् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मघवते"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघोने – मघवन् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "मघवन् + ए" इस स्थिति में **"श्वयुवमघोनां च"** (२६५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "मघ उ न् + ए" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से सन्धि कर "मघोन् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मघोने"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवद्भ्यः – मघवन् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "मघवन् + भ्यस्" इस स्थिति में **"सौ च मघवान्मघवा वा"** (२६६) सूत्र द्वारा विकल्प से मघवन् के स्थान पर, "मघवन्त्" आदेश कर, "मघवन्त् + भ्यस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "मघवत् + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश कर तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"मघवद्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवभ्यः – मघवन् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "मघवन् + भ्यस्" इस स्थिति में **"लिंगान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "मघव + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"मघवभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवतः – मघवन् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "मघवन् + अस्" इस स्थिति में **"सौ च मघवान्मघवा वा"** (२६६) सूत्र द्वारा विकल्प से मघवन् के स्थान पर, "मघवन्त्" आदेश कर, "मघवन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "मघवत्+अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"मघवतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवति – मघवन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "मघवन् + इ" इस स्थिति में **"सौ च मघवान्मघवा वा"** (२६६) सूत्र द्वारा विकल्प से मघवन् के स्थान पर, "मघवन्त्" आदेश कर, "मघवन्त् + इ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश् चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "मघवत् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"मघवति"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघोनि – मघवन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर "मघवन् + इ" इस स्थिति में **"श्वयुवमघोनां च"** (२६५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "मघ उ न् + इ" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से सन्धि कर "मघोन् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मघोनि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवत्सु – मघवन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सु विभक्ति के आने पर, "मघवन् + सु" इस स्थिति में **"सौ च मघवान्मघवा वा"** (२६६) सूत्र द्वारा विकल्प से मघवन् के स्थान पर, "मघवन्त्" आदेश कर, "मघवन्त् + सु" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप करने पर, **"मघवत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवसु – मघवन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर "मघवन् + सु" इस स्थिति में **"लिंगान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर "मघव + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"मघवसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मघवन्त् (मघवन्) शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	मघवान्	मघवन्तौ	मघवन्तः
सम्बोधन	हे मघवन्	हे मघवन्तौ	हे मघवन्तः
द्वितीया	मघवन्तम्	मघवन्तौ	मघवतः
तृतीया	मघवता	मघवद्भ्याम्	मघवद्भिः
चतुर्थी	मघवते	मघवद्भ्याम्	मघवद्भ्यः
पंचमी	मघवतः	मघवद्भ्याम्	मघवद्भ्यः
षष्ठी	मघवतः	मघवतोः	मघवताम्
सप्तमी	मघवति	मघवतोः	मघवत्सु

इसी प्रकार **"मघवानमाचष्टे मघवयति"** रूप सिद्ध होता है। परन्तु यहाँ श्वन् शब्द नहीं होने से मघवन् शब्द के अन्त्यस्वर का लोप हो गया है।

अब स्थूल आदि शब्द के अन्तस्थ वर्ण का लोप तथा नामि को गुण करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(०००)विधिसूत्रम् – स्थूलदूरयुवक्षिप्रक्षुद्राणामन्तस्थादेर्लोपो गुणश्च नामिनाम्।।२६८।।

स्थूलदूरयुवक्षिप्रक्षुद्र इत्येतेषामन्तस्थादेर्लोपो भवति नामिनां गुणश्च इनि परे। स्थूलमाचष्टे स्थवयति। दूरमाचष्टे दवयति। युवानमाचष्टे यवयति। क्षिप्रमाचष्टे क्षेपयति। क्षुद्रमाचष्टे क्षोदयति। इनि लिङ्गस्यानेकाक्षरस्येत्यादिना अन्त्यस्वरादेर्लोपः। अनि च विकरणे गुणः सर्वत्र।

पञ्चन् शब्दस्य तु भेदः। तस्य बहुवचनमेव। कतेश्च जश्शसोर्लुक्। पञ्च। पञ्च। पञ्चभिः। पञ्चभ्यः। पञ्चभ्यः। आमि च नुरित्यनुवर्त्तते।

अर्थ – इन् परे होने पर स्थूल, दूर, युव, क्षिप्र, क्षुद्र इन शब्दों के अन्तःस्थ आदि का लोप और नामि के लिये गुण होता है।

स्थूल, दूर, युव, क्षिप्र, क्षुद्र इन शब्दों में क्रमशः ल्, र्, व्, र्, र्, ये अन्तःस्थ सञ्ज्ञक वर्ण हैं। इन अन्तःस्थ वर्णों का स्वर सहित लोप तथा नामि के लिये गुण होता है।

यथा – स्थूल के लकार और अकार का लोप तथा ऊकार के स्थान पर ओकार गुण होने पर, स्थो बनेगा। इसी प्रकार दूर के रकार और अकार का लोप तथा ऊकार के स्थान पर ओकार गुण होने पर, दो बनेगा। युव के वकार और अकार का लोप तथा उकार के स्थान पर ओकार गुण होने पर, यो बनेगा। क्षिप्र् के रकार और अकार का लोप तथा इकार के स्थान पर एकार गुण होने पर, क्षेप् बनेगा। क्षुद्र के रकार और अकार का लोप तथा उकार के स्थान पर ओकार गुण होने पर, क्षोद् बनेगा।

इन शब्दों से ति विभक्ति तथा अन् विकरण करने पर "स्थो + इ + अ + ति" इस स्थिति में **"अनि च विकरणे"** (५८७) सूत्र से इकार के स्थान पर एकार गुण हो कर "स्थो + ए + अति" इस स्थिति में क्रमशः **"ओ अव्"** (५०) तथा **"ए अय्"** (४८) सूत्र से अव् तथा अय् आदेश हो कर "स्थव् अय् अति" = **"स्थवयति"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसी प्रकार दूर आदि शब्दों में **"इन्कारितं धात्वर्थे"** (१००५) सूत्र से इन् प्रत्यय कर पूर्वोक्त र का लोप, ति प्रत्यय, अन् विकरण, गुण तथा अव् – अय् आदेश कर **"दवयति"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पञ्चन् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "पञ्चन्" शब्द को नु का आगम करने के लिए अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.७५)विधिसूत्रम् – सङ्ख्यायाः ष्णान्तायाः।।२६६।।

षकारनकारान्तायाः सङ्ख्याया नुरागमो भवति आमि परे। दीर्घमामि सनौ इति अनुवर्तते।

अर्थ – आम् परे होने पर षकारान्त और नकारान्त संख्यावाची शब्दों से नु का आगम होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"आमि च नु"** (१४७) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

षकारान्त षष् शब्द से तथा नकारान्त पञ्चन्, सप्तन् इत्यादि शब्दों से आम् परे होने पर नु का आगम होता है।

"दीर्घमामि सनौ" (१४६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

अब "पञ्चन् + नाम्", यहाँ पञ्चन् शब्द की उपधा को दीर्घ करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.६३)विधिसूत्रम् – नान्तस्य चोपधायाः।।३००।।

नान्तस्य लिंगस्योपधाया दीर्घो भवति सनावामि परे। पञ्चानाम्। पञ्चसु। एवं सप्तन्–नवन्–दशन्–प्रभृतयः। अष्टन् शब्दस्य तु भेदः। तस्यापि बहुवचनमेव।

अर्थ – नु सहित आम् परे होने पर नान्त की उपधा को दीर्घ होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"दीर्घमामि सनौ"** (१४६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

पञ्चानाम् – पञ्चन् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "पञ्चन् + आम्" इस स्थिति में **"सङ्ख्यायाः ष्णान्तायाः"** (२६६) सूत्र से नु का आगम कर, "पञ्चन् + नाम्" इस स्थिति में **"नान्तस्य चोपधायाः"** (३००) सूत्र से दीर्घ कर "पञ्चान् + नाम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप हो कर **"पञ्चानाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शंका – पञ्चन् शब्द से आम् विभक्ति के आने पर **"आमि च नुः"** (१४७) सूत्र से "नु" का आगम क्यों नहीं किया ?

समाधान – "आमि च नुः" (१४७) सूत्र से ह्रस्व, श्रद्धासञ्ज्ञक और नदीसञ्ज्ञक शब्दों को नुम् का आगम होता है। और पञ्चन् शब्द नकारान्त है। अतः **"आमि च नुः"** (१४७) सूत्र से नु का आगम कैसे हो सकता था।

पञ्चसु – पञ्चन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "पञ्चन् + सु" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "पञ्च + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"पञ्चसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अर्थात् – जहाँ अष्टन् शब्द के नकार के स्थान पर आकार आदेश होगा, तब ही जस्–शस् के स्थान पर औ आदेश होता है। यानी अष्टन् शब्द के नकार को विकल्प से आकार आदेश होगा।

शंका – सूत्र में **"तस्मात्"** पद का ग्रहण क्यों किया है ?

समाधान – अष्टन् शब्द के स्थान पर आ आदेश का अनियम करने के लिये "तस्मात्" पद का प्रयोग किया है। अर्थात् अष्टन् के स्थान पर आ आदेश विकल्प से होगा। इसलिये "औ" के अभाव में जस्–शस् का लुक् हो कर **"अष्ट"** प्रयोग बनेगा तथा औ के सद्भाव में **"अष्टौ"** प्रयोग बनेगा। इस नियम के अनुसार सभी विभक्तियों में दो–दो प्रयोग सिद्ध होंगे।

अष्टौ – अष्टन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "अष्टन् + अस्" इस स्थिति में **"अष्टनः सर्वासु"** (३०१) सूत्र से अष्टन् शब्द के नकार के स्थान पर आकार आदेश कर, "अष्ट आ + अस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर, "अष्टा + अस्" इस स्थिति में **"औ तस्माज्जस्शसोः"** (३०२) सूत्र से जस्–शस् के स्थान पर औ आदेश कर, "अष्टा + औ" इस स्थिति में **"ओकारे औ औकारे च"** (१४०) सूत्र से सन्धि करने पर **"अष्टौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अष्ट – अष्टन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "अष्टन् + अस्" इस स्थिति में **"कतेश्च जस्शसोर्लुक्"** (१७५) सूत्र से जस् शस् का लुक् कर, **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का भी लोप हो कर **"अष्ट"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसी प्रकार प्रत्येक विभक्ति के दो–दो रूप जानना चाहिये।

अष्टाभिः – अष्टन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "अष्टन् + भिस्" इस स्थिति में **"अष्टनः सर्वासु"** (३०१) सूत्र से अष्टन् शब्द के नकार के स्थान पर आकार आदेश कर, "अष्ट आ + भिस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर, "अष्टा + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अष्टाभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अष्टासु – अष्टन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सु विभक्ति के आने पर, "अष्टन् + सु" इस स्थिति में **"अष्टनः सर्वासु"** (३०१) सूत्र से अष्टन् शब्द के नकार के स्थान पर आकार आदेश कर, "अष्ट आ + सु" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि करने पर **"अष्टासु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अष्टसु – अष्टन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सु विभक्ति के आने पर, "अष्टन् + सु" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "अष्ट + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"अष्टसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अष्टन् शब्द की रूपमाला यथा–

अष्टौ अष्ट। अष्टौ अष्ट। अष्टाभिः अष्टभिः। अष्टाभ्यः अष्टभ्यः। अष्टाभ्यः अष्टभ्यः। अष्टानाम्। अष्टासु अष्टसु।

।। इस प्रकार नकारान्त पुल्लिंग शब्द का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

व्यञ्जनान्त पुल्लिंग शब्द में पकारान्त, फकारान्त, बकारान्त, भकारान्त शब्द अप्रसिद्ध हैं।

अब मकारान्त पुल्लिंग शब्द में किम् शब्द का विवेचन करते हैं।

किम् शब्द से प्रथमा आदि विभक्ति के एकवचन आदि में सि आदि विभक्ति के आने पर, "किम्" शब्द के स्थान पर, "क" आदेश करने के लिए अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१७२)विधिसूत्रम् – किम् कः।।३०३।।

किं शब्दः को भवति विभक्तौ परतः। कः। कौ। के। कम्। कौ। कान्। केन। काभ्याम्। कैः। इत्यादि। इदम् शब्दस्य तु भेदः।

अर्थ – विभक्ति परे होने पर किम् शब्द के स्थान पर क आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है। अर्थात् सम्पूर्ण किम् के स्थान पर अकार सहित ककार आदेश होता है।

कः – किम् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "किम् + स्" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + स्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"कः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

केन – किम् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "किम् + आ" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + आ" इस स्थिति में **"इन टा"** (१३८) सूत्र से टा के स्थान पर "इन" आदेश कर, "क + इन" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्णे ए"** (२७) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश तथा इकार का लोप हो कर **"केन"** प्रयोग सिद्ध होता है।

काभ्याम् – किम् शब्द से तृतीया–चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "किम् + भ्याम्" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से अकार को दीर्घ हो कर **"काभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कैः – किम् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "किम् + भिस्" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र से भिस् के स्थान पर "ऐस्" आदेश कर, "क + ऐस्" इस स्थिति में **"एकारे ऐ ऐकारे च"** (३७) सूत्र से अकार के स्थान पर ऐकार आदेश तथा ऐस् के ऐकार का लोप हो कर "कैस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"कैः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कस्मै – किम् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "किम् + ए" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + ए" इस स्थिति में **"स्मै सर्वनाम्नः"** (१५३) सूत्र से ङे के स्थान पर "स्मै" आदेश हो कर **"कस्मै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

केभ्यः – किम् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "किम् + भ्यस्" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "के + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"केभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कस्माद्, कस्मात् – किम् शब्द से पञ्चमी विभक्ति के एकवचन में "ङसि" विभक्ति के आने पर, "किम् + अस्" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + + अस्" इस स्थिति में **"ङसिः स्मात्"** (१५४) सूत्र से ङसि के स्थान पर "स्मात्" आदेश कर, "कस्मात्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार अथवा तकार आदेश हो कर **"कस्माद्, कस्मात्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

किम् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	कः	कौ	के
सम्बोधन	हे क	हे कौ	हे के
द्वितीया	कम्	कौ	कान्
तृतीया	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पंचमी	कस्मात्	काभ्याम्	केभ्यः
षष्ठी	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी	कस्मिन्	कयोः	केषु

इदम् शब्द में भेद है। इदम् शब्द भी सर्वनाम सञ्ज्ञक है। परन्तु इसके प्रयोग करने में थोड़ा, अधिक बुद्धि का प्रयोग करना पड़ता है। अतः इदम् शब्द के प्रयोग अच्छे से हृदयंगम कर लेना चाहिए।

इदम् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, इदम के स्थान पर अयम् आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१७६)विधिसूत्रम् – इदमियमयं पुंसि।।३०४।।

इदम्शब्दस्य इयं भवति स्त्रियामयं पुंसि इदं च नपुंसके सौ परे। अयम्। अन्यत्र त्यदाद्यत्वम्।

अर्थ – सि विभक्ति परे होने पर, इदम् शब्द को, स्त्रीलिंग में इयम् आदेश, पुल्लिंग में, अयम् आदेश और नपुंसकलिंग में इदम् आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"सौ सः"** (३२२) सूत्र की तथा **"सावौ सिलोपश्च"** (२२३) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

नोट – **"कलाप–व्याकरण"** में उपर्युक्त सूत्र की टीका निम्न प्रकार है। यथा – **"इदम् इयम् भवति अयम् च पुंसि सौ विभक्तौ"।**

अयम् – इदम् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"इदमियमयं पुंसि"** (३०४) सूत्र द्वारा इदम् के स्थान पर अयम् आदेश कर, "अयम् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप करने पर, **"अयम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इमम् – इदम् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "इदम् + अम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + अम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + अम्" इस स्थिति में **"दो द्वेर्मः"** (३०५) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "इम + अम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इम् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"इमम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इमान् – इदम् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "इदम् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + अस्" इस स्थिति में **"दो द्वेर्मः"** (३०५) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "इम + अस्" इस स्थिति में **"शसि सस्य च नुः"** (१३७) सूत्र से शस् के सकार के स्थान पर नकार आदेश तथा पूर्व अकार को दीर्घ कर, "इमा + अन्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि करने पर **"इमान्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इदम् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में "टा" विभक्ति तथा षष्ठी–सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, इदम् शब्द के स्थान पर अन आदेश करने के लिए अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१७८)विधिसूत्रम् – टौसोरनः।।३०६।।

अग्वर्जितस्य इदं शब्दस्य अनादेशो भवति टौसोः परतः। अनेन।

अर्थ – टा अथवा ओस् परे होने पर अक् रहित इदम् शब्द के स्थान पर अन आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"इदमियमयं पुंसि"** (३०४) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

"अव्ययसर्वनाम्नः स्वरादन्त्यात्पूर्वो क्कः" (३६७) सूत्र से अक् प्रत्यय होता है। अर्थात् अक् प्रत्यय से रहित इदम् के स्थान पर अन आदेश होता है।

इदम् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में "भिस्" विभक्ति के आने पर, भिस् विभक्ति के स्थान पर भिर् आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१८०)विधिसूत्रम् – तस्माद् भिस् भिर्।।३०८।।

तस्मात्कृताकारादिदमः परो भिस् भिर् भवति। एभिः। अस्मै। आभ्याम्। एभ्यः। अस्मात्। आभ्याम्। एभ्यः। अस्य। अनयोः। एषाम्। अस्मिन्। अनयोः। एषु। अन्वादेशे पूर्ववत्। इति मकारान्ताः। यकारान्तो प्रसिद्धः। रेफान्तः पुल्लिङ्गश्चत्वार् शब्दः। तस्य बहुवचनमेव। चत्वारः।

अर्थ – किया है इदम् शब्द के स्थान पर अकार आदेश ऐसे इदम् शब्द से परे भिस् के स्थान पर भिर् आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"इदमियमयम् पुंसि"** (३०४) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

शंका – यहाँ भिस् हो अथवा भिर् दोनों के स्थान पर **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से विसर्जनीय आदेश ही होता है। फिर भिस् के स्थान पर भिर् आदेश करने से क्या लाभ है ?

समाधान – यद्यपि आपका कहना ठीक है, परन्तु "भिर्" आदेश करने पर **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र से भिर् के स्थान पर ऐस् आदेश नहीं होगा। क्योंकि सूत्र से भिस् के स्थान पर ऐस् होता है, भिर् के स्थान पर नहीं। इसलिये भिस् के स्थान पर भिर् आदेश किया है।

एभिः – इदम् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "इदम् + भिस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + भिस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + भिस्" इस स्थिति में **"अद् व्यञ्जने नक्"** (३०७) सूत्र से इदम् शब्द के स्थान पर अत् आदेश कर, तकार का अनुबन्ध लोप कर, "अ + भिस्" इस स्थिति में **"तस्माद् भिस् भिर्"** (३०७) सूत्र से भिस् के स्थान पर भिर् आदेश कर, "अ + भिर्" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "ए + भिर्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"एभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनयोः – इदम् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में "ओस्" विभक्ति के आने पर, "इदम् + ओस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + ओस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + ओस्" इस स्थिति में **"टौसोरनः"** (३०६) सूत्र से इदम् के स्थान पर अन आदेश कर, "अन + ओस्" इस स्थिति में **"ओसि च"** (१४६) सूत्र से अन के अकार के स्थान पर एकार आदेश हो कर, "अने + ओस्" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश करने पर **"अनयोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एषाम् – इदम् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में "आम्" विभक्ति के आने पर, "इदम् + आम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + आम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + आम्" इस स्थिति में **"अद् व्यञ्जने नक्"** (३०७) सूत्र से इदम् के स्थान पर अद् आदेश कर, तकार का अनुबन्ध लोप कर, "अ + आम्" इस स्थिति में **"सुरामि सर्वतः"** (१५५) सूत्र से सु का आगम कर, "अ+साम्" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "ए + साम्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"एषाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अस्मिन् – इदम् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में "ङि" विभक्ति के आने पर, "इदम् + इ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + इ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + इ" इस स्थिति में **"अद् व्यञ्जने नक्"** (३०७) सूत्र से इदम् के स्थान पर अत् आदेश कर, तकार का अनुबन्ध लोप कर, "अ + इ" इस स्थिति में **"ङिः स्मिन्"** (१५६) सूत्र से "ङि" के स्थान पर "स्मिन्" आदेश हो कर **"अस्मिन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एषु – इदम् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "इदम् + सु" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + सु" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + सु" इस स्थिति में **"अद् व्यञ्जने नक्"** (३०७) सूत्र से इदम् के स्थान पर अद् आदेश कर, तकार का अनुबन्ध लोप कर, "अ + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर "ए + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"एषु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"अघुट् स्वरे लोपम्"** (१८७) सूत्र की तथा **"व्यञ्जने चैषां निः"** (१८८) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

चत्वार् शब्द के "वा" के स्थान पर उकार आदेश होने पर, चत् उर् = चतुर्" विभक्ति आने पर, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"चतुरः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चतुरः – चत्वार् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "चत्वार् + अस्" इस स्थिति में **"चतुरो वाशब्दस्योत्वम्"** (३०६) सूत्र से "वा" के स्थान पर, उकार आदेश कर, "चत् उर् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"चतुरः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चत्वार् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "चत्वार्+भिस्" इस स्थिति में **"चतुरो वाशब्दस्योत्वम्"** (३०६) सूत्र से वा के स्थान पर उकार आदेश कर, "चतुर् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से रेफ के स्थान पर विसर्ग आदेश की प्राप्ति होने पर, विसर्ग आदेश का निषेध करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(०००)निषेधसूत्रम् – न रेफस्य घोषवति।।३१०।।

रेफस्य घोषवति परे विसर्जनीयो न भवति। चतुर्भिः। चतुर्भ्यः। चतुर्भ्यः।

अर्थ – घोष परे होने पर रेफ के स्थान पर विसर्जनीय आदेश नहीं होता है।

चतुर्भिः – चत्वार् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "चत्वार् + भिस्" इस स्थिति में **"चतुरो वाशब्दस्योत्वम्"** (३०६) सूत्र से "वा" के स्थान पर उकार आदेश कर, "चत् उर् + भिस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से रेफ के स्थान पर विसर्ग आदेश की प्राप्ति का **"न रेफस्य घोषवति"** (१३०) सूत्र से निषेध होने पर, "चतुर् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"चतुर्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चतुर्भ्यः – चत्वार् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "चत्वार् + भ्यस्" इस स्थिति में **"चतुरो वाशब्दस्योत्वम्"** (३०६) सूत्र से "वा" के स्थान पर उकार आदेश कर, "चत् उर् + भ्यस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से रेफ के स्थान पर विसर्ग आदेश की प्राप्ति का **"न रेफस्य घोषवति"** (१३०) सूत्र से निषेध होने पर, "चतुर् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश करने पर **"चतुर्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चतुर्षु – चत्वार् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "चत्वार् + सु" इस स्थिति में **"चतुरो वाशब्दस्योत्वम्"** (३०६) सूत्र से वा के स्थान पर उकार आदेश कर, "चत् उ र् + सु" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर रेफ आदेश की प्राप्ति का, **"रः सुपि"** (३१२) सूत्र से निषेध कर, **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"चतुर्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

।। इस प्रकार रकारान्त पुल्लिंग शब्द का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

लकारान्त पुल्लिंग शब्द अप्रसिद्ध हैं।

अब वकारान्त पुल्लिंग शब्द में सुदिव् (अच्छे निर्मल आकाश वाला दिन आदि या अच्छे मार्ग वाला पुरुष आदि) शब्द का विवेचन करते हैं।

सुदिव् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, वकार के स्थान पर औकार आदेश करने के लिए अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१०३)विधिसूत्रम् – औ सौ।।३१३।।

दिवो वकारस्य औ भवति सौ परे। सुद्यौः। सुदिवौ। सुदिवः।

अर्थ – सि परे होने पर दिव् शब्द के वकार के स्थान पर औ आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"दिव उद् व्यञ्जने"** (३१५) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

अर्थात् सि परे होने पर दिव् शब्द के वकार के स्थान पर, उकार आदेश होता है।

दिव् शब्द स्वतन्त्र भी हो सकता है तथा समासान्त भी हो सकता है। यहाँ दिव् शब्द समासान्त है।

सुद्यौः – सुदिव् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "सुदिव् + स्" इस स्थिति में **"औ सौ"** (३१३) सूत्र से वकार के स्थान पर, "औ" आदेश कर, "सुदि औ + स्" इस स्थिति में **"इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः"** (४४) सूत्र से इकार के स्थान पर यकार आदेश कर, "सुद्य् औ + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"सुद्यौः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुदिव् शब्द से भ्याम् आदि विभक्तियों के आने पर, वकार के स्थान पर उकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.११२)विधिसूत्रम् – दिव उद्व्यञ्जने।।३१५।।

दिवो वकारस्य उत् भवति व्यञ्जने परे। सुद्युभ्याम्। सुद्युभिः। इत्यादि। इति वकारान्ताः। शकारान्तः पुल्लिङ्गो विश्–शब्दः। हशषछान्त इत्यादिना डत्वम्। विट्, विड्। विशौ। विशः। सम्बोधने पि तद्वत्। इत्यादि। तादृश् शब्दस्य तु भेदः। चवर्गदृगादीनां चेति गत्वम्। तादृक्, तादृग्। तादृशौ। तादृशः। एवं सदृश्–यादृश्–एतादृश्–कीदृश्–ईदृश्–अमूदृश्–प्रभृतयः। इति शकारान्ताः। षकारान्तः पुल्लिङ्गो रत्नमुष् शब्दः। रत्नमुट् रत्नमुड्। रत्नमुषौ। रत्नमुषः। रत्नमुषम्। रत्नमुषौ। रत्नमुषः। रत्नमुषा। रत्नमुड्भ्याम्। रत्नमुड्भिः। इत्यादि साधुतक्ष् शब्दस्य तु भेदः।

अर्थ – व्यञ्जन परे होने पर दिव् के वकार के स्थान पर उकार आदेश होता है।

अर्थात् भ्याम्, भिस्, भ्यस् और सुप् ये व्यञ्जनान्त विभक्तियों के होने पर दिव् के वकार के स्थान पर उकार आदेश होता है।

दिव् शब्द स्वतन्त्र भी हो सकता है तथा समासान्त भी। यहाँ सुदिव् शब्द के वकार के स्थान पर, व्यञ्जनान्त विभक्तियों के होने पर, उकार आदेश होगा।

सुद्युभ्याम् – सुदिव् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "सुदिव् + भ्याम्" इस स्थिति में **"दिव उद्व्यञ्जने"** (३१५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "सुदि उ + भ्याम्" इस स्थिति में **"इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः"** (४४) सूत्र से इकार के स्थान पर यकार आदेश कर, "सुद् य् उ + भ्याम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुद्युभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुद्युभिः – सुदिव् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "सुदिव् + भिस्" इस स्थिति में **"दिव उद्व्यञ्जने"** (३१५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "सुदि उ + भिस्" इस स्थिति में **"इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः"** (४४) सूत्र से इकार के स्थान पर यकार आदेश कर, "सुद् य् उ + भिस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"सुद्युभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुदिवे – सुदिव् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "सुदिव् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुदिवे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अब शकारान्त पुल्लिंग शब्द में विश् शब्द का विवेचन करते हैं। विश् शब्द के शकार के स्थान पर, **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से डकार आदेश हो जायेगा।

विट्–विड् – विश् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति आने पर, "विश् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "विश्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से शकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "विड्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर, "विट्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक टकार के स्थान पर डकार–टकार आदेश करने पर **"विट्–विड्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

विशौ – विश् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "विश् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"विशौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विशः – विश् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "विश् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"विशः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी इसी प्रकार **हे विट्–विड्, हे विशौ, हे विशः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

विशम् – विश् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "विश् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"विशम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विशा – विश् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "विश् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"विशा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विड्भ्याम् – विश् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "विश् + भ्याम्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से शकार के स्थान पर डकार आदेश करने पर **"विड्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विड्भिः – विश् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "विश् + भिस्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से शकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "विड् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"विड्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विश् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	विट्–ड्	विशौ	विशः
सम्बोधन	हे विट्–ड्	हे विशौ	हे विशः
द्वितीया	विशम्	विशौ	विशः
तृतीया	विशा	विड्भ्याम्	विड्भिः
चतुर्थी	विशे	विड्भ्याम्	विड्भ्यः
पंचमी	विशः	विड्भ्याम्	विड्भ्यः
षष्ठी	विशः	विशोः	विशाम्
सप्तमी	विशि	विशोः	विट्त्स, विट्सु

तादृश् शब्द में भेद है। तादृश् शब्द यद्यपि शकारान्त है। परन्तु तादृश् शब्द **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र के अन्तर्गत पढ़ा गया है। अतः सि आदि विभक्तियों के होने पर, **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र द्वारा शकार के स्थान पर गकार आदेश होगा।

तादृक्, तादृग् – तादृश् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "तादृश् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "तादृश्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से शकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "तादृग्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर "तादृक्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर गकार–ककार आदेश करने पर **"तादृग्–तादृक्"** प्रयोग सिद्ध होते है।

तादृशौ – तादृश् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "तादृश् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"तादृशौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तादृशः – तादृश् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "तादृश् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"तादृशः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तादृशम् – तादृश् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "तादृश् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"तादृशम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तादृक्षु – तादृश् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "तादृश् + सु" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से शकार के स्थान गकार आदेश कर, "तादृग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "तादृक् + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्यय विकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "तादृक् + षु" इस स्थिति में **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र की सहायता से क्ष आदेश करने पर **"तादृक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है। अथवा **"कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा"** (२५६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर खकार आदेश करने पर, **"तादृख्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तादृश् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	तादृक्–ग्	तादृशौ	तादृशः
सम्बोधन	हे तादृक्–ग्	हे तादृशौ	हे तादृशः
द्वितीया	तादृशम्	तादृशौ	तादृशः
तृतीया	तादृशा	तादृग्भ्याम्	तादृग्भिः
चतुर्थी	तादृशे	तादृग्भ्याम्	तादृग्भ्यः
पंचमी	तादृशः	तादृग्भ्याम्	तादृग्भ्यः
षष्ठी	तादृशः	तादृशोः	तादृशाम्
सप्तमी	तादृशि	तादृशोः	तादृक्षु

इसी प्रकार सदृश्, यादृश्, एतादृश्, कीदृश्, ईदृश्, अमूदृश् इत्यादि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

।। इस प्रकार शकारान्त पुल्लिंग शब्दों का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

अब षकारान्त पुल्लिंग शब्द में रत्नमुष् शब्द का विवेचन करते हैं। रत्नमुष् शब्द के षकार के स्थान पर, **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से डकार आदेश हो जायेगा।

रत्नमुट्–ड् – रत्नमुष् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "रत्नमुष्+स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर "रत्नमुष्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७१) सूत्र से षकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "रत्नमुड्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर "रत्नमुट्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक टकार के स्थान पर डकार–टकार आदेश करने पर **"रत्नमुड्–रत्नमुट्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

रत्नमुषः – रत्नमुष् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "रत्नमुष् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"रत्नमुषः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

रत्नमुषोः – रत्नमुष् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "रत्नमुष् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"रत्नमुषोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

रत्नमुषाम् – रत्नमुष् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "रत्नमुष् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रत्नमुषाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

रत्नमुषि – रत्नमुष् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "रत्नमुष् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रत्नमुषि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

रत्नमुट्त्सु, रत्नमुट्सु – रत्नमुष् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "रत्नमुष् + सु" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "रत्नमुड् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर् "रत्नमुट् + सु" इस स्थिति में **"टात् सुप्तादिर्वा"** (२७५) सूत्र द्वारा वैकल्पिक तकार का आगम करने पर **"रत्नमुट्त्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"रत्नमुट्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

रत्नमुष् शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	रत्नमुट्–ड्	रत्नमुषौ	रत्नमुषः
सम्बोधन	हे रत्नमुट्–ड्	हे रत्नमुषौ	हे रत्नमुषः
द्वितीया	रत्नमुषम्	रत्नमुषौ	रत्नमुषः
तृतीया	रत्नमुषा	रत्नमुड्भ्याम्	रत्नमुड्भिः
चतुर्थी	रत्नमुषे	रत्नमुड्भ्याम्	रत्नमुड्भ्यः
पंचमी	रत्नमुषः	रत्नमुड्भ्याम्	रत्नमुड्भ्यः
षष्ठी	रत्नमुषः	रत्नमुषोः	रत्नमुषाम्
सप्तमी	रत्नमुषि	रत्नमुषोः	रत्नमुट्त्सु, रत्नमुट्सु

साधुतक्षौ – साधुतक्ष् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"साधुतक्षौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुतक्षः – साधुतक्ष् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"साधुतक्षः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में पूर्ववत् **"हे साधुतड्–साधुतट्", "हे साधुतक्षौ", "हे साधुतक्षः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

साधुतक्षम् – साधुतक्ष् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"साधुतक्षम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुतक्षा – साधुतक्ष् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"साधुतक्षा** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुतड्भ्याम् – साधुतक्ष् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + भ्याम्" इस स्थिति में **"संयोगादेर्धुटः"** (२७३) सूत्र से ककार का लोप कर, "साधुतष् + भ्याम्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर, डकार आदेश करने पर **"साधुतड्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुतड्भिः – साधुतक्ष् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + भिस्" इस स्थिति में **"संयोगादेर्धुटः"** (२७३) सूत्र से ककार का लोप कर, "साधुतष् + भिस्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर, डकार आदेश कर "साधुतड् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"साधुतड्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुतक्षे – साधुतक्ष् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "साधुतक्ष् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"साधुतक्षे** प्रयोग सिद्ध होता है।

साधुतक्ष् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	साधुतट्–ड्	साधुतक्षौ	साधुतक्षः
सम्बोधन	हे साधुतट्–ड्	हे साधुतक्षौ	हे साधुतक्षः
द्वितीया	साधुतक्षम्	साधुतक्षौ	साधुतक्षः
तृतीया	साधुतक्षा	साधुतड्भ्याम्	साधुतड्भिः
चतुर्थी	साधुतक्षे	साधुतड्भ्याम्	साधुतड्भ्यः
पंचमी	साधुतक्षः	साधुतड्भ्याम्	साधुतड्भ्यः
षष्ठी	साधुतक्षः	साधुतक्षोः	साधुतक्षाम्
सप्तमी	साधुतक्षि	साधुतक्षोः	साधुतट्त्सु, साधुतट्सु

षष् शब्द में भेद है। षष् शब्द के रूप भी बहुवचन में ही चलते हैं।

षट्–ड् – षष् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "षष् + अस्" इस स्थिति में **"कतेश्च जस्शसोर्लुक्"** (१७४) सूत्र से जस्–शस् का लुक् कर, "षष्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "षड्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर, "षट्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक टकार – डकार आदेश करने पर **"षड्–षट्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

षड्भिः – षष् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "षष् + भिस्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "षड् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"षड्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

षड्भ्यः – षष् शब्द से चतुर्थी–पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "षष् + भ्यस्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "षड् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"षड्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

षष् शब्द की रूपमाला यथा–

षट्–ड् षट्–ड् षट्–ड् षड्भिः षड्भ्यः षड्भ्यः षण्णाम् षट्त्सु षट्सु

अब सकारान्त पुल्लिंग शब्द में सुवचस् शब्द का विवेचन करते हैं।

सुवचाः – सुवचस् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + स्" इस स्थिति में **"अन्त्वसन्तस्य चाधातोस्सौ"** (२७६) सूत्र से दीर्घ कर, "सुवचास् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "सुवचास्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"सुवचाः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवचसौ – सुवचस् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुवचसौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवचसः – सुवचस् शब्द से प्रथमा –द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + अस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुवचसः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे सुवचः – सुवचस् शब्द से सम्बुद्धि विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "सुवचस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"हे सुवचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन पूर्ववत् **"हे सुवचसौ"** तथा बहुवचन में **"सुवचसः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

सुवचसम् – सुवचस् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुवचसम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवचसा – सुवचस् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुवचसा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवचसि – सुवचस् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुवचसि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवचस्सु, सुवचःसु – सुवचस् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + सु" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश कर, "सुवचः + सु" इस स्थिति में **"शे षे से वा वा पररूपम्"** (१०३) सूत्र द्वारा वैकल्पिक विसर्ग के स्थान पर सकार आदेश करने पर **"सुवचस्सु"** तथा **"सुवचःसु"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

सुवचस् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सुवचाः	सुवचसौ	सुवचसः
सम्बोधन	हे सुवचः	हे सुवचसौ	हे सुवचसः
द्वितीया	सुवचसम्	सुवचसौ	सुवचसः
तृतीया	सुवचसा	सुवचोभ्याम्	सुवचोभिः
चतुर्थी	सुवचसे	सुवचोभ्याम्	सुवचोभ्यः
पंचमी	सुवचसः	सुवचोभ्याम्	सुवचोभ्यः
षष्ठी	सुवचसः	सुवचसोः	सुवचसाम्
सप्तमी	सुवचसि	सुवचसोः	सुवचःसु, सुवचस्सु

इसी प्रकार चन्द्रमस्, पीतवासस्, स्थूलशिरस्, हिरण्यरेतस्, सुश्रोतस् इत्यादि शब्दों के प्रयोग जानना चाहिये।

उशनस् शब्द में भेद है।

उशनस् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर "सकार" के स्थान पर नकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.६६)विधिसूत्रम् – उशनस्पुरुदंशो नेहसां सावनन्तः।।३१७।।

उशनस् पुरुदंशस् अनेहस् इत्येतेषामन्तो न् भवति सौ परे असम्बुद्धौ। उशना। उशनसौ। उशनसः। नञा निर्दिष्टमनित्यम्।

अर्थ – सम्बुद्धि भिन्न सि परे होने पर उशनस्, पुरुदंशस् अनेहस् इन शब्दों के अन्त को अन् आदेश होता है।

इस प्रकार उशनस् शब्द को सम्बोधन के सकारान्त में **"हे उशनः**", नकारान्त में **"हे उशनन्",** अकारान्त में **हे उशन** ये तीन प्रयोग सिद्ध होते हैं।

हे उशनः – उशनस् शब्द से सम्बुद्धि विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "उशनस् + स्" इस स्थिति में **"नञा निर्दिष्टमनित्यम्"** परिभाषा के कारण अर्थात् **"उशनस्पुरुदंशो नेहसां सावनन्तः"** (३१७) सूत्र द्वारा सम्बुद्धि रहित कहा है। अर्थात् सम्बुद्धि में **"सम्बोधने तूशनसस् त्रिरूपं, सान्तं तथा नान्तमथाप्यदन्तम्। श्रीव्याघ्रभूतिप्रतिपन्नमेतन्, नञापि निर्दिष्टमनित्यमेव।।"** सूत्र द्वारा सकारान्त यथा – "उशनस् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "उशनस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"हे उशनः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे उशनन् – उशनस् शब्द से सम्बुद्धि विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "उशनस् + स्" इस स्थिति में **"नञा निर्दिष्टमनित्यम्"** परिभाषा के कारण अर्थात् **"उशनस्पुरुदंशो नेहसां सावनन्तः"** (३१७) सूत्र द्वारा सम्बुद्धि रहित कहा है। अर्थात् सम्बुद्धि में **"सम्बोधने तूशनसस् त्रिरूपं, सान्तं तथा नान्तमथाप्यदन्तम्। श्रीव्याघ्रभूतिप्रतिपन्नमेतन्, नञापि निर्दिष्टमनित्यमेव।।"** सूत्र द्वारा नकारान्त यथा – "उशनन् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर, **"न सम्बुद्धौ"** (२६०) सूत्र द्वारा निषेध होने पर **"हे उशनन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे उशन – उशनस् शब्द से सम्बुद्धि विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "उशनस् + स्" इस स्थिति में **"नञा निर्दिष्टमनित्यम्"** परिभाषा के कारण अर्थात् **"उशनस्पुरुदंशो नेहसां सावनन्तः"** (३१७) सूत्र द्वारा सम्बुद्धि रहित कहा है। अर्थात् सम्बुद्धि में **"सम्बोधने तूशनसस् त्रिरूपं, सान्तं तथा नान्तमथाप्यदन्तम्। श्रीव्याघ्रभूतिप्रतिपन्नमेतन्, नञापि निर्दिष्टमनित्यमेव।।"** सूत्र द्वारा अकारान्त यथा – "उशन + स्" इस स्थिति में **"ह्रस्वनदीश्रद्धाभ्यः सिर्लोपम्"** (१३४) सूत्र से सि का लोप कर **"हे उशन"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन एवं बहुवचन में पूर्ववत् **"हे उशनसौ"** तथा **"हे उशनसः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

उशनसम् – उशनस् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "उशनस् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"उशनसम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उशनोः – उशनस् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "उशनस् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"उशनसोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उशनसाम् – उशनस् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "उशनस् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"उशनसाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उशनसि – उशनस् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "उशनस् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"उशनसि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उशनस्सु, उशनःसु – उशनस् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "उशनस् + सु" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश कर, "उशनः + सु" इस स्थिति में **"शे षे से वा वा पररूपम्"** (१०३) सूत्र द्वारा वैकल्पिक विसर्ग के स्थान पर सकार आदेश करने पर **"उशनस्सु"** तथा **"उशनःसु"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

उशनस् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	उशना	उशनसौ	उशनसः
सम्बोधन	हे उशनः हे उशन हे उशनन्	हे उशनसौ	हे उशनसः
द्वितीया	उशनसम्	उशनसौ	उशनसः
तृतीया	उशनसा	उशनोभ्याम्	उशनोभिः
चतुर्थी	उशनसे	उशनोभ्याम्	उशनोभ्यः
पंचमी	उशनसः	उशनोभ्याम्	उशनोभ्यः
षष्ठी	उशनसः	उशनसोः	उशनसाम्
सप्तमी	उशनसि	उशनसोः	उशनस्सु, उशनःसु

विद्वांसम् – विद्वन्स् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "विद्वन्स् + अम्" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से दीर्घ कर, "विद्वान्स् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मनोरनुस्वारं धुटि"** (२५७) सूत्र से नकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश करने पर **"विद्वांसम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विद्वन्स् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, विद्वन्स् शब्द के वन्स् के वकार के स्थान पर उकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.३२६)विधिसूत्रम् – अघुट्स्वरादौ सेट्कस्यापि वन्सेर्व–शब्दस्योत्वम्।।३१८।।

सेट्कस्यापि वन्सेर्वशब्दस्योत्वं भवति अघुट्स्वरादौ। विदुषः। विदुषा।

अर्थ – अघुट्स्वरादि विभक्तियाँ परे होने पर इट् से सहित वन्स् के वकार को उकार आदेश होता है।

यहाँ विद् धातु से **"वेत्तेः शन्तुर्वन्सुः"** (१०३०) सूत्र द्वारा वन्सु प्रत्यय कर, उकार का अनुबन्ध लोप कर, **"इडागमो सार्वधातुकस्यादिव्यञ्जनादेरयकारादेः"** (७६१) सूत्र से इट् का आगम हो जाता है। इसलिये ये सेट् = अर्थात् इट् के आगम से सहित कहलाती है।

उपर्युक्त सूत्र से अकार सहित वकार के स्थान पर उकार आदेश होता है, शस् आदि अघुट्स्वर वाली विभक्ति के होने पर।

अघुट्स्वर विभक्ति – शस्, टा, ङे, ङसि, ङस्, ओस्, आम् और ङि ये अघुट्स्वर वाली विभक्तियाँ कहलाती हैं।

विदुषः – विद्वन्स् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "विद्वन्स्+अस्" इस स्थिति में **"अघुट्स्वरादौ सेट्कस्यापि वन्सेर्वशब्दस्योत्वम्"** (३१८) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "विद् उन्स् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "विदुन्स् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से नकार का लोप कर "विदुस् + अस्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्यय–विकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "विदुष् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "विदुषस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"विदुषः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विद्वद्भिः – विद्वन्स् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "विद्वन्स्+भिस्" इस स्थिति में **"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्नहिवन्सीनां च"** (३१६) सूत्र से सकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "विद्वन्द्+भिस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से नकार का लोप कर, "विद्वद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"विद्वद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विदुषे – विद्वन्स् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "विद्वन्स् + ए" इस स्थिति में **"अघुट्स्वरादौ सेट्कस्यापि वन्सेर्वशब्दस्योत्वम्"** (३१८) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "विद् उन्स् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "विदुन्स् + ए" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से नकार का लोप कर "विदुस् + ए" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्यय–विकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "विदुष् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"विदुषे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विदुषः – विद्वन्स् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "विद्वन्स् + अस्" इस स्थिति में **"अघुट्स्वरादौ सेट्कस्यापि वन्सेर्व–शब्दस्योत्वम्"** (३१८) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "विद् उन्स् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "विदुन्स् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से नकार का लोप कर "विदुस् + अस्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "विदुष् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "विदुषस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"विदुषः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विदुषोः – विद्वन्स् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "विद्वन्स् + ओस्" इस स्थिति में **"अघुट्स्वरादौ सेट्कस्यापि वन्सेर्वशब्दस्योत्वम्"** (३१८) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "विद् उन्स् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "विदुन्स् + ओस्" इस स्थिति में

विद्वन्स् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः
सम्बोधन	हे विद्वन्	हे विद्वांसौ	हे विद्वांसः
द्वितीया	विद्वांसम्	विद्वांसौ	विदुषः
तृतीया	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
चतुर्थी	विदुषे	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
पंचमी	विदुषः	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
षष्ठी	विदुषः	विदुषोः	विदुषाम्
सप्तमी	विदुषि	विदुषोः	विद्वत्सु

इसी प्रकार पेचिवन्स् शब्द के रूप चलते हैं।

पेचिवान् – पेचिवन्स् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "पेचिवन्स् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "पेचिवन्स्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से संयोगान्त सकार का लोप कर, "पेचिवन्" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से दीर्घ कर, "पेचिवान्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का भी लोप प्राप्त होने पर, **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध होने पर, **"पेचिवान्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पेचिवांसौ – पेचिवन्स् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "पेचिवन्स् + औ" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से दीर्घ कर, "पेचिवान्स् + औ" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारं धुटि"** (२५७) सूत्र से नकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश करने पर **"पेचिवांसौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पेचिवांसः – पेचिवन्स् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "पेचिवन्स् + अस्" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से दीर्घ कर, "पेचिवान्स् + अस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारं धुटि"** (२५७) सूत्र से नकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"पेचिवांसः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

षकार आदेश कर, "पेचुष् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"पेचुषा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पेचिवद्भ्याम् – पेचिवन्स् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, **"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्नहिवन्सीनां च"** (३१६) सूत्र से सकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "पेचिवन्द् + भ्याम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"**(२६१) सूत्र से नकार का लोप करने पर **"पेचिवद्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पेचिवद्भिः – पेचिवन्स् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "पेचिवन्स् + भिस्" इस स्थिति में **"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्नहिवन्सीनां च"** (३१६) सूत्र से सकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "पेचिवन्द् + भिस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"**(२६१) सूत्र से नकार का लोप कर, "पेचिवद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"पेचिवद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पेचुषे – पेचिवन्स् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "पेचिवन्स् + ए" इस स्थिति में **"अघुट्स्वरादौ सेट्कस्यापि वन्सेर्वशब्दस्योत्वम्"** (३१८) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "पेच् उन्स् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "पेचुन्स् + ए" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से नकार का लोप कर, "पेचुस् + ए" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्यय–विकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "पेचुष् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"पेचुषे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पेचुषः – पेचिवन्स् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "पेचिवन्स् + अस्" इस स्थिति में **"अघुट्स्वरादौ सेट्कस्यापि वन्सेर्वशब्दस्योत्वम्"** (३१८) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "पेच् उन्स् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "पेचुन्स् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से नकार का लोप कर, "पेचुस् + अस्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "पेचुष् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"पेचुषः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पेचिवन्स् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पेचिवान्	पेचिवांसौ	पेचिवांसः
सम्बोधन	हे पेचिवन्	हे पेचिवांसौ	हे पेचिवांसः
द्वितीया	पेचिवांसम्	पेचिवांसौ	पेचुषः
तृतीया	पेचुषा	पेचिवद्भ्याम्	पेचिवद्भिः
चतुर्थी	पेचुषे	पेचिवद्भ्याम्	पेचिवद्भ्यः
पंचमी	पेचुषः	पेचिवद्भ्याम्	पेचिवद्भ्यः
षष्ठी	पेचुषः	पेचुषोः	पेचुषाम्
सप्तमी	पेचुषि	पेचुषोः	पेचिवत्सु

इसी प्रकार तेनिवन्स् आदि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

उखास्रस् शब्द में भेद है।

उखास्रस् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, सकार के स्थान पर दकार आदेश करने के लिए अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१८७)विधिसूत्रम् – स्रसिध्वसोश्च।।३२०।।

स्रसिध्वसोर्लिङ्गयोरन्तस्य दो भवति विरामे व्यञ्जनादौ च। उखास्रत् उखास्रद्।

अर्थ – विराम अथवा व्यञ्जनादि परे होने पर स्रस् और ध्वस् लिंग के अन्त को दकार आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्नहिवन्सीनां च"** (३१६) सूत्र की तथा **"अपां भे दः"** (३३८) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

उखास्रत्–द् – "उखास्रस् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "उखास्रस् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "उखास्रस्" इस स्थिति में **"स्रसिध्वसोश्च"** (३२०) सूत्र से सकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "उखासद्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से दकार के स्थान पर तकार आदेश कर, "उखासत्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार अथवा तकार आदेश होने पर, **"उखास्रत्–द्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

उखास्रसः – "उखास्रस् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "उखास्रस् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"उखास्रसः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उखास्रसा – "उखास्रस् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "उखास्रस् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"उखास्रसा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उखास्रद्भ्याम् – "उखास्रस् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "उखास्रस् + भ्याम्" इस स्थिति में **"स्रसिध्वसोश्च"** (३२०) सूत्र से सकार के स्थान पर दकार आदेश करने पर **"उखास्रद्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उखास्रद्भिः – "उखास्रस् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "उखास्रस् + भिस्" इस स्थिति में **"स्रसिध्वसोश्च"** (३२०) सूत्र से सकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "उखास्रद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"उखास्रद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उखास्रसे – "उखास्रस् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "उखास्रस् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"उखास्रसे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उखास्रद्भ्यः – "उखास्रस् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "उखास्रस् + भ्यस्" इस स्थिति में **"स्रसिध्वसोश्च"** (३२०) सूत्र से सकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "उखास्रद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"उखास्रद्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उखास्रसः – "उखास्रस् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "उखास्रस् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"उखास्रसः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उखास्रसोः – "उखास्रस् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "उखास्रस् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"उखास्रसोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की तथा **"दो द्वेर्मः"** (३०५) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

अर्थात् त्यद् आदि शब्दों में द्वि शब्द तथा अदस् शब्द में ही दकार वर्ण है। द्वि शब्द द्विवचनान्त होने से सि विभक्ति आयेगी ही नहीं। अतः मात्र अदस् शब्द के दकार के स्थान पर सि विभक्ति के होने पर, सकार आदेश होगा।

"अद + स्" यहाँ उपर्युक्त सूत्र से दकार के स्थान पर सकार आदेश होने पर, "अस + स्" इस स्थिति में अदस् शब्द के अन्तिम अकार के स्थान पर औकार आदेश तथा सि का लोप करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१८२)विधिसूत्रम् – सावौ सिलोपश्च।।३२३।।

अदसो न्तस्य और्भवति सौ परे सिलोपश्च। असौ। द्वित्वे –

अर्थ – सि परे होने पर अदस् शब्द के अन्त को औकार आदेश तथा सि का लोप होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"अदसश्च"** (३२८) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

"अस + स्" में अकार अन्त में है अतः अकार के स्थान पर औ तथा सि का लोप, एक साथ दो कार्य होते हैं। दोनों कार्य करने पर **"असौ"** रूप सिद्ध होता है।

असौ – अदस् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "अदस् + स्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + स्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + स्" इस स्थिति में **"सौ सः"** (३२२) सूत्र से दकार के स्थान पर सकार आदेश कर, "अस + स्" इस स्थिति में **"सावौ सिलोपश्च"** (३२३) सूत्र से अदस् शब्द के अन्त को औकार आदेश तथा सि का लोप करने पर, **"असौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदस् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, दकार के स्थान पर मकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१२२)विधिसूत्रम् – अदसः पदे मः।।३२४।।

अदसः पदे सति दस्य मो भवति विभक्तौ।

अर्थ – अदस् शब्द के विभक्ति पद होने पर दकार के स्थान पर मकार आदेश होता है।

अदस् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "अदस् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + अस्" इस स्थिति में **"जस् सर्व ईः"** (१५२) सूत्र से जस् के स्थान पर इकार आदेश कर, "अद + इ" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्णे ए"** (२७) सूत्र द्वारा सन्धि कर, "अदे" इस स्थिति में अदस् शब्द के बहुवचन में स्थित एकार के स्थान पर ईकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१८४)विधिसूत्रम् – एद्बहुत्वे त्वी।।३२६।।

अदसो मात्परो बहुत्वे निष्पन्ने एदीर्भवति। अमी। अमुम्। अमू। अमून्।

अर्थ – बहुवचन में निष्पन्न अदस् शब्द के मकार से परे एकार के स्थान पर "ईकार" आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"अदसश्च"** (३२८) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

भावार्थ – अदस् शब्द सम्बन्धी बहुवचन में एकार के स्थान पर ईकार आदेश होता है। अदस् शब्द में विभक्ति कार्य करने पर ही एकार प्राप्त होगा। अतः प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में अदे, तृतीया विभक्ति के बहुवचन में अदे, चतुर्थी विभक्ति के बहुवचन में अदे, पंचमी विभक्ति के बहुवचन में अदे, षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में अदे तथा सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में अदे, विभक्ति कार्य होने पर ही एकार के स्थान पर, उपर्युक्त स्थलों पर एकार के स्थान पर ईकार आदेश हो जायेगा। उपर्युक्त विभक्ति कार्य क्रमशः सिद्ध करेंगे।

अमी – अदस् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "अदस् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + अस्" इस स्थिति में **"जस् सर्व ईः"** (१५२) सूत्र से जस् के स्थान पर इकार आदेश कर, "अद + इ" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्णे ए"** (२७) सूत्र द्वारा सन्धि कर, "अदे" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमे" यह बहुवचन में निष्पन्न होने से, **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"एद्बहुत्वे त्वी"** (३२६) सूत्र से एकार के स्थान पर ईकार आदेश करने पर **"अमी"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुम् – अदस् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर "अदस् + अम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर

शंका – अदस् के स्थान पर अमु आदेश क्यों किया ?

समाधान – अदस् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "अदस् + आ" इस स्थिति में त्यदादि कार्य कर, "अद + आ" इस स्थिति में **"इन टा"** (१३८) सूत्र से टा के स्थान पर इन आदेश होगा। "अद + इन" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्ण ए"** (२७) सूत्र से सन्धि करने पर, "अदेन" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर तथा **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से एकार के स्थान पर ऊकार आदेश हो कर, **"अमून"** अशुद्ध प्रयोग सिद्ध होता। इसलिये अदस् के स्थान पर अमु आदेश तथा टा के स्थान पर ना आदेश किया है।

अमुना – अदस् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "अदस् + आ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + आ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + आ" इस स्थिति में **"अदो मुश्च"** (३२७) सूत्र से अद के अकार के स्थान पर अमु आदेश तथा टा के स्थान पर ना आदेश करने पर **"अमुना"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमूभ्याम् – अदस् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "अदस् + भ्याम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से अद के अकार को दीर्घ आकार कर, "अदा + भ्याम्" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमा + भ्याम्" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से आकार के स्थान पर ऊकार आदेश हो कर, **"अमूभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदस् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, भिस् के स्थान पर भिर् आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१८१)विधिसूत्रम् – अदसश्च ।।३२८।।

अदसो ग्वर्जितात्परो भिस् भिर् भवति। धुट्येत्वम्। अमीभिः। अमुष्मै। अमूभ्याम्। अमीभ्यः। अमुष्यात्। अमूभ्याम्। अमीभ्यः। अमुष्य। अमुयोः। अमीषाम्। अमुष्मिन्। अमुयोः। अमीषु।। श्रेयन्स् शब्दस्य तु भेदः।। श्रेयान्। श्रेयांसौ। श्रेयांसः। हे श्रेयन्। हे श्रेयांसौ। हे श्रेयांसः। श्रेयांसम्। श्रेयांसौ। श्रेयसः। श्रेयसा। श्रेयोभ्याम्। श्रेयोभिः। पुमन्स् शब्दस्य तु भेदः। पुमान्। पुमांसौ। पुमांसः। हे पुमन्। पुमांसम्। पुमांसौ।

अर्थ – अक् रहित अदस् शब्द से परे भिस् के स्थान पर भिर् आदेश होता है।

अमीभ्यः – अदस् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "अदस् + भ्यस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद+भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "अदे+भ्यस्" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमे+भ्यस्" इस स्थिति में **"एद्बहुत्वे त्वी"** (३२६) सूत्र से एकार के स्थान पर ईकार आदेश कर, "अमीभ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र द्वारा सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"अमीभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुष्मात् – अदस् शब्द से पञ्चमी विभक्ति के एकवचन में ङसि विभक्ति के आने पर, "अदस् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + अस्" इस स्थिति में **"ङसि स्मात्"** (१५४) सूत्र से ङसि के स्थान पर स्मात् आदेश कर, "अद + स्मात्" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अम + स्मात्" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमु + स्मात्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्यय–विकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र द्वारा सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"अमुष्मात्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुष्य – अदस् शब्द से षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङस् विभक्ति के आने पर, "अदस् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अदस् + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + अस्" इस स्थिति में **"ङस् स्यः"** (१४५) सूत्र से ङस् के स्थान पर स्य आदेश कर, "अद + स्य" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अम + स्य" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमु + स्य" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र द्वारा सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"अमुष्य"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमीषु – अदस् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "अदस् + सु" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + सु" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "अदे + सु" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमे + सु" इस स्थिति में **"एद्बहुत्वे त्वी"** (३२६) सूत्र से एकार के स्थान पर ईकार आदेश कर, "अमी + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्यय–विकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र द्वारा सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"अमीषु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदस् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	असौ	अमू	अमीः
सम्बोधन	हे असौ	हे अमू	हे अमीः
द्वितीया	अमुम्	अमू	अमून्
तृतीया	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
चतुर्थी	अमुष्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
पंचमी	अमुष्मात्	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
षष्ठी	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
सप्तमी	अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु

श्रेयन्स् शब्द में भेद है।

श्रेयान् – श्रेयन्स् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में "सि" विभक्ति के आने पर, "श्रेयन्स् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "श्रेयन्स्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५८) सूत्र से सकार का लोप कर, "श्रेयन्" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से अकार के स्थान पर दीर्घ आकार आदेश कर, "श्रेयान्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध कर **"श्रेयान्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

श्रेयसा – श्रेयन्स् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "श्रेयन्स् + आ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "श्रेयस् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"श्रेयसा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

श्रेयोभ्याम् – श्रेयन्स् शब्द से तृतीया–चतुर्थी–पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "श्रेयन्स् + भ्याम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "श्रेयस् + भ्याम्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश कर, "श्रेयः + भ्याम्" इस स्थिति में **"अघोषवतोश्च"** (१०५) सूत्र से विसर्ग के स्थान पर उकार आदेश कर, "श्रेय उ + भ्याम्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से अकार के स्थान पर ओकार तथा उकार का लोप करने पर, **"श्रेयोभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

श्रेयोभिः – श्रेयन्स् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "श्रेयन्स् + भिस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "श्रेयस् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश कर, "श्रेयः + भिस्" इस स्थिति में **"अघोषवतोश्च"** (१०५) सूत्र से विसर्ग के स्थान पर उकार आदेश कर, "श्रेय उ + भिस्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से अकार के स्थान पर ओकार तथा उकार का लोप कर, "श्रेयोभिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"श्रेयोभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

श्रेयसे – श्रेयन्स् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "श्रेयन्स् + ए" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "श्रेयस् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"श्रेयसे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

श्रेयोभ्यः – श्रेयन्स् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "श्रेयन्स् + भ्यस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंग सञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "श्रेयस् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश कर, "श्रेयः + भ्यस्" इस स्थिति में **"अघोषवतोश्च"** (१०५) सूत्र से विसर्ग के स्थान पर उकार आदेश कर, "श्रेय उ + भ्यस्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से अकार के स्थान पर ओकार तथा उकार का लोप कर, "श्रेयोभ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"श्रेयोभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

श्रेयन्स् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	श्रेयान्	श्रेयांसौ	श्रेयांसः
सम्बोधन	हे श्रेयन्	हे श्रेयांसौ	हे श्रेयांसः
द्वितीया	श्रेयांसम्	श्रेयांसौ	श्रेयसः
तृतीया	श्रेयसा	श्रेयोभ्याम्	श्रेयोभिः
चतुर्थी	श्रेयसे	श्रेयोभ्याम्	श्रेयोभ्यः
पंचमी	श्रेयसः	श्रेयोभ्याम्	श्रेयोभ्यः
षष्ठी	श्रेयसः	श्रेयसोः	श्रेयसाम्
सप्तमी	श्रेयसि	श्रेयसोः	श्रेयस्सु, श्रेयःसु

पुमन्स् शब्द में भेद है।

पुमान् – पुमन्स् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "पुमन्स् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "पुमन्स्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से सकार का लोप कर, "पुमन्" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से अकार के स्थान पर दीर्घ आकार आदेश कर, "पुमान्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर, **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से निषेध होने पर **"पुमान्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पुमांसौ – पुमन्स् शब्द से प्रथमा द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "पुमन्स् + औ" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से अकार के स्थान पर दीर्घ आकार आदेश कर, "पुमान्स् + औ" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र द्वारा नकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "पुमांस् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"पुमांसौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पुमांसः – पुमन्स् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "पुमन्स् + अस्" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से अकार के स्थान पर दीर्घ आकार आदेश कर, "पुमान्स् + अस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र द्वारा नकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "पुमांस् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "पुमांसस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"पुमांसः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पुंसः – पुमन्स् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "पुमन्स् + अस्" इस स्थिति में **"पुंसो न्शब्दलोपः"** (३२६) सूत्र से पुमन्स् के अन् का लोप कर, "पुम्स् + अस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से मकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "पुंस् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"पुंसः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पुंसा – पुमन्स् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "पुमन्स् + आ" इस स्थिति में **"पुंसो न्शब्दलोपः"** (३२६) सूत्र से पुमन्स् के अन् का लोप कर, "पुम्स् + आ" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से मकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "पुंस् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"पुंसा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पुमन्स् शब्द से भ्याम् आदि विभक्तियों के आने पर पदान्तवत् कार्य करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(०००)विधिसूत्रम् – स्यादिधुटि पदान्तवत्।।३३०।।

स्यादिधुटि परे पदान्तवत्कार्यं भवति। इति न्यायात्। मो नुस्वारं व्यञ्जने। पुंभ्याम्। पुंभिः। इत्यादि। इति सकारान्ताः। हकारान्तः पुल्लिङ्गो मधुलिह् शब्दः। मधुलिट्, मधुलिड्। मधुलिहौ। मधुलिहः। सम्बोधने पि तद्वत्। मधुलिट्सु। एवं पुष्पलिह् इत्यादि। गोदुह् शब्दस्य तु भेदः। हचतुर्थान्तस्य धातोरित्यादिना चतुर्थत्वम्।

अर्थ – सि आदि धुट् परे होने पर पदान्तवत् कार्य होता है।

भावार्थ – सि, औ, जस् इत्यादि विभक्तियाँ सि आदि कहलाती हैं।

धुट् संज्ञक वर्ण – क्, ख्, ग्, घ्। च्, छ्, ज्, झ्। ट्, ठ्, ड्, ढ्। त्, थ्, द्, ध्। प्, फ्, ब्, भ्। श्, ष्, स् ह्। ये चौबीस वर्ण धुट्सञ्ज्ञक कहलाते हैं।

सि भ्याम् भिस् भ्यस् और सुप् ये धुट् वाली विभक्तियाँ हैं।

पदान्तवत् कार्य कहने से **"वर्गे तद्वर्गपञ्चमं वा"** (६३) सूत्र द्वारा मकार को विकल्प से पंचम अक्षर मकार होगा। मकार के अभाव में **"मो नुस्वारं व्यञ्जने"** (६१) सूत्र से अनुस्वार होगा।

पुंसः – पुमन्स् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "पुमन्स् + अस्" इस स्थिति में **"पुंसो न्शब्दलोपः"** (३२६) सूत्र से पुमन्स् के अन् का लोप कर "पुम्स् + अस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से मकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "पुंस् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"पुंसः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पुंसोः – पुमन्स् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "पुमन्स् + ओस्" इस स्थिति में **"पुंसो न्शब्दलोपः"** (३२६) सूत्र से पुमन्स् के अन् का लोप कर, "पुम्स् + ओस्" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से मकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "पुंस् + ओस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"पुंसोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पुंसि – पुमन्स् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "पुमन्स् + इ" इस स्थिति में **"पुंसो न्शब्दलोपः"** (३२६) सूत्र से पुमन्स् के अन् का लोप कर, "पुम्स् + इ" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से मकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश करने पर **"पुंसि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पुम्सु, पुंसु – पुमन्स् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "पुमन्स् + सु" इस स्थिति में **"पुंसो न्शब्दलोपः"** (३२६) सूत्र से अन् का लोप कर, "पुम्स् + सु" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से सकार का लोप कर, "पुम् + सु" इस स्थिति में **"मो नुस्वारं व्यञ्जने"** (६१) सूत्र से नित्य अनुस्वार की प्राप्ति थी परन्तु **"स्यादिधुटि पदान्तवत्"** (३३०) सूत्र से पदान्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"पुम्सुः"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"पुंसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पुमन्स् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	पुमान्	पुमांसौ	पुमांसः
सम्बोधन	हे पुमन्	हे पुमांसौ	हे पुमांसः
द्वितीया	पुमांसम्	पुमांसौ	पुंसः
तृतीया	पुंसा	पुंभ्याम्, पुम्भ्याम्	पुंभिः, पुम्भिः
चतुर्थी	पुंसे	पुंभ्याम्, पुम्भ्याम्	पुंभ्यः, पुम्भ्यः
पंचमी	पुंसः	पुंभ्याम्, पुम्भ्याम्	पुंभ्यः, पुम्भ्यः
षष्ठी	पुंसः	पुंसोः	पुंसाम्
सप्तमी	पुंसि	पुंसोः	पुंसु, पुम्सु

।। इस प्रकार सकारान्त शब्द का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

मधुलिहे – मधुलिह् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "मधुलिह् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मधुलिहे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मधुलिड्भ्यः – मधुलिह् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "मधुलिह् + भ्यस्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से हकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "मधुलिड् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"मधुलिड्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मधुलिहः – मधुलिह् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "मधुलिह् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"मधुलिहः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मधुलिहोः – मधुलिह् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "मधुलिह् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"मधुलिहोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मधुलिहि – मधुलिह् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "मधुलिह् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मधुलिहि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मधुलिट्त्सु – मधुलिह् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने के पर, "मधुलिह् + सु" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से हकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "मधुलिड् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर, "मधुलिट् + सु" इस स्थिति में **"टात् सुप्तादिर्वा"** (२७५) सूत्र द्वारा वैकल्पिक तकार का आगम करने पर **"मधुलिट्त्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"मधुलिट्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

जहाँ हकार के स्थान पर गकार आदेश होगा वहाँ **"हचतुर्थान्तस्य धातोस्तृतीयादे–रादिचतुर्थत्वमकृतवत्"** (२९६) सूत्र से दकार के स्थान पर धकार आदेश भी हो जायेगा।

गोधुक्–ग् – गोदुह् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, गोदुह् + स् इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र की प्राप्ति थी, परन्तु **"दादेर्हस्य गः"** (३३१) सूत्र से हकार के स्थान पर गकार आदेश कर, गोदुग् + स् इस स्थिति में **"हचतुर्थान्तस्य धातोस्तृतीयादेरादिचतुर्थत्वमकृतवत्"** (२९६) सूत्र से दकार के स्थान पर धकार आदेश कर, गोधुग् + स् इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "गोधुग्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "गोधुक्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से ककार के स्थान पर ककार अथवा गकार आदेश हो कर **"गोधुक्–ग्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

गोदुहौ – गोदुह् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, गोदुह् + औ इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"गोदुहौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

गोदुहः – गोदुह् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, गोदुह् + अस् इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"गोदुहः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बुद्धि में पूर्ववत् **"हे गोधुक्–ग्", "हे गोदुहौ", "हे गोदुहः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

गोदुहम् – गोदुह् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, गोदुह् + अम् इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"गोदुहम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

गोदुहा – गोदुह् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, गोदुह् + आ इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"गोदुहा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

गोधुग्भ्याम् – गोदुह् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, गोदुह् + भ्याम् इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र की प्राप्ति थी, परन्तु **"दादेर्हस्य गः"** (३३१) सूत्र से हकार के स्थान पर गकार आदेश कर, गोदुग्+भ्याम् इस स्थिति में **"हचतुर्थान्तस्य धातोस्तृतीयादेरादिचतुर्थत्वमकृतवत्"** (२९६) सूत्र से दकार के स्थान पर धकार आदेश करने पर **"गोधुग्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

गोधुक्षु – गोदुह् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "गोदुह् + सु" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र की प्राप्ति थी, परन्तु **"दादेर्हस्य गः"** (३३१) सूत्र से हकार के स्थान पर गकार आदेश कर, गोदुग् + सु इस स्थिति में **"हचतुर्थान्तस्य धातोस्तृतीयादेरादिचतुर्थत्वमकृतवत्"** (२६६) सूत्र से दकार के स्थान पर धकार आदेश कर, "गोधुग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "गोधुक् + सु" इस स्थिति में **"कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा"** (२५६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर खकार आदेश करने पर, **"गोधुख्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है। खकार आदेश के अभाव में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "गोधुक् + षु" इस स्थिति में **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र की सहायता से **"गोधुक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

गोदुह् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	गोधुक्–ग्	गोदुहौ	गोदुहः
सम्बोधन	हे गोधुक्–ग्	हे गोदुहौ	हे गोदुहः
द्वितीया	गोदुहम्	गोदुहौ	गोदुहः
तृतीया	गोदुहा	गोधुग्भ्याम्	गोधुग्भिः
चतुर्थी	गोदुहे	गोधुग्भ्याम्	गोधुग्भ्यः
पंचमी	गोदुहः	गोधुग्भ्याम्	गोधुग्भ्यः
षष्ठी	गोदुहः	गोदुहोः	गोदुहाम्
सप्तमी	गोदुहि	गोदुहोः	गोधुक्षु

मुह् (मोह करने वाला) शब्द में भेद है। यहाँ मुह् शब्द हकारान्त होने से **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र की प्राप्ति थी, परन्तु मुह् के हकार के स्थान पर अग्रिम सूत्र द्वारा वैकल्पिक गकार आदेश होगा।

मुहः – मुह् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "मुह् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"मुहः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मुहम् – मुह् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "मुह् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मुहम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मुहा – मुह् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "मुह् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मुहा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मुग्भ्याम्, मुड्भ्याम् – मुह् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "मुह् + भ्याम्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से हकार के स्थान पर डकार आदेश की प्राप्ति होने पर, **"मुहादीनां वा"** (३३२) सूत्र द्वारा हकार के स्थान पर वैकल्पिक गकार आदेश करने पर **"मुग्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से हकार के स्थान पर डकार आदेश करने पर, **"मुड्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मुग्भिः, मुड्भिः – मुह् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "मुह् + भिस्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से हकार के स्थान पर डकार आदेश की प्राप्ति होने पर, **"मुहादीनां वा"** (३३२) सूत्र द्वारा हकार के स्थान पर वैकल्पिक गकार आदेश कर, "मुग् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"मुग्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से हकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "मुड् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"मुड्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मुहे – मुह् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "मुह् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मुहे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मुट्त्सु, मुट्सु – मुह् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने के पर, "मुह् + सु" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से हकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "मुड् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर, "मुट् + सु" इस स्थिति में **"टात् सुप्तादिर्वा"** (२७५) सूत्र द्वारा वैकल्पिक तकार का आगम करने पर **"मुट्त्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"मुट्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मुह् (मोह करने वाला) शब्द की गकार पक्ष में रूपमाला यथा –

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मुक्–मुग्	मुहौ	मुहः
सम्बोधन	हे मुक्–मुग्	हे मुहौ	हे मुहः
द्वितीया	मुहम्	मुहौ	मुहः
तृतीया	मुहा	मुग्भ्याम्	मुग्भिः
चतुर्थी	मुहे	मुग्भ्याम	मुग्भ्यः
पंचमी	मुहः	मुग्भ्याम्	मुग्भ्यः
षष्ठी	मुहः	मुहोः	मुहाम्
सप्तमी	मुहि	मुहोः	मुख्सु, मुक्षु

मुह् (मोह करने वाला) शब्द की डकार पक्ष में रूपमाला यथा –

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मुट्–मुड्	मुहौ	मुहः
सम्बोधन	हे मुट्–मुड्	हे मुहौ	हे मुहः
द्वितीया	मुहम्	मुहौ	मुहः
तृतीया	मुहा	मुड्भ्याम्	मुड्भिः
चतुर्थी	मुहे	मुड्भ्याम्	मुड्भ्यः
पंचमी	मुहः	मुड्भ्याम्	मुड्भ्यः
षष्ठी	मुहः	मुहोः	मुहाम्
सप्तमी	मुहि	मुहोः	मुट्सु, मुट्त्सु

प्रष्ठवाहौ – प्रष्ठवाह् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "प्रष्ठवाह् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्रष्ठवाहौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रष्ठवाहः – प्रष्ठवाह् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "प्रष्ठवाह् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"प्रष्ठवाहः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रष्ठवाहम् – प्रष्ठवाह् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "प्रष्ठवाह् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्रष्ठवाहम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रष्ठवाह् शब्द से शस् आदि अघुट् स्वर वाली विभक्ति के आने पर "वाह्" शब्द के "वा" के स्थान पर "औ" आदेश करने के लिए अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१२५)विधिसूत्रम् – वाहेर्वाशब्दस्यौत्वम्।।३३३।।

वाहेर्वाशब्दस्यौत्वं भवति अघुट्स्वरे परे। प्रष्ठौहः। प्रष्ठौहा। प्रष्ठवाड्भ्याम्। प्रष्ठवाड्भिः। प्रष्ठवाट्सु। इत्यादि। अनड्वाह् शब्दस्य तु भेदः। सौ –

अर्थ – अघुट् स्वर परे होने पर, वाह् शब्द के वा के स्थान पर "औ" आदेश होता है।

यहाँ "वा" के स्थान पर "ओ" अथवा औ आदेश होगा।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"अघुट्स्वरादौ सेट्कस्यापि वन्सेर्वशब्दस्योत्वम्"** (३१८) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

अघुट्स्वर विभक्तियाँ – शस्, टा, ङे, ङसि, ङस्, ओस्, आम्, ङि ये अघुट्स्वर वाली विभक्तियाँ कहलाती हैं। इन विभक्तियों के होने पर, वाह् शब्द के वा के स्थान पर "औ" आदेश होता है।

प्रष्ठवाह् शब्द से "वा" के स्थान पर औ आदेश हो कर "प्रष्ठ + औह् + अस्" यहाँ **"ओकारे औ औकारे च"** (४०) सूत्र से सन्धि कर तथा **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्रष्ठौहः"** आदि रूप सिद्ध होते हैं।

प्रष्ठौहः – प्रष्ठवाह् शब्द से पञ्चमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में "ङसि–ङस्" विभक्ति के आने पर, "प्रष्ठवाह् + अस्" इस स्थिति में **"वाहेर्वाशब्दस्यौत्वम्"** (३३३) सूत्र से वा के स्थान पर "औ" आदेश कर, "प्रष्ठ औ ह् + अस्" इस स्थिति में **"ओकारे औ औकारे च"** (४०) सूत्र से सन्धि कर, "प्रष्ठौह् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"प्रष्ठौहः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रष्ठौहोः – प्रष्ठवाह् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में "ओस्" विभक्ति के आने पर, "प्रष्ठवाह् + ओस्" इस स्थिति में **"वाहेर्वाशब्दस्यौत्वम्"** (३३३) सूत्र से वा के स्थान पर "औ" आदेश कर, "प्रष्ठ औ ह् + ओस्" इस स्थिति में **"ओकारे औ औकारे च"** (४०) सूत्र से सन्धि कर, "प्रष्ठौह् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"प्रष्ठौहोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रष्ठौहाम् – प्रष्ठवाह् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "प्रष्ठवाह् + आम्" इस स्थिति में **"वाहेर्वाशब्दस्यौत्वम्"** (३३३) सूत्र से वा के स्थान पर "औ" आदेश कर, "प्रष्ठ औ ह् + आम्" इस स्थिति में **"ओकारे औ औकारे च"** (४०) सूत्र से सन्धि कर, "प्रष्ठौह् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्रष्ठौहाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रष्ठौहि" – प्रष्ठवाह् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में "ङि" विभक्ति के आने पर, "प्रष्ठवाह् + इ" इस स्थिति में **"वाहेर्वाशब्दस्यौत्वम्"** (३३३) सूत्र से वा के स्थान पर "औ" आदेश कर, "प्रष्ठ औ ह् + इ" इस स्थिति में **"ओकारे औ औकारे च"** (४०) सूत्र से सन्धि कर, "प्रष्ठौह् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्रष्ठौहि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रष्ठवाट्त्सु, प्रष्ठवाट्सु – प्रष्ठवाह् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "प्रष्ठवाह् + सु" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से हकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "प्रष्ठवाड् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर, "प्रष्ठवाट् + सु" इस स्थिति में **"टात् सुप्तादिर्वा"** (२७५) सूत्र द्वारा वैकल्पिक तकार का आगम करने पर **"प्रष्ठवाट्त्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"प्रष्ठवाट्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनड्वाहः – अनड्वाह् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "अनड्वाह् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"अनड्वाहः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनड्वाह् शब्द से सम्बोधन के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर "अनड्वाह्" शब्द को ह्रस्व आदेश करने के लिए अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१२१)विधिसूत्रम् – सम्बुद्धावुभयोर्ह्रस्वः।।३३५।।

चतुरनडुहोरुभयोः सम्बुद्धौ ह्रस्वो भवति। हे अनड्वन्। अनड्वाहम्। अनड्वाहौ। हे प्रियचत्वः।

अर्थ – सम्बुद्धि परे होने पर चत्वार् और अनड्वाह् शब्द को ह्रस्व होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"चतुरो वाशब्दस्योत्वम्"** (३०६) सूत्र की तथा **"अनहुहश्च"** (३३६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

हे अनड्वन् – अनड्वाह् शब्द से सम्बुद्धि विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "अनड्वाह् + स्" इस स्थिति में **"सौ नुः"** (३३४) सूत्र से अनड्वाह् शब्द के हकार के पूर्व नु का आगम कर, "अनड्वा न् ह् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "अनड्वान्ह्" इस स्थिति में **"संयोगान्तस्य लोपः"** (२५६) सूत्र से हकार का लोप कर, "अनड्वान्" इस स्थिति में **"सम्बुद्धावुभयोर्ह्रस्वः"** (३३५) सूत्र से वकार के आकार के स्थान पर ह्रस्व अकार आदेश कर, "अनड्वन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर, **"न सम्बुद्धौ"** (२६०) सूत्र द्वारा निषेध होने पर **"अनड्वन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन तथा बहुवचन में पूर्ववत्, **"हे अनड्वाहौ", "हे अनड्वाहः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

अनड्वाहम् – अनड्वाह् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "अनड्वाह् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अनड्वाहम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनडुद्भ्याम् – अनड्वाह् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "अनड्वाह् + भ्याम्" इस स्थिति में **"अनडुहश्च"** (३३६) सूत्र से वा के स्थान पर उकार आदेश कर, "अनड् उह् + भ्याम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्नहिवन्सीनां च"** (३१६) सूत्र से हकार के स्थान पर दकार आदेश करने पर, **"अनडुद्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनडुद्भिः – अनड्वाह् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "अनड्वाह् + भिस्" इस स्थिति में **"अनडुहश्च"** (३३६) सूत्र से वा के स्थान पर उकार आदेश कर, "अनड् उह् + भिस्" इस स्थिति में **"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्नहिवन्सीनां च"** (३१६) सूत्र से हकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "अनड् उद् + भिस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अनडुद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनडुहे – अनड्वाह् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "अनड्वाह् + ए" इस स्थिति में **"अनडुहश्च"** (३३६) सूत्र से वा के स्थान पर उकार आदेश कर, "अनड् उह् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अनडुहे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनडुद्भ्यः – अनड्वाह् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "अनड्वाह् + भ्यस्" इस स्थिति में **"अनडुहश्च"** (३३६) सूत्र से वा के स्थान पर उकार आदेश कर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "अनडुह् + भ्यस्" इस स्थिति में **"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्नहिवन्सीनां च"** (३१६) सूत्र से हकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "अनडुद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अनडुद्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनडुहः – अनड्वाह् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "अनड्वाह् + अस्" इस स्थिति में **"अनडुहश्च"** (३३६) सूत्र से वा के स्थान पर उकार आदेश कर, "अनड् उह् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"अनडुहः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्रियें हैं चार जिसे ऐसा व्यक्ति **"प्रियचत्वार्"** कहलाता है। चत्वार् शब्द का प्रिया शब्द से समास हो जाने के कारण **"प्रियचत्वार्"** शब्द के रूप तीनों वचनों में चलेंगे।

"सम्बुद्धावुभयोर्ह्रस्वः" (३३५) सूत्र से सम्बुद्धि में ह्रस्व का उल्लेख होने के कारण पृथक् से कथन किया है।

घुट् आदि विभक्तियों में **"चतुरो वाशब्दस्योत्वम्"** (३०६) सूत्र से वा के स्थान पर उकार आदेश हो कर **"प्रियचतुरः"** इत्यादि प्रयोग सिद्ध होंगे।

प्रियचत्वार् शब्द की रूपमाला यथा –

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	प्रियचत्वाः	प्रियचत्वारौ	प्रियचत्वारः
सम्बोधन	हे प्रियचत्वः	हे प्रियचत्वारौ	हे प्रियचत्वारः
द्वितीया	प्रियचत्वारम्	प्रियचत्वारौ	प्रियचतुरः
तृतीया	प्रियचतुरा	प्रियचतुर्भ्याम्	प्रियचतुर्भिः
चतुर्थी	प्रियचतुरे	प्रियचतुर्भ्याम्	प्रियचतुर्भ्यः
पंचमी	प्रियचतुरः	प्रियचतुर्भ्याम्	प्रियचतुर्भ्यः
षष्ठी	प्रियचतुरः	प्रियचतुरोः	प्रियचतुर्णाम्
सप्तमी	प्रियचतुरि	प्रियचतुरोः	प्रियचतुर्षु

।। इस प्रकार व्यञ्जनान्त पुल्लिंग शब्द का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

❑ ❑ ❑

त्वग्भ्याम् – त्वच् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "त्वच् + भ्याम्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश करने पर, **"त्वग्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्वग्भिः – त्वच् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "त्वच् + भिस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "त्वग् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"त्वग्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्वचे – त्वच् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "त्वच् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"त्वचे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्वग्भ्यः – त्वच् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "त्वच् + भ्यस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "त्वग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"त्वग्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्वचः – त्वच् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "त्वच् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"त्वचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्वचोः – त्वच् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "त्वच् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"त्वचोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्वचाम् – त्वच् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "त्वच् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"त्वचाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्वचि – त्वच् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "त्वच् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"त्वचि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वाचः – वाच् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "वाच् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"वाचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी इसी प्रकार **हे वाक्–ग्, हे वाचौ, हे वाचः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

वाचम् – वाच् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "वाच् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"वाचम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वाचा – वाच् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "वाच् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"वाचा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वाग्भ्याम् – वाच् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "वाच् + भ्याम्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश करने पर, **"वाग्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वाग्भिः – वाच् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "वाच् + भिस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "वाग् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"वाग्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वाचे – वाच् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "वाच् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"वाचे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वाग्भ्यः – वाच् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "वाच् + भ्यस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "वाग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"वाग्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वाचः – वाच् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "वाच् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"वाचः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

छकारान्तो प्रसिद्धः।

स्त्रीलिंग में छकारान्त शब्द अप्रसिद्ध हैं।

जकारान्तः स्त्रीलिङ्गः स्रज्शब्दः। स्रट् स्रड्। स्रजौ। स्रजः। स्रट्त्सु। इत्यादि।

अब व्यञ्जनान्त स्त्रीलिंग में जकारान्त स्रज् शब्द का विवेचन करते हैं। स्रज् शब्द यजादि के अन्तर्गत होने से **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से जकार के स्थान पर डकार आदेश हो कर **"स्रट्–ड्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

स्रट्, स्रड् – स्रज् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "स्रज् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "स्रज्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से जकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "स्रड्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर, "स्रट्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा टकार के स्थान पर, वैकल्पिक – टकार – डकार आदेश करने पर "स्रट्–ड्" प्रयोग सिद्ध होता है।

स्रजौ – स्रज् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "स्रज् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"स्रजौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

स्रजः – स्रज् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "स्रज् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"स्रजः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी इसी प्रकार **हे स्रट्, स्रड्, हे स्रजौ, हे स्रजः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

स्रजम् – स्रज् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "स्रज् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"स्रजम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

स्रजा – स्रज् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "स्रज् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"स्रजा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

स्रट्त्सु, स्रट्सु – स्रज् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "स्रज् + सु" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से जकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "स्रड् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर, "स्रट् + सु" इस स्थिति में **"टात् सुप्तादिर्वा"** (२७५) सूत्र द्वारा वैकल्पिक तकार का आगम करने पर **"स्रट्त्सु"** तथा **"स्रट्सु"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

स्रज् (माला) शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्रट्–ड्	स्रजौ	स्रजः
सम्बोधन	हे स्रट्–ड्	हे स्रजौ	हे स्रजः
द्वितीया	स्रजम्	स्रजौ	स्रजः
तृतीया	स्रजा	स्रड्भ्याम्	स्रड्भिः
चतुर्थी	स्रजे	स्रड्भ्याम्	स्रड्भ्यः
पंचमी	स्रजः	स्रड्भ्याम्	स्रड्भ्यः
षष्ठी	स्रजः	स्रजोः	स्रजाम्
सप्तमी	स्रजि	स्रजोः	स्रट्त्सु, स्रट्सु

झञटवर्गान्ता अप्रसिद्धाः।

स्त्रीलिंग में झकारान्त, ञकारान्त और टवर्गान्त शब्द अप्रसिद्ध हैं।

तकारान्तः स्त्रीलिङ्गो विद्युच्छब्दः। विद्युत्, विद्युद्। विद्युतौ। विद्युतः। इत्यादि।

अब तकारान्त स्त्रीलिंग में विद्युत् (बिजली) शब्द का विवेचन करते हैं।

विद्युत्, विद्युद् – विद्युत् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "विद्युत् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "विद्युत्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा तकार के स्थान पर, वैकल्पिक दकार–तकार आदेश करने पर **"विद्युत्–द्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

विद्युतौ – विद्युत् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "विद्युत् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"विद्युतौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विद्युतोः – विद्युत् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "विद्युत् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"विद्युतोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विद्युताम् – विद्युत् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "विद्युत् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"विद्युताम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विद्युति – विद्युत् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "विद्युत् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"विद्युति"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विद्युत्सु – विद्युत् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "विद्युत् + सु" इस स्थिति में **"विद्युत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विद्युत् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	विद्युत्–द्	विद्युतौ	विद्युतः
सम्बोधन	हे विद्युत्–द्	हे विद्युतौ	हे विद्युतः
द्वितीया	विद्युतम्	विद्युतौ	विद्युतः
तृतीया	विद्युता	विद्युद्भ्याम्	विद्युद्भिः
चतुर्थी	विद्युते	विद्युद्भ्याम्	विद्युद्भ्यः
पंचमी	विद्युतः	विद्युद्भ्याम्	विद्युद्भ्यः
षष्ठी	विद्युतः	विद्युतोः	विद्युताम्
सप्तमी	विद्युति	विद्युतोः	विद्युत्सु

थकारान्तो प्रसिद्धः।

स्त्रीलिंग में थकारान्त शब्द अप्रसिद्ध हैं।

दकारान्तः स्त्रीलिङ्गः शरद्शब्दः। शरत् शरद्। शरदौ। शरदः। एवं संविद्–विपद्–परिषद्–प्रभृतयः।

अब दकारान्त स्त्रीलिंग में शरद् शब्द का विवेचन करते हैं।

शरदः – शरद् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि्–ङस् विभक्ति के आने पर, "शरद् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"शरदः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शरदोः – शरद् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "शरद् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"शरदोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शरदाम् – शरद् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "शरद् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"शरदाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शरदि – शरद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "शरद् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"शरदि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शरत्सु – शरद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "शरद् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से दकार के स्थान पर तकार आदेश करने पर, **"शरत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

शरद् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	शरत्–द्	शरदौ	शरदः
सम्बोधन	हे शरत्–द्	हे शरदौ	हे शरदः
द्वितीया	शरदम्	शरदौ	शरदः
तृतीया	शरदा	शरद्भ्याम्	शरद्भिः
चतुर्थी	शरदे	शरद्भ्याम्	शरद्भ्यः
पंचमी	शरदः	शरद्भ्याम्	शरद्भ्यः
षष्ठी	शरदः	शरदोः	शरदाम्
सप्तमी	शरदि	शरदोः	शरत्सु

इसी प्रकार संविद् विपद् परिषद् इत्यादि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

लोप कर, "त्य + औ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त्य आ + औ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर, "त्या + औ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"औरिम्"** (२११) सूत्र से औ के स्थान पर "इकार" आदेश कर, "त्या + इ" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्णे ए"** (२७) सूत्र से "आकार" के स्थान पर "एकार" आदेश कर तथा इकार का लोप करने पर **"त्ये"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्याः – त्यद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "त्यद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त्य अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त्य + अस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त्य आ + अस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "त्या + अस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, पुनः **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "त्यास्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"त्याः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे त्ये – त्यद् शब्द से सम्बुद्धि के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "त्यद् + स्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त्य अ + स्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त्य + स्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त्य आ + स्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर, "त्या + स्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"तस्य च"** (२८७) सूत्र से तकार के स्थान पर सकार आदेश कर "स्या + स्" इस स्थिति में **"हस्वनदीश्रद्धाभ्यः सिर्लोपम्"** (१३४) सूत्र से सि का लोप कर तथा **"प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्"** परिभाषा के कारण **"सम्बुद्धौ च"** (२१२) सूत्र से आकार के स्थान पर एकार आदेश हो कर **"हे त्ये"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन में पूर्ववत्–**हे त्ये** तथा बहुवचन में **हे त्याः,** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

प्रत्यय कर, "त्य आ + भिस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "त्या + भिस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"त्याभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्यस्यै – त्यद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "त्यद् + ए" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त्य अ + ए" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त्य + ए" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त्य आ + ए" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "त्या + ए" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्स्वपूर्वाश्च"** (२१६) सूत्र से ङे के स्थान पर स्यै आदेश तथा त्या के स्थान पर त्य ह्स्व आदेश हो कर **"त्यस्यै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्याभ्यः – त्यद् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "त्यद् + भ्यस्" **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त्य अ + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त्य + भ्यस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त्य आ + भ्यस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "त्या + भ्यस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"त्याभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्यस्याः – त्यद् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "त्यद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त्य अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त्य + अस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त्य आ + अस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "त्या + अस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्स्वपूर्वाश्च"** (२१६) सूत्र से ङसि–ङस् के स्थान पर स्यास् आदेश तथा त्या के स्थान पर त्य ह्स्व आदेश कर, "त्य + स्यास्" इस स्थिति में

त्यासु – त्यद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त्य अ + सु" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त्य + सु" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त्य आ + सु" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "त्या + सु" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सर्वासु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

त्यद् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्या	त्ये	त्याः
सम्बोधन	हे स्ये	हे त्ये	हे त्याः
द्वितीया	त्याम्	त्ये	त्याः
तृतीया	त्यया	त्याभ्याम्	त्याभिः
चतुर्थी	त्यस्यै	त्याभ्याम्	त्याभ्यः
पंचमी	त्यस्याः	त्याभ्याम्	त्याभ्यः
षष्ठी	त्यस्याः	त्ययोः	त्यासाम्
सप्तमी	त्यस्याम्	त्ययोः	त्यासु

इसी प्रकार तद् शब्द की प्रक्रिया जानना चाहिये।

सा – तद् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "तद् + स्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + स्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + स्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त आ + स्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर, "ता + स्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"तस्य च"** (२८७) सूत्र से तकार के स्थान पर सकार आदेश कर "सा + स्" इस स्थिति में **"श्रद्धायाः सिर्लोपम्"** (२१०) सूत्र से सि का लोप हो कर **"सा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ते– तद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "तद् + औ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार

ताम् – तद् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "तद् + अम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + अम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + अम्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त आ + अम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "ता + अम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, पुनः **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ हो कर **"ताम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तया – तद् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "तद् + आ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + आ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + आ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त आ + आ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "ता + आ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"टौसोरे"** (२१३) सूत्र से आकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "ते + आ" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश कर, "त् अय् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"तया"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ताभ्याम् – तद् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "तद् + भ्याम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + भ्याम्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त आ + भ्याम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "ता + भ्याम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"ताभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ताभिः – तद् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "तद् + भिस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + भिस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + भिस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त आ + भिस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से

तयोः – तद् शब्द से षष्ठी–सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "तद् + ओस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + ओस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + ओस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त आ + ओस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "ता + ओस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"टौसोरे"** (२१३) सूत्र से आकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "ते + ओस्" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश कर, "त् अय् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "तयोस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"तयोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तासाम् – तद् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "तद् + आम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + आम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + आम्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त आ + आम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "ता + आम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सुरामि सर्वतः"** (१५५) सूत्र से सु का आगम हो कर **"तासाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तस्याम् – तद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "तद् + इ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + इ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + इ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "त आ + इ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "ता + इ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्रस्वपूर्वाश्च"** (२१६) सूत्र से ङि के स्थान पर स्याम् आदेश तथा ता के स्थान पर त ह्रस्व आदेश हो कर **"तस्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कर, "य + औ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "य आ+औ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर, "या + औ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"औरिम्"** (२११) सूत्र से औ के स्थान पर "इकार" आदेश कर, "या + इ" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्णे ए"** (२७) सूत्र से "आकार" के स्थान पर "एकार" आदेश कर तथा इकार का लोप करने पर **"ये"** प्रयोग सिद्ध होता है।

याः – यद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "यद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "य अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "य + अस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "य आ + अस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "या + अस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, पुनः **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "यास्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"याः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे ये – यद् शब्द से सम्बुद्धि के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "यद् + स्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "य अ + स्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "य + स्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "य आ + स्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर, "या + स्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"ह्रस्वनदीश्रद्धाभ्यः सिर्लोपम्"** (१३४) सूत्र से सि का लोप कर तथा **"प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्"** परिभाषा के कारण **"सम्बुद्धौ च"** (२१२) सूत्र से आकार के स्थान पर एकार आदेश हो कर **"हे ये"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन में पूर्ववत् – **हे ये,** तथा बहुवचन में **हे याः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

याम् – यद् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "यद् + अम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "य अ + अम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप

यस्यै – यद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "यद् + ए" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "य अ + ए" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "य + ए" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "य आ + ए" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "या + ए" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्रस्वपूर्वाश्च"** (२१६) सूत्र से ङे के स्थान पर स्यै आदेश तथा या के स्थान पर य ह्रस्व आदेश हो कर **"यस्यै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

याभ्यः – तद् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "यद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "य अ + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "य + भ्यस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "य आ + भ्यस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "या + भ्यस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"याभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यस्याः – यद् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "यद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "य अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "य + अस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "य आ + अस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "या + अस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्रस्वपूर्वाश्च"** (२१६) सूत्र से ङसि–ङस् के स्थान पर स्यास् आदेश तथा या के स्थान पर य ह्रस्व आदेश कर, "य + स्यास्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"यस्याः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ययोः – यद् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "यद् + ओस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर

यद् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	या	ये	याः
सम्बोधन	हे ये	हे ये	हे याः
द्वितीया	याम्	ये	याः
तृतीया	यया	याभ्याम्	याभिः
चतुर्थी	यस्यै	याभ्याम्	याभ्यः
पंचमी	यस्याः	याभ्याम्	याभ्यः
षष्ठी	यस्याः	ययोः	यासाम्
सप्तमी	यस्याम्	ययोः	यासु

इसी प्रकार एतद् शब्द के रूप जानना चाहिये।

एषा – एतद् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "एतद् + स्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + स्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + स्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "एत आ + स्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर, "एता + स्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"तस्य च"** (२८७) सूत्र से तकार के स्थान पर सकार आदेश कर "एसा + स्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "एषा + स्" इस स्थिति में **"श्रद्धायाः सिर्लोपम्"** (२१०) सूत्र से सि का लोप हो कर **"एषा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एते – एतद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "एतद् + औ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + औ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + औ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "एत आ + औ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सन्धि कर, "एता + औ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर,

प्रत्यय कर, "एत आ + अम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "एता + अम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, पुनः **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ हो कर **"एताम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतया – एतद् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "एतद् + आ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + आ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + आ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "एत आ + आ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "एता + आ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"टौसोरे"** (२१३) सूत्र से आकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "एते + आ" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश कर, "एत् अय् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"एतया"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एताभ्याम् – एतद् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "एतद् + भ्याम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + भ्याम्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "एत आ + भ्याम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "एता + भ्याम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"एताभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एताभिः – एतद् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "एतद् + भिस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + भिस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + भिस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "एत आ + भिस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "एता + भिस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"एताभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + ओस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + ओस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "एत आ + ओस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "एता + ओस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"टौसोरे"** (२१३) सूत्र से आकार के स्थान पर एकार आदेश हो कर "एते + ओस्" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश कर, "एत् अय् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "एतयोस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"एतयोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतासाम् – एतद् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "एतद् + आम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + आम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + आम्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "एत आ + आम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "एता + आम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सुरामि सर्वतः"** (१५५) सूत्र से सु का आगम हो कर **"एतासाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतस्याम् – एतद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "एतद् + इ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + इ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + इ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय कर, "एत आ + इ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर "एता + इ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्रस्वपूर्वाश्च"** (२१६) सूत्र से ङि के स्थान पर स्याम् आदेश तथा एता के स्थान पर एत ह्रस्व आदेश हो कर **"एतस्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतासु – एतद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "एतद् + सु" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + सु" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + सु" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र द्वारा अकार से आ प्रत्यय

वीरुधौ – वीरुध् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "वीरुध् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"वीरुधौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वीरुधः – वीरुध् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "वीरुध् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"वीरुधः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में पूर्ववत् **"हे वीरत्, वीरद्", हे वीरुधौ,** तथा **हे "वीरुधः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

वीरुधम् – वीरुध् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "वीरुध् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"वीरुधम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वीरुधा – वीरुध् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "वीरुध् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"वीरुधा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वीरुद्भ्याम् – वीरुध् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "वीरुध् + भ्याम्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से धकार के स्थान पर दकार आदेश करने पर **"वीरद्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वीरुद्भिः – वीरुध् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "वीरुध् + भिस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से धकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "वीरुद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"वीरद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वीरुधे – वीरुध् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "वीरुध् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"वीरुधे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वीरुद्भ्यः – वीरुध् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "वीरुध् + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से धकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "वीरुद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"वीरद्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

नकारान्तः स्त्रीलिङ्गः सीमन्शब्दः। सीमा। सीमानौ। सीमानः। अघुटि। अवम–संयोगेत्यादिना अलोपः। सीम्नः। इत्यादि। एवं पञ्चन् शब्दादीनां पूर्ववत्। इति नकारान्ताः। पकारान्तः स्त्रीलिङ्गो प्शब्दः। तस्य बहुवचनमेव।

अब नकारान्त स्त्रीलिंग में सीमन् शब्द का विवेचन करते हैं।

सीमा – सीमन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "सीमन् + स्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से दीर्घ कर, "सीमान् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "सीमान्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप हो कर **"सीमा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सीमानौ – सीमन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "सीमन् + औ" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से दीर्घ कर, "सीमान् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सीमानौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सीमानः – सीमन् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "सीमन् + अस्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से दीर्घ कर, "सीमान् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"सीमानः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सीमन् – सीमन् शब्द से सम्बुद्धि के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "सीमन् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सकार का लोप कर, "सीमन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप प्राप्त होने पर, **"न सम्बुद्धौ"** (२६०) सूत्र द्वारा निषेध होने पर **"हे सीमन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन एवं बहुवचन में पूर्ववत् **"हे सीमानौ"** तथा **"हे सीमानः"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

सीमानम् – सीमन् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "सीमन् + अम्" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से दीर्घ कर, "सीमान् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सीमानम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सीम्नः – सीमन् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "सीमन् + अस्" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से अन् के अकार का लोप कर, "सीम्न् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"सीम्नः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सीम्नोः – सीमन् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "सीमन् + ओस्" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से अन् के अकार का लोप कर, "सीम्न् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"सीम्नोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सीम्नाम् – सीमन् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "सीमन् + आम्" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से अन् के अकार का लोप कर, "सीम्न् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सीम्नाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सीमनि, "सीम्नि – सीमन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में "ङि" विभक्ति के आने पर, "सीमन् + इ" इस स्थिति में **"ईङ्योर्वा"** (२५१) सूत्र द्वारा विकल्प से "अन्" के अकार का लोप कर, "सीम्न् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सीम्नि"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"सीमनि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सीमसु – सीमन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "सीमन् + सु" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "सीम + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"सीमसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पञ्चानाम् – पञ्चन् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "पञ्चन् + आम्" इस स्थिति में **"सङ्ख्यायाः ष्णान्तायाः"** (२९६) सूत्र से नु का आगम कर, "पञ्चन् + न् आम्" इस स्थिति में **"नान्तस्य चोपधायाः"** (३००) सूत्र से दीर्घ कर "पञ्चान् + नाम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप हो कर **"पञ्चानाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पञ्चसु – पञ्चन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "पञ्चन् + सु" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"पञ्चसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

पञ्चन् शब्द की रूपमाला यथा–

पञ्च	**पञ्च**	**पञ्चभि**	**पञ्चभ्यः**	**पञ्चभ्यः**	**पञ्चानाम्**	**पञ्चसु**

।। इस प्रकार नकारान्त स्त्रीलिंग का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

अब पकारान्त स्त्रीलिंग में अप् (जल) शब्द का विवेचन करते हैं। अप् शब्द नित्य बहुवचनान्त है।अतः अप् शब्द से बहुवचन सम्बन्धी जस्–शस्–भिस् इत्यादि विभक्तियाँ लाना चाहिये।

अप् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, दीर्घ करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.९६)विधिसूत्रम् – अपश्च।।३३७।।

अप् इत्येतस्य उपधाया दीर्घो भवति असम्बुद्धौ घुटि परे। आपः। अपः।

अर्थ – सम्बुद्धि भिन्न घुट् परे होने पर अप् शब्द की उपधा को दीर्घ आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

"पञ्चादौ घुट्" (१५९) सूत्र से सि, ओ, जस्, अम् और औ इन पाञ्च विभक्तियों की घुट् सञ्ज्ञा होती है।

अतः अप् शब्द से मात्र जस् ही विभक्ति घुट्सञ्ज्ञक है।

अप्सु – अप् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, **"अप्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अप् शब्द की रूपमाला यथा –

आपः प्रथमा। **अपः** द्वितीया। **अद्भिः** तृतीया। **अद्भ्यः** चतुर्थी। **अद्भ्यः** पंचमी। **अपाम्** षष्ठी। **अप्सु** सप्तमी।

।। इस प्रकार प्रकारान्त स्त्रीलिंग का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

फकारान्त, बकारान्त शब्द स्त्रीलिंग में अप्रसिद्ध हैं।

भकारान्तः स्त्रीलिङ्गः ककुभ्शब्दः। ककुप् ककुब्। ककुभौ। ककुभः। इत्यादि। इति भकारान्तः।

अब भकारान्त स्त्रीलिंग में ककुभ् शब्द का विवेचन करते हैं।

ककुप्, ककुब् – ककुभ् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "ककुभ् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "ककुभ्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से भकार के स्थान पर पकार आदेश कर, "ककुप्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से पकार के स्थान पर, बकार अथवा पकार अक्षर हो कर, **"ककुप्, ककुब्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

ककुभौ – ककुभ् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "ककुभ् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"ककुभौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ककुभः – ककुभ् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "ककुभ् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"ककुभः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में पूर्ववत् **"हे ककुप्, ककुब्, हे ककुभौ,** तथा **हे ककुभः,** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

ककुभा – ककुभ् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "ककुभ् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"ककुभा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ककुप्सु – ककुभ् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "ककुभ् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से भकार के स्थान पर पकार आदेश हो कर **"ककुप्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ककुभ् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	ककुप्–ब्	ककुभौ	ककुभः
सम्बोधन	हे ककुप्–ब्	हे ककुभौ	हे ककुभः
द्वितीया	ककुभम्	ककुभौ	ककुभः
तृतीया	ककुभा	ककुब्भ्याम्	ककुब्भिः
चतुर्थी	ककुभे	ककुब्भ्याम्	ककुब्भ्यः
पंचमी	ककुभः	ककुब्भ्याम्	ककुब्भ्यः
षष्ठी	ककुभः	ककुभोः	ककुभाम्
सप्तमी	ककुभि	ककुभोः	ककुप्सु

।। इस प्रकार भकारान्त स्त्रीलिंग का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

मकारान्तः स्त्रीलिङ्गः किम्शब्दः। तस्य कादेशः। आप्रत्ययः। का। के। काः। काम्। के। काः। कया। काभ्याम्। काभिः। कस्यै। काभ्याम्। काभ्यः। कस्याः। काभ्याम्। काभ्यः। कस्याः। कयोः। कासाम्। कस्याम्। कयोः। कासु। इत्यादि।

अब मकारान्त स्त्रीलिंग में **"किम्"** शब्द का विवेचन करते हैं।

का – किम् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "किम् + स्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति होने पर, **"किं कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर, "क" आदेश कर, "क + स्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से आ प्रत्यय कर, "क आ + स्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "का + स्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"श्रद्धायाः सिर्लोपम्"** (२१०) सूत्र से सि का लोप हो कर **"का"** प्रयोग सिद्ध होता है।

"स्त्रियामादा" (२१५) सूत्र से आ प्रत्यय कर, "क आ + अम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "का + अम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, पुनः **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ हो कर, **"काम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कया – किम् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "किम् + आ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति होने पर, **"किं कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर, "क" आदेश कर, "क + आ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से आ प्रत्यय कर, "क आ + आ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "का + आ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"टौसोरे"** (२१३) सूत्र से आकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "के + आ" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश कर, "कय् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"कया"** प्रयोग सिद्ध होता है।

काभ्याम् – किम् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "किम् + भ्याम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति होने पर, **"किं कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + भ्याम्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से आ प्रत्यय कर, "क आ + भ्याम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "का + भ्याम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"काभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

काभिः – किम् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "किम् + भिस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति होने पर, **"किं कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + भिस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से आ प्रत्यय कर, "क आ + भिस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "का + भिस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"काभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कस्यै – किम् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "किम् + ए" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति होने पर, **"किं कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर, "क" आदेश कर, "क + ए" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"**

कासाम् – किम् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "किम् + आम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति होने पर, **"किं कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + आम्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से आ प्रत्यय कर, "क आ + आम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "का + आम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सुरामि सर्वतः"** (१५५) सूत्र से सु का आगम कर, "का + स् आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"कासाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कस्याम् – किम् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "किम् + इ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति होने पर, **"किं कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + इ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से आ प्रत्यय कर, "क आ + इ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "का + इ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्रस्वपूर्वाश्च"** (२१६) सूत्र से ङि के स्थान पर स्याम् आदेश तथा का के स्थान पर क ह्रस्व आदेश हो कर **"कस्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कासु – किम् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "किम् + सु" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति होने पर, **"किं कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + सु" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से आ प्रत्यय कर, "क आ + सु" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "का + सु" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"कासु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

किम् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	का	के	काः
सम्बोधन	हे के	हे के	हे काः
द्वितीया	काम्	के	काः
तृतीया	कया	काभ्याम्	काभिः
चतुर्थी	कस्यै	काभ्याम्	काभ्यः
पंचमी	कस्याः	काभ्याम्	काभ्यः
षष्ठी	कस्याः	कयोः	कासाम्
सप्तमी	कस्याम्	कयोः	कासु

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **हे इयम्, हे इमे, हे इमाः,** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

इमाम् – इदम् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "इदम् + अम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + अम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + अम्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "इद आ + अम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "इदा + अम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"दो द्वेर्मः"** (३०५) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "इमा + अम्" इस स्थिति में पुनः **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ करने पर, **"इमाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनया – इदम् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में "टा" विभक्ति के आने पर, "इदम् + आ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + आ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + आ" इस स्थिति में **"टौसोरनः" (३०६)** सूत्र से इद के स्थान पर "अन" आदेश कर, "अन + आ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अन आ + आ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "अना + आ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"टौसोरे"** (२१३) सूत्र से आकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "अने + आ" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश कर, "अनय् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जन–मस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अनया"** प्रयोग सिद्ध होता है।

आभ्याम् – इदम् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "इदम् + भ्याम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + भ्याम्" इस स्थिति में **"अद् व्यञ्जने नक्"** (३०७) सूत्र से इद के स्थान पर अत् (अ) आदेश कर, "अ + भ्याम्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अ आ + भ्याम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "आ + भ्याम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"आभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अस्याः – इदम् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "इदम् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + अस्" इस स्थिति में **"अद् व्यञ्जने नक्"** (३०७) सूत्र से इद के स्थान पर अत् (अ) आदेश कर, "अ + अस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अ आ + अस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "आ + अस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्रस्वपूर्वाश्च"** (२१६) सूत्र से ङसि–ङस् के स्थान पर, स्यास् आदेश तथा आकार के स्थान पर अकार आदेश करने पर, "अ + स्यास्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"अस्याः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनयोः – इदम् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "इदम् + ओस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + ओस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + ओस्" इस स्थिति में **"टौसोरनः"** (३०६) सूत्र से इद के स्थान पर "अन" आदेश कर, "अन + ओस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अन आ + ओस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "अना + ओस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"टौसोरे"** (२१३) सूत्र से आकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "अने + ओस्" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश कर, "अनय् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"अनयोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

आसाम् – इदम् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "इदम् + आम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + आम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + आम्" इस स्थिति में **"अद् व्यञ्जने नक्"** (३०७) सूत्र से इद के स्थान पर अत् (अ) आदेश कर, "अ + आम्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अ आ + आम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "आ + आम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सुरामि सर्वतः"** (१५५) सूत्र से सु का आगम कर, "आ + स् आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जन–मस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"आसाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एने – इदम् शब्द से अन्वादेश की विवक्षा में द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "इदम् + औ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + औ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + औ" इस स्थिति में **"एतस्य चान्वादेशे द्वितीयायां चैनः"** (२८८) सूत्र से इद के स्थान पर एन आदेश कर, "एन + औ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "एन आ + औ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "एना + औ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"औरिम्"** (२११) सूत्र से औ के स्थान पर इकार आदेश कर, "एना + इ" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्णे ए"** (२७) सूत्र से सन्धि करने पर **"एने"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एनाः – इदम् शब्द से अन्वादेश की विवक्षा में द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "इदम् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + अस्" इस स्थिति में **"एतस्य चान्वादेशे द्वितीयायां चैनः"** (२८८) सूत्र से इद के स्थान पर एन आदेश कर, "एन + अस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "एन आ + अस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "एना + अस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "एनास्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"एनाः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एनया – इदम् शब्द से अन्वादेश की विवक्षा में तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "इदम् + आ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + आ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + आ" इस स्थिति में **"एतस्य चान्वादेशे द्वितीयायां चैनः"** (२८८) सूत्र से इद के स्थान पर एन आदेश कर, "एन + आ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "एन आ + आ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "एना + आ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, "एना + आ" इस स्थिति में **"टौसोरे"** (२१३) सूत्र

यकारान्तो प्रसिद्धः। रकारान्तः स्त्रीलिङ्गश्चत्वार् शब्दः। तस्य बहुवचनमेव। त्रिचतुरोरित्यादिना चतस्रादेशः। तौ रं स्वरे इति रत्वं। चतस्रः। चतस्रः। चतसृभिः। चतसृभ्यः। चतसृभ्यः। न नामि दीर्घमिति दीर्घो न भवति। चतसृणाम्। चतसृषु। इत्यादि। गिर्शब्दस्य तु भेदः। सौ–

स्त्रीलिंग में यकारान्त शब्द अप्रसिद्ध है।

अब रकारान्त स्त्रीलिंग में चत्वार् शब्द का विवेचन करते हैं। चत्वार् शब्द के रूप बहुवचन में ही चलते हैं।

चतस्रः – चत्वार् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "चत्वार् + अस्" इस स्थिति में **"त्रिचतुरोः स्त्रियां तिसृचतसृ विभक्तौ"** (२२३) सूत्र से चत्वार् शब्द के स्थान पर "चतसृ" आदेश कर, "चतसृ + अस्" इस स्थिति में **"घुटि च"** (१६५) सूत्र से ऋकार के स्थान पर, अर् की प्राप्ति होने पर **"बाधकबाधनार्थो यं योगः"** इस परिभाषा के कारण **"तौ रं स्वरे"** (२२४) सूत्र से ऋकार के स्थान पर रकार आदेश कर, "चतस् र् + अस्" इस स्थिति में **"परव्यञ्जनमधः"** परिभाषा के कारण रेफ नीचे रहेगी। अतः **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "चतस्रस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"चतस्रः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चतस्रः – चत्वार् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "चत्वार् + अस्" इस स्थिति में **"त्रिचतुरोः स्त्रियां तिसृचतसृ विभक्तौ"** (२२३) सूत्र से चत्वार् शब्द के स्थान पर "चतसृ" आदेश कर, "चतसृ + अस्" इस स्थिति में **"तौ रं स्वरे"** (२२४) सूत्र से ऋकार के स्थान पर रकार आदेश कर, "चतस् र् + अस्" इस स्थिति में **"परव्यञ्जनमधः"** परिभाषा के कारण रेफ नीचे रहेगी। अतः **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "चतस्रस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"चतस्रः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चतसृभिः – चत्वार् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "चत्वार् + भिस्" इस स्थिति में **"त्रिचतुरोः स्त्रियां तिसृचतसृ विभक्तौ"** (२२३) सूत्र से चत्वार् शब्द के स्थान पर "चतसृ" आदेश कर, "चतसृ + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसो–र्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"चतसृभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

गीः – गिर् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "गिर् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "गिर्" इस स्थिति में **"इरुरोरीरूरौ"** (११२) सूत्र से दीर्घ आदेश कर, "गीर्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से रेफ के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"गीः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

गिरौ – गिर् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "गिर् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"गिरौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

गिरः – गिर् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "गिर् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"गिरः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **हे गीः, हे गिरौ, हे गिरः,** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

गिरम् – गिर् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "गिर् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"गिरम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

गिरा – गिर् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "गिर् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"गिरा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वार्तिकार्थ – "वा" का अधिकार होने से विभक्ति सम्बन्धी व्यञ्जन परे होने पर रेफ के स्थान पर "विसर्ग" आदेश नहीं होता है।

गीर्भ्याम् – गिर् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "गिर् + भ्याम्" इस स्थिति में **"इरुरोरीरूरौ"** (११२) सूत्र से गिर् के स्थान पर, गीर् आदेश कर, "गीर् + भ्याम्" इस स्थिति में, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से रेफ के स्थान पर विसर्ग आदेश की प्राप्ति का **"वाधिकाराद्विभक्तिव्यञ्जने रेफस्य विसर्गो न स्यात्"** वार्तिक से निषेध हो कर **"गीर्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

गीर्भिः – गिर् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "गिर् + भिस्" इस स्थिति में **"इरुरोरीरूरौ"** (११२) सूत्र से गिर् के स्थान पर, गीर् आदेश

गीर्षु – गिर् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "गिर् + सु" इस स्थिति में **"इरुरोरीरूरौ"** (११२) सूत्र से गिर् के स्थान पर, गीर् आदेश कर, "गीर् + सु" इस स्थिति में, **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से रेफ के स्थान पर विसर्ग आदेश की प्राप्ति का **"रः सुपि"** (३१२) सूत्र से निषेध कर, **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश करने पर **"गीर्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

गिर् (वाणी) शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	गीः	गिरौ	गिरः
सम्बोधन	हे गीः	हे गिरौ	हे गिरः
द्वितीया	गिरम्	गिरौ	गिरः
तृतीया	गिरा	गीर्भ्याम्	गीर्भिः
चतुर्थी	गिरे	गीर्भ्याम्	गीर्भ्यः
पंचमी	गिरः	गीर्भ्याम्	गीर्भ्यः
षष्ठी	गिरः	गिरोः	गिराम्
सप्तमी	गिरि	गिरोः	गीर्षु

इसी प्रकार पुर् और धुर् शब्द के रूप जानना चाहिये

।। इस प्रकार रकारान्त शब्द का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

स्त्रीलिंग में लकारान्त शब्द अप्रसिद्ध है।

वकारान्तः स्त्रीलिङ्गो दिव्शब्दः। स च सुदिव्शब्दवत्। द्यौः। दिवौ। दिवः। दिवम्। दिवौ। दिवः। दिवा। दिव उद्व्यञ्जने। द्युभ्याम्। द्युभिः। इत्यादि। इति वकारान्तः।

अब वकारान्त स्त्रीलिंग में दिव् शब्द का विवेचन करते हैं। और दिव् शब्द, सुदिव् शब्द के समान सिद्ध होता है।

द्यौः – दिव् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "दिव् + स्" इस स्थिति में **"औ सौ"** (३१३) सूत्र से वकार के स्थान पर औ आदेश कर, "दि औ

द्युभिः – दिव् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "दिव् + भिस्" इस स्थिति में **"दिव उद्व्यञ्जने"** (३१५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "दि उ + भिस्" इस स्थिति में **"इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः"** (४४) सूत्र से इकार के स्थान पर यकार आदेश कर, "द् य् उ + भिस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"द्युभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दिवे – दिव् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "दिव् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"दिवे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दिवः – दिव् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "दिव् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"दिवः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दिवोः – दिव् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "दिव् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"दिवोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दिवाम् – दिव् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "दिव् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"दिवाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दिवि – दिव् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "दिव् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"दिवि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्युषु – दिव् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "दिव् + सु" इस स्थिति में **"दिव उद्व्यञ्जने"** (३१५) सूत्र से वकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "दि उ + सु" इस स्थिति में **"इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः"** (४४) सूत्र से इकार के स्थान पर यकार आदेश कर, "द् य् उ + सु" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं**

दृशः – दृश् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "दृश् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"दृशः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **हे दृक्, दृग्, हे दृशौ, हे दृशः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

दृशम् – दृश् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "दृश् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"दृशम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दृशा – दृश् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "दृश् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"दृशा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दृग्भ्याम् – दृश् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "दृश् + भ्याम्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से शकार के स्थान पर गकार आदेश करने पर **"दृग्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दृग्भिः – दृश् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "दृश् + भिस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से शकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "दृग् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"दृग्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दृशे – दृश् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "दृश् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"दृशे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दृग्भ्यः – दृश् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "दृश् + भ्यस्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से शकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "दृग् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"दृग्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्वितीया	दृशम्	दृशौ	दृशः
तृतीया	दृशा	दृग्भ्याम्	दृग्भिः
चतुर्थी	दृशे	दृग्भ्याम्	दृग्भ्यः
पंचमी	दृशः	दृग्भ्याम्	दृग्भ्यः
षष्ठी	दृशः	दृशोः	दृशाम्
सप्तमी	दृशि	दृशोः	दृक्षु

।। इस प्रकार शकारान्त शब्द का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

षकारान्तः स्त्रीलिङ्गो विप्रुष्शब्दः। विप्रुट्, विप्रुड्। विप्रुषौ। विप्रुषः। इत्यादि। षकारान्तो दधृष्शब्दस्य तु भेदः। चवर्गदृगादीनां च गत्वम्। दधृक्, दधृग्। दधृक्षु इत्यादि।

अब षकारान्त स्त्रीलिंग में विप्रुष् शब्द का विवेचन करते हैं।

विप्रुट्, विप्रुड् – विप्रुष् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "विप्रुष् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "विप्रुष्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "विप्रुड्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर, "विप्रुट्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से टकार को टकार अथवा डकार आदेश करने पर **"विप्रुट्, विप्रुड्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

विप्रुषौ – विप्रुष् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "विप्रुष् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"विप्रुषौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विप्रुषः – विप्रुष् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "विप्रुष् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"विप्रुषः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **हे विप्रुट्, विप्रुड्, हे विप्रुषौ, हे विप्रुषः** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

विप्रुषम् – विप्रुष् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "विप्रुष् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"विप्रुषम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विप्रुषि – विप्रुष् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "विप्रुष् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"विप्रुषि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विप्रुट्त्सु, विप्रुट्सु – विप्रुष् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "विप्रुष् + सु" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "विप्रुड् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर, "विप्रुट् + सु" इस स्थिति में **"टात् सुप्तादिर्वा"** (२७५) सूत्र द्वारा वैकल्पिक तकार का आगम करने पर **"विप्रुट्त्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"विप्रुट्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

विप्रुष् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	विप्रुट्–ड्	विप्रुषौ	विप्रुषः
सम्बोधन	हे विप्रुट्–ड्	हे विप्रुषौ	हे विप्रुषः
द्वितीया	विप्रुषम्	विप्रुषौ	विप्रुषः
तृतीया	विप्रुषा	विप्रुड्भ्याम्	विप्रुड्भिः
चतुर्थी	विप्रुषे	विप्रुड्भ्याम्	विप्रुड्भ्यः
पंचमी	विप्रुषः	विप्रुड्भ्याम्	विप्रुड्भ्यः
षष्ठी	विप्रुषः	विप्रुषोः	विप्रुषाम्
सप्तमी	विप्रुषि	विप्रुषोः	विप्रुट्त्सु, विप्रुट्सु

दधृष् शब्द में भेद है। दधृष् शब्द दृश् आदि शब्दों में होने से, **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से षकार के स्थान पर गकार आदेश होगा।

दधृक्, दधृग् – दधृष् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "दधृष् + स्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनाच्च"** (१७८) सूत्र से सि का लोप कर, "दधृष्" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से षकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "दधृग्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर "दधृक्" इस स्थिति में तथा **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से ककार को ककार अथवा गकार आदेश हो कर **"दधृक्–ग्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

दधृषोः – दधृष् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "दधृष् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"दधृषोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दधृषाम् – दधृष् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "दधृष् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"दधृषाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दधृषि – दधृष् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "दधृष् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"दधृषि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दधृक्षु, दधृक्षु – दधृष् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "दधृष् + सु" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से षकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "दधृग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "दधृक् + सु" इस स्थिति में **"कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा"** (२५६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर खकार आदेश करने पर, **"दधृक्ष्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है। खकार आदेश के अभाव में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "दधृक् + षु" इस स्थिति में **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र की सहायता से क्–ष् के स्थान पर क्ष् आदेश करने पर **"दधृक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दधृष् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	दधृक्–ग्	दधृषौ	दधृषः
सम्बोधन	हे दधृक्–ग्	हे दधृषौ	हे दधृषः
द्वितीया	दधृषम्	दधृषौ	दधृषः
तृतीया	दधृषा	दधृग्भ्याम्	दधृग्भिः
चतुर्थी	दधृषे	दधृग्भ्याम्	दधृग्भ्यः
पंचमी	दधृषः	दधृग्भ्याम्	दधृग्भ्यः
षष्ठी	दधृषः	दधृषोः	दधृषाम्
सप्तमी	दधृषि	दधृषोः	दधृक्षु

।। इस प्रकार षकारान्त स्त्रीलिंग का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

सुवचसा – सुवचस् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२७६) सूत्र की सहायता से **"सुवचसा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवचोभ्याम् – सुवचस् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + भ्याम्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश कर, "सुवचः + भ्याम्" इस स्थिति में **"अघोषवतोश्च"** (१०५) सूत्र से विसर्ग के स्थान पर उकार आदेश कर, "सुवच उ + भ्याम्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से सन्धि करने पर, **"सुवचोभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवचोभिः – सुवचस् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश कर, "सुवचः + भिस्" इस स्थिति में **"अघोषवतोश्च"** (१०५) सूत्र से विसर्ग के स्थान पर उकार आदेश कर, "सुवच उ + भिस्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से सन्धि कर तथा **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश करने पर, **"सुवचोभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवचसे – सुवचस् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सुवचसे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवचोभ्यः – सुवचस् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश कर, "सुवचः + भ्यस्" इस स्थिति में **"अघोषवतोश्च"** (१०५) सूत्र से विसर्ग के स्थान पर उकार आदेश कर, "सुवच उ + भ्यस्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से सन्धि कर, "सुवचो + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश कर**"सुवचोभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सुवचसः – सुवचस् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "सुवचस् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर, **"सुवचसः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

असौ – अदस् शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "अदस् + स्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + स्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + स्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अद आ + स्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "अदा + स्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सौ सः"** (३२२) सूत्र से दकार के स्थान पर सकार आदेश कर, "असा+स्" इस स्थिति में **"सावौ सिलोपश्च"** (३२३) सूत्र से अद के आकार के स्थान पर औकार आदेश तथा सि का लोप हो कर **"असौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमू – अदस् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "अदस् + औ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + औ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + औ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अद आ + औ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "अदा + औ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"औरिम्"** (२११) सूत्र से औकार के स्थान पर इकार आदेश कर, "अदा + इ" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्ण ए** (२७) सूत्र से संधि कर, "अदे" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर "अमे + औ" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से एकार के स्थान पर ऊकार आदेश करने पर, **"अमू"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमूः – अदस् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "अदस् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + अस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अद आ + अस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "अदा + अस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "अदास्" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमा + अस्" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से आकार के स्थान पर ऊकार आदेश कर, "अमूस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"अमूः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर "अमा + भ्याम्" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से आकार के स्थान पर ऊकार आदेश करने पर **"अमूभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमूभिः – अदस् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "अदस् + भिस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + भिस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + भिस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अद आ + भिस्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "अदा + भिस्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमा + भिस्" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से आकार के स्थान पर ऊकार आदेश कर, "अमू + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"अमूभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुष्यै – अदस् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "अदस् + ए" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + ए" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + ए" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अद आ + ए" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "अदा + ए" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्रस्वपूर्वाश्च"** (२१६) सूत्र से ङे के स्थान पर स्यै आदेश तथा आकार के स्थान पर अकार ह्रस्व आदेश कर, "अद + स्यै" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अम + स्यै" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुस्यै" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश करने पर **"अमुष्यै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमूभ्यः – अदस् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "अदस् + भ्यस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + भ्यस्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ"

में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमयोस्" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुयोस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"अमुयोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमूषाम् – अदस् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "अदस् + आम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + आम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + आम्" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अद आ + आम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "अदा + आम्" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सुरामि सर्वतः"** (१५५) सूत्र से सु का आगम कर, "अदा + स् आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमासाम्" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से आकार के स्थान पर ऊकार आदेश करने पर "अमूसाम्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश करने पर **"अमूषाम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुष्याम् – अदस् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "अदस् + इ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + इ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + इ" इस स्थिति में **"स्त्रियामादा"** (२१५) सूत्र से "आ" प्रत्यय कर, "अद आ + इ" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ कर, "अदा + इ" इस स्थिति में **"आ श्रद्धा"** (२०६) सूत्र से श्रद्धा सञ्ज्ञा कर, **"सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्रस्वपूर्वाश्च"** (२१६) सूत्र से ङि के स्थान पर स्याम् आदेश तथा आकार के स्थान पर अकार ह्रस्व आदेश कर, "अद + स्याम्" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमा + स्याम्" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमुस्याम्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश करने पर **"अमुष्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

स्थान पर दकार आदेश कर, "उपानद्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से दकार के स्थान पर तकार आदेश कर, "उपानत्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक तकार के स्थान पर, तकार अथवा दकार आदेश करने पर, **"उपानत्–उपानद्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

उपानहौ – उपानह् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "उपानह् + औ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"उपानहौ"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उपानहः – उपानह् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "उपानह् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"उपानहः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **हे उपानत्, हे उपानद्, हे उपानहौ, हे उपानहः,** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

उपानहम् – उपानह् शब्द से द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर, "उपानह् + अम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"उपानहम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उपानहा – उपानह् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "उपानह् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"उपानहा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उपानद्भ्याम् – उपानह् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "उपानह् + भ्याम्" इस स्थिति में **"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्–नहिवन्सीनां च"** (३१६) सूत्र से हकार के स्थान पर दकार आदेश करने पर, **"उपानद्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उपानद्भिः – उपानह् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "उपानह् + भिस्" इस स्थिति में **"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्नहिवन्सीनां च"** (३१६) सूत्र से हकार के स्थान पर दकार आदेश कर, उपानद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"उपानद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

उपानह् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	उपानत्–द्	उपानहौ	उपानहः
सम्बोधन	हे उपानत्–द्	हे उपानहौ	हे उपानहः
द्वितीया	उपानहम्	उपानहौ	उपानहः
तृतीया	उपानहा	उपानद्भ्याम्	उपानद्भिः
चतुर्थी	उपानहे	उपानद्भ्याम्	उपानद्भ्यः
पंचमी	उपानहः	उपानद्भ्याम्	उपानद्भ्यः
षष्ठी	उपानहः	उपानहोः	उपानहाम्
सप्तमी	उपानहि	उपानहोः	उपानत्सु

अनड्वाह् शब्द में भेद है।

अनड्वाह शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "अनड्वाह्" शब्द के वा के स्थान पर उकार आदेश करने के लिए अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(०००)विधिसूत्रम् – वा स्त्रीकारे।।३३६।।

अनड्वाह् इत्येतस्य वाशब्दस्य उत्वं वा भवति स्त्रीकारे परे। नदाद्यञ्च इति ईप्रत्ययः। अनडुही, अनड्वाही। इत्यादि। इति व्यञ्जनान्ताः स्त्रीलिङ्गाः।

अर्थ – स्त्रीलिंग सम्बन्धी ईकार परे होने पर अनड्वाह् शब्द के वा के स्थान पर विकल्प से उकार आदेश होता है।

अनड्वाह् शब्द से स्त्रीत्व की विवक्षा में **"नदाद्यञ्च्वाह्व्यंसन्तृसखिनान्तेभ्य ई"** (३७१) सूत्र से "ई" प्रत्यय होता है। ई प्रत्यय होने पर "अनड्वाह् + ई" अब **"वा स्त्रीकारे"** (३३६) सूत्र द्वारा वा के स्थान पर विकल्प से उकार आदेश हो कर "अनड्उह्" + ई = **"अनडुही"** अथवा **"अनड्वाही"** शब्द सिद्ध होते हैं।

"ईदूतौ स्त्र्याख्यौ नदी" (२२६) सूत्र से नदी सञ्ज्ञा हो कर पूर्ववत् कार्य होता है।

"अनडुही" अथवा "अनड्वाही" शब्द के रूप नदी शब्द के समान चलते हैं।

अनडुही – अनडुही शब्द से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि विभक्ति के आने पर, "अनडुही + स्" इस स्थिति में **"ईदूतौ स्त्र्याख्यौ नदी"** (२२६) सूत्र से अनडुही शब्द की नदी सञ्ज्ञा कर, **"ईकारान्तात्सिः"** (२२७) सूत्र से स् का लोप हो कर **"अनडुही"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनडुहीभ्याम् – अनडुही शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, **"अनडुहीभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनडुहीभिः – अनडुही शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "अनडुही + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"अनडुहीभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनडुह्यै – अनडुही शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "अनडुही + ङे" इस स्थिति में **"ईदूतौ स्त्र्याख्यौ नदी"** (२२६) सूत्र से नदी सञ्ज्ञा कर, **"नद्या ऐआसासाम्"** (२२२) सूत्र से ङे के स्थान पर ऐ आदेश कर, "अनडुही + ऐ" इस स्थिति में **"इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः"** (४४) सूत्र से इकार के स्थान पर यकार आदेश कर, "अनडुह् य् + ऐ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अनडुह्यै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनडुहीभ्यः – अनडुही शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "अनडुही + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"अनडुहीभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनडुह्याः – अनडुही शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "अनडुही + अस्" इस स्थिति में **"ईदूतौ स्त्र्याख्यौ नदी"** (२२६) सूत्र से अनडुही शब्द की नदी सञ्ज्ञा कर, **"नद्या ऐआसासाम्"** (२२२) सूत्र से ङसि–ङस् के स्थान पर आस् आदेश कर, "अनडुही + आस्" इस स्थिति में **"इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः"** (४४) सूत्र से इकार के स्थान पर यकार आदेश कर, "अनडुह् य् + आस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"अनडुह्याः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनडुह्योः – अनडुही शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "अनडुही + ओस्" इस स्थिति में **"ईदूतौ स्त्र्याख्यौ नदी"** (२२६) सूत्र से अनडुही शब्द की नदी सञ्ज्ञा कर, **"इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः"** (४४) सूत्र से इकार के स्थान पर यकार आदेश कर, "अनडुह् य् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"अनडुह्योः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनड्वाही शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अनड्वाही	अनड्वाह्यौ	अनड्वाह्यः
सम्बोधन	हे अनड्वाहि	हे अनड्वाह्यौ	हे अनड्वाह्यः
द्वितीया	अनड्वाहीम्	अनड्वाह्यौ	अनड्वाहीः
तृतीया	अनड्वाह्या	अनड्वाहीभ्याम्	अनड्वाहीभिः
चतुर्थी	अनड्वाह्यै	अनड्वाहीभ्याम्	अनड्वाहीभ्यः
पंचमी	अनड्वाह्याः	अनड्वाहीभ्याम्	अनड्वाहीभ्यः
षष्ठी	अनड्वाह्याः	अनड्वाह्योः	अनड्वाहीनाम्
सप्तमी	अनड्वाह्याम्	अनड्वाह्योः	अनड्वाहीषु

।। इस प्रकार व्यञ्जनान्त स्त्रीलिंग का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

❑ ❑ ❑

प्राक्–प्राग् – प्राञ्च् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के एकवचन में सि और अम् विभक्ति आने पर, "प्राञ्च् + स्–अम्" इस स्थिति में **"नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्"** (२४५) सूत्र से सि और अम् का लोप कर, "प्राञ्च्" इस स्थिति में **"विरामे व्यञ्जनादावुक्तं नपुंसकात्स्यमोर्लोपे पि"** (३४०) सूत्र के कारण **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "प्राञ्ग्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "प्राग्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "प्राक्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर ककार अथवा गकार आदेश होने पर, **"प्राक्–प्राग्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

नपुंसकलिंग में प्राञ्च् शब्द के अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप होने पर, "प्राच्" शब्द से परे विभक्तियाँ आती हैं।

प्राची – प्राञ्च् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + औ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "प्राच् + औ" इस स्थिति में **"औरीम्"** (२३७) सूत्र से औ के स्थान पर ईकार आदेश हो कर **"प्राची"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राञ्चि – प्राञ्च् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस् और शस् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "प्राच् + अस्" इस स्थिति में **"जस्शसोः शिः"** (२३६) सूत्र से जस्–शस् के स्थान पर शि आदेश कर, शकार का अनुबन्ध लोप कर, "प्राच् + इ" इस स्थिति में **"धुट्स्वराद्घुटि नुः"** (२४०) सूत्र से नु का आगम कर, "प्रा न् च् + इ" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से नकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "प्रांच् + इ" इस स्थिति में **"वर्गे वर्गान्तः"** (२५८) सूत्र से अनुस्वार के स्थान पर वर्गान्त ञकार आदेश कर, "प्राञ्च् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राञ्चि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **हे प्राक्, प्राग्, हे प्राची, हे प्राञ्चि,** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

प्राचा – प्राञ्च् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + आ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "प्राच् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"प्राचा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राचि – प्राञ्च् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप करने पर **"प्राचि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राख्सु, प्राक्षु – प्राञ्च् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "प्राञ्च् + सु" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "प्राच् + सु" इस स्थिति में **"चवर्गदृगादीनां च"** (२५४) सूत्र से चकार के स्थान पर गकार आदेश कर, "प्राग् + सु" इस स्थिति में **"अघोषे प्रथमः"** (१२१) सूत्र से गकार के स्थान पर ककार आदेश कर, "प्राक् + सु" इस स्थिति में **"कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा"** (२५६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ककार के स्थान पर खकार आदेश करने पर, **"प्राख्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है। खकार आदेश के अभाव में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "प्राक् + षु" इस स्थिति में **"कषयोगे क्षः"** (२५५) सूत्र से क्–ष् के स्थान पर क्षकार आदेश हो कर **"प्राक्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

प्राञ्च् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	प्राक्–ग	प्राची	प्राञ्चि
सम्बोधन	हे प्राक्–ग्	हे प्राची	हे प्राञ्चि
द्वितीया	प्राक्–ग्	प्राची	प्राञ्चि
तृतीया	प्राचा	प्राग्भ्याम्	प्राग्भिः
चतुर्थी	प्राचे	प्राग्भ्याम्	प्राग्भ्यः
पंचमी	प्राचः	प्राग्भ्याम्	प्राग्भ्यः
षष्ठी	प्राचः	प्राचोः	प्राचाम्
सप्तमी	प्राचि	प्राचोः	प्राक्षु

इसी प्रकार प्रत्यञ्च्, सम्यञ्च्, उदञ्च्, तिर्यञ्च् इत्यादि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

।। इस प्रकार नपुंसकलिंग में चकारान्त शब्दों का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

सकृद्भिः – सकृत् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "सकृत् + भिस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "सकृद् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"सकृद्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सकृते – सकृत् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "सकृत् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सकृते"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सकृद्भ्यः – सकृत् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "सकृत् + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश कर, "सकृद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"सकृद्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सकृतः – सकृत् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "सकृत् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"सकृतः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सकृतोः – सकृत् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "सकृत् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर, **"सकृतोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सकृताम् – सकृत् शब्द से षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में आम् विभक्ति के आने पर, "सकृत् + आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सकृताम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सकृति – सकृत् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "सकृत् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सकृति"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सकृत्सु – सकृत् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, **"सकृत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

दा धातु से ददन्त् शब्द बना है। दा धातु को द्वित्व (दा दा) होता है। पूर्व दा की अभ्यास संज्ञा होती है। तथा पर दा की अभ्यस्त संज्ञा होती है। उपर्युक्त सूत्र में इसी अभ्यस्त संज्ञा की चर्चा की गई है। अभ्यास और अभ्यस्त की चर्चा **"कातन्त्र–रूपमाला"** उत्तरार्द्ध प्रथम भाग में की गई है।

ददन्त् शब्द से बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, **"जस्शसोः शिः"** (२३६) सूत्र से जस्–शस् के स्थान पर शि आदेश कर, अनुबन्ध लोप कर, "ददन्त् + इ" इस स्थिति में **"वा नपुंसके"** (२३६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ददन्त् के स्थान पर ददत् आदेश होने पर, **"ददति"** तथा **ददन्ति"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

ददन्ति, ददति – ददन्त् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + अस्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसंज्ञक नकार का लोप कर, "ददत् + अस्" इस स्थिति में **"जस्शसोः शिः"** (२३६) सूत्र से जस्–शस् के स्थान पर शि आदेश कर, अनुबन्ध लोप कर, "ददत् + इ" इस स्थिति में **"धुट् स्वराद्घुटि नुः"** (२४०) सूत्र से नु का आगम कर, "दद न् त्+इ" इस स्थिति में **"वा नपुंसके"** (२३६) सूत्र द्वारा वैकल्पिक ददन्त् के स्थान पर ददत् आदेश कर, **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"ददति"** तथा **ददन्ति"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **हे ददत्–ददद्, हे ददती, हे ददति–ददन्ति,** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

ददता – ददन्त् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + आ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "ददत् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"ददता"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ददद्भ्याम् – ददन्त् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + भ्याम्" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "ददत् + भ्याम्" इस स्थिति में **"धुटां तृतीयः"** (२७४) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार आदेश करने पर, **"ददद्भ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ददति – ददन्त् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + इ" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "ददत् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"ददति"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ददत्सु – ददत् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "ददन्त् + सु" इस स्थिति में **"अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्"** (२६१) सूत्र से अनुषंगसञ्ज्ञक नकार का लोप कर, "ददत् + सु" इस स्थिति में **"सकृत्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

ददन्त् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	ददत्–द्	ददती	ददति, ददन्ति
सम्बोधन	हे ददत्–द्	हे ददती	हे ददति, ददन्ति
द्वितीया	ददत्–द्	ददती	ददति, ददन्ति
तृतीया	ददता	ददद्भ्याम्	ददद्भिः
चतुर्थी	ददते	ददद्भ्याम्	ददद्भ्यः
पंचमी	ददतः	ददद्भ्याम्	ददद्भ्यः
षष्ठी	ददतः	ददतोः	ददताम्
सप्तमी	ददति	ददतोः	ददत्सु

।। इस प्रकार नपुंसकलिंग में तकारान्त शब्दों का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

नपुंसकलिंग में थकारान्त शब्द अप्रसिद्ध हैं।

दकारान्तो नपुंसकलिङ्गस्तद् शब्दः। नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तमिति वचनात् त्यदाद्यत्वं न भवति। तत्, तद्। ते। तानि। पुनरप्येवम्। अन्यत्र पुल्लिङ्गवत् एवं यद् शब्दः। धकारान्तो प्रसिद्धः।

अब दकारान्त नपुंसकलिंग में तद् शब्द का विवेचन करते हैं।

तत्–द् – तद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के एकवचन में सि और अम् विभक्ति के आने पर, "तद् + स्–अम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति होने पर, उसके अपवाद में **"नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्"** (२४५) सूत्र से सि–अम् का लोप कर, "तद्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से दकार के स्थान पर तकार आदेश कर, "तत्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक तकार के स्थान पर, तकार अथवा दकार आदेश करने पर, **"तत्–द्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

तैः – तद् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "तद् + भिस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + भिस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र से भिस् के स्थान पर "ऐस्" आदेश कर, "त + ऐस्" इस स्थिति में **"एकारे ऐ ऐकारे च"** (३७) सूत्र से अकार के स्थान पर ऐकार आदेश तथा ऐस् के ऐ का लोप कर, "तैस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"तैः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तस्मै – तद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "तद् + ए" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + ए" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + ए" इस स्थिति में **"ङेर्यः"** (१४२) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"स्मै सर्वनाम्नः"** (१५३) सूत्र से ङे के स्थान पर "स्मै" आदेश हो कर **"तस्मै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तेभ्यः – तद् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "तद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र की प्राप्ति होने पर **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर, एकार आदेश कर,"ते + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"तेभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तस्मात् – तद् शब्द से पञ्चमी विभक्ति के एकवचन में "ङसि" विभक्ति के आने पर, "तद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + अस" इस स्थिति में **"ङसिरात्"** (१४४) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"ङसिः स्मात्"** (१५४) सूत्र से ङसि के स्थान पर "स्मात्" आदेश कर, "तस्मात्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार अथवा तकार आदेश हो कर **"तस्माद्–तस्मात्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

तेषु – तद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "तद् + सु" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "त अ + सु" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "त + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "ते + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीय–षान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"तेषु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

तद् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	तत्–तद्	ते	तानि
सम्बोधन	हे तत्–द्	हे ते	हे तानि
द्वितीया	तत्, तद्	ते	तानि
तृतीया	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पंचमी	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः
षष्ठी	तस्य	तयोः	तेषाम्
सप्तमी	तस्मिन्	तयोः	तेषु

अब दकारान्त नपुंसकलिंग में यद् शब्द का विवेचन करते हैं।

यत्–द् – यद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के एकवचन में सि और अम् विभक्ति के आने पर, "यद् + स्–अम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति होने पर, उसके अपवाद में **"नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्"** (२४५) सूत्र से सि–अम् का लोप कर, "यद्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से दकार के स्थान पर तकार आदेश कर, "यत्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक तकार के स्थान पर, तकार अथवा दकार आदेश करने पर, **"यत्–द्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

ये – यद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "यद् + औ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर

यैः – यद् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "यद् + भिस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "य अ + भिस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "य + भिस्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र की प्राप्ति होने पर **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र से भिस् के स्थान पर "ऐस्" आदेश कर, "य + ऐस्" इस स्थिति में **"एकारे ऐ ऐकारे च"** (३७) सूत्र से अकार के स्थान पर ऐकार आदेश तथा ऐस् के ऐ का लोप कर, "यैस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"यैः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यस्मै – यद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "यद् + ङे" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "य अ + ए" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "य + ए" इस स्थिति में **"ङेर्यः"** (१४२) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"स्मै सर्वनाम्नः"** (१५३) सूत्र से ङे के स्थान पर "स्मै" आदेश हो कर **"यस्मै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

येभ्यः – यद् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "यद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "य अ + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "य + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र की प्राप्ति होने पर **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर, एकार आदेश कर,"ये + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"येभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यस्मात् – यद् शब्द से पञ्चमी विभक्ति के एकवचन में "ङसि" विभक्ति के आने पर, "यद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "य अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "य + अस" इस स्थिति में **"ङसिरात्"** (१४४) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"ङसिः स्मात्"** (१५४) सूत्र से ङसि के स्थान पर "स्मात्" आदेश कर, "यस्मात्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार अथवा तकार आदेश हो कर **"यस्माद्–यस्मात्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

येषु – यद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "यद् + सु" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "य अ + सु" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "य + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "ये + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीय–षान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर, **"येषु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यद् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	यत्–यद्	ये	यानि
सम्बोधन	हे यत्–यद्	ये	यानि
द्वितीया	यत्–यद्	ये	यानि
तृतीया	येन	याभ्याम्	यैः
चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पंचमी	यस्मात्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन्	ययोः	येषु

अब दकारान्त नपुंसकलिंग में एतद् शब्द का विवेचन करते हैं।

एतत्–द् – एतद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के एकवचन में सि और अम् विभक्ति के आने पर, "एतद् + स्–अम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र की प्राप्ति होने पर, उसके अपवाद में **"नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्"** (२४५) सूत्र से सि–अम् का लोप कर, "एतद्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से दकार के स्थान पर तकार आदेश कर, "एतत्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक तकार के स्थान पर, तकार अथवा दकार आदेश करने पर, **"एतत्–द्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

एते – एतद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "एतद् + औ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर

एतैः – एतद् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "एतद् + भिस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + भिस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + भिस्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र से भिस् के स्थान पर "ऐस्" आदेश कर "एत + ऐस्" इस स्थिति में **"एकारे ऐ ऐकारे च"** (३७) सूत्र से अकार के स्थान पर ऐकार आदेश तथा ऐस् के ऐ का लोप कर, "एतैस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"एतैः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतस्मै – एतद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "एतद् + ए" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + ए" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + ए" इस स्थिति में **"ङेर्यः"** (१४२) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"स्मै सर्वनाम्नः"** (१५३) सूत्र से ङे के स्थान पर "स्मै" आदेश हो कर **"एतस्मै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतेभ्यः – एतद् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "एतद् + भ्यस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र की प्राप्ति होने पर **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "एतेभ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"एतेभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतस्मात् – एतद् शब्द से पञ्चमी विभक्ति के एकवचन में "ङसि" विभक्ति के आने पर, "एतद् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + अस" इस स्थिति में **"ङसिरात्"** (१४४) सूत्र की प्राप्ति थी परन्तु **"ङसिः स्मात्"** (१५४) सूत्र से ङसि के स्थान पर "स्मात्" आदेश कर, "एतस्मात्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार अथवा तकार आदेश हो कर **"एतस्माद्–एतस्मात्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

एतेषु – एतद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "एतद् + सु" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से दकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "एत अ + सु" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "एत + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर "एते + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"एतेषु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एतद् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	एतत्–एतद्	एते	एतानि
सम्बोधन	हे एतत्–एतद्	एते	एतानि
द्वितीया	एतत्–एतद्	एते, एने	एतानि एनानि
तृतीया	एतेन, एनेन	एताभ्याम्	एतैः
चतुर्थी	एतस्मै	एताभ्याम्	एतेभ्यः
पंचमी	एतस्मात्	एताभ्याम्	एतेभ्यः
षष्ठी	एतस्य	एतयोः, एनयोः	एतेषाम्
सप्तमी	एतस्मिन्	एतयोः, एनयोः	एतेषु

।। इस प्रकार नपुंसकलिंग में दकारान्त शब्दों का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

नपुंसकलिंग में धकारान्त शब्द अप्रसिद्ध हैं।

नकारान्तो नपुंसकलिङ्गः सामन् शब्दः। साम। साम्नी, सामनी। सामानि। पृथक्करणान् नपुंसकस्य वा। हे साम, हे सामन्। हे साम्नी, हे सामनी। हे सामानि। पुनरप्येवम्। इत्यादि। एवं लोमन्–व्योमन्–भूमन्–प्रभृतयः। चर्मन् शब्दस्य तु भेदः। चर्म चर्मणी। चर्माणि। अन्यत्र पुल्लिङ्गवत्। एवं वर्मन्–कर्मन् शर्मन्–प्रभृतयः। इत्यादि। अहन् शब्दस्य तु भेदः। सौ

अब नकारान्त नपुंसकलिंग में सामन् शब्द का विवेचन करते हैं।

साम – सामन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के एकवचन में सि और अम् विभक्ति के आने पर, "सामन्+स्–अम्" इस स्थिति में **"नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्"** (२४५) सूत्र से सि और अम् का लोप कर, "सामन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप हो कर **"साम"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सामभ्याम् – सामन् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "सामन् + भ्याम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "साम + भ्याम्" इस स्थिति में **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"सामभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सामभिः – सामन् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "सामन् + भिस्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "साम + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र द्वारा भिस् के स्थान पर ऐस् की प्राप्ति होने पर, **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"सामभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साम्ने – सामन् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "सामन् + ए" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से अन् के अकार का लोप कर, "साम्न् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"साम्ने"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सामभ्यः – सामन् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "सामन् + भ्यस्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, "साम + भ्यस्" इस स्थिति में **"घुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा एकार की प्राप्ति होने पर, **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"सामभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साम्नः – सामन् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "सामन् + अस्" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से अन् के अकार का लोप कर, "साम्न् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "साम्नस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"साम्नः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

साम्नि, सामनि – सामन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "सामन् + इ" इस स्थिति में **"ईङ्योर्वा"** (२५१) सूत्र द्वारा वैकल्पिक अकार का लोप कर, "साम्न् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"**(२५) सूत्र की सहायता से **"साम्नि"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"सामनि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चर्मणी – चर्मन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "चर्मन् + औ" इस स्थिति में **"औरीम्"** (२३७) सूत्र से औ के स्थान पर ई आदेश कर, "चर्मन् + ई" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश कर, **"चर्मणी"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चर्माणि – चर्मन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "चर्मन् + अस्" इस स्थिति में **"जस्–शसौ नपुंसके"** (२३८) सूत्र से जस्–शस् की घुट् संज्ञा कर, **"जस्शसोः शिः"** (२३६) सूत्र से जस्–शस् के स्थान पर शि आदेश कर, "चर्मन् + इ" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से दीर्घ कर, "चर्मान् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर, **"चर्माणि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

हे चर्म, चर्मन् – चर्मन् शब्द से सम्बोधन में सि विभक्ति के आने पर, "चर्मन् + स्" इस स्थिति में **"नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्"** (२४५) सूत्र से सि का लोप कर, "चर्मन्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का नित्य लोप प्राप्त होने पर, **"पृथक्करणान् नपुंसकस्य वा"** इस वार्तिक के कारण सम्बुद्धि में नकार का लोप विकल्प से होने पर, **"हे चर्म"** प्रयोग सिद्ध होता है। लोप के अभाव में **"हे चर्मन्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्विवचन एवं बहुवचन में पूर्ववत् **हे चर्मणी, हे चर्माणि,** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

चर्मणा – चर्मन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "चर्मन् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर, **"चर्मणा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चर्मभ्याम् – चर्मन् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "चर्म + भ्याम्" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, **"अकारो दीर्घं घोषवति"** (१४०) सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"चर्मभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चर्मणि – चर्मन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "चर्मन् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रषृवर्णेभ्यो नो णमनन्त्यः स्वरहयवकवर्गपवर्गान्तरो पि"** (१३६) सूत्र से नकार के स्थान पर णकार आदेश हो कर, **"चर्मणि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चर्मसु – चर्मन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सु विभक्ति के आने पर, "चर्मन् + सु" इस स्थिति में **"लिङ्गान्तनकारस्य"** (१७६) सूत्र से नकार का लोप कर, **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र द्वारा अकार के स्थान पर एकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२७७) सूत्र से नकार का लोप अलुप्तवत् होने से **"चर्मसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चर्मन् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	चर्म	चर्मणी	चर्माणि
सम्बोधन	हे चर्म, चर्मन्	हे चर्मणी	हे चर्माणि
द्वितीया	चर्म	चर्मणी	चर्माणि
तृतीया	चर्मणा	चर्मभ्याम्	चर्मभिः
चतुर्थी	चर्मणे	चर्मभ्याम्	चर्मभ्यः
पंचमी	चर्मणः	चर्मभ्याम्	चर्मभ्यः
षष्ठी	चर्मणः	चर्मणोः	चर्मणाम्
सप्तमी	चर्मणि	चर्मणोः	चर्मसु

इसी प्रकार वर्मन्, कर्मन्, शर्मन् इत्यादि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

वर्मन् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	वर्म	वर्मणी	वर्माणि
सम्बोधन	हे वर्म, वर्मन्	हे वर्मणी	हे वर्माणि
द्वितीया	वर्म	वर्मणी	वर्माणि
तृतीया	वर्मणा	वर्मभ्याम्	वर्मभिः
चतुर्थी	वर्मणे	वर्मभ्याम्	वर्मभ्यः
पंचमी	वर्मणः	वर्मभ्याम्	वर्मभ्यः
षष्ठी	वर्मणः	वर्मणोः	वर्मणाम्
सप्तमी	वर्मणि	वर्मणोः	वर्मसु

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"विरामव्यञ्जनादिष्वनडुन्नहिवन्सीनां च"** (३१६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

सि और अम् विभक्ति के लोप होने पर विराम होता है तथा भ्याम्, भिस् आदि व्यञ्जनादि विभक्तियाँ कहलाती हैं। इन विभक्तियों के होने पर, अहन् के नकार के स्थान पर सकार आदेश होता है।

अहः – अहन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के एकवचन में सि और अम् विभक्ति के आने पर, "अहन् + स्–अम्" इस स्थिति में **"नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्"** (२४५) सूत्र से सि और अम् का लोप कर, "अहन्" इस स्थिति में **"अह्नः सः"** (३४२) सूत्र से नकार के स्थान पर सकार आदेश कर, "अहस्" इस स्थिति में **"रेफसो–र्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"अहः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अह्नी, अहनी – अहन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "अहन् + औ" इस स्थिति में **"औरीम्"** (२३७) सूत्र से औ के स्थान पर ई आदेश कर, "अहन् + ई" इस स्थिति में **"ईङ्योर्वा"** (२५१) सूत्र द्वारा अन् के अकार का वैकल्पिक लोप कर, "अह्न् + ई" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अह्नी"** प्रयोग सिद्ध होता है। लोप के अभाव में **"अहनी"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अहानि – अहन् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "अहन् + अस्" इस स्थिति में **"जस्–शसौ नपुंसके"** (२३८) सूत्र से जस्–शस् की घुट् संज्ञा कर, **"जस्शसोः शिः"** (२३६) सूत्र से जस्–शस् के स्थान पर शि आदेश कर, "अहन् + इ" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से दीर्घ कर, "अहान् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अहानि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **हे अहः, हे अह्नी, अहनी, हे अहानि,** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

अह्ना – अहन् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "अहन् + आ" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से अन् के अकार का लोप कर, "अह्न् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अह्ना"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अह्नोः – अहन् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "अहन् + ओस्" इस स्थिति में **"अवमसंयोगादनो लोपो लुप्तवच्च पूर्वविधौ"** (२५०) सूत्र से अन् के अकार का लोप कर, "अह्न् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"अह्नोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अह्नि, अहनि – अहन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "अहन् + इ" इस स्थिति में **"ईङ्योर्वा"** (२५१) सूत्र द्वारा वैकल्पिक अन् के अकार का लोप कर, "अह्न् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अह्नि"** प्रयोग सिद्ध होता है। लोप के अभाव में **"अहनि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अहःसु – अहन् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "अहन् + सु" इस स्थिति में **"अह्नः सः"** (३४२) सूत्र से नकार के स्थान पर सकार आदेश कर, "अहस् + सु" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश कर, "अहः + सु" इस स्थिति में **"शे षे से वा वा पररूपम्"** (१०३) सूत्र द्वारा वैकल्पिक विसर्ग के स्थान पर, सकार आदेश करने पर, **"अहस्सु"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"अहःसु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अहन् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अहः	अह्नी, अहनी	अहानि
सम्बोधन	हे अहः	हे अह्नी, अहनी	अहानि
द्वितीया	अहः	अह्नी, अहनी	अहानि
तृतीया	अह्ना	अहोभ्याम्	अहोभिः
चतुर्थी	अह्ने	अहोभ्याम्	अहोभ्यः
पंचमी	अह्नः	अहोभ्याम्	अहोभ्यः
षष्ठी	अह्नः	अह्नोः	अह्नाम्
सप्तमी	अह्नि, अहनि	अह्नोः	अहःसु

।। इस प्रकार नपुंसकलिंग में नकारान्त शब्द का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

नपुंसकलिंग में पकारान्त, बकारान्त, भकारान्त शब्द अप्रसिद्ध हैं।

कैः – किम् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "किम् + भिस्" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + भिस्" इस स्थिति में **"भिसैस्वा"** (१४१) सूत्र से भिस् के स्थान पर "ऐस्" आदेश कर, "क + ऐस्" इस स्थिति में **"एकारे ऐ ऐकारे च"** (३७) सूत्र से अकार के स्थान पर ऐकार आदेश तथा ऐस् के ऐकार का लोप कर, "कैस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"कैः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कस्मै – किम् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "किम् + ए" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + ए" इस स्थिति में **"स्मै सर्वनाम्नः"** (१५३) सूत्र से ङे के स्थान पर "स्मै" आदेश हो कर **"कस्मै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

केभ्यः – किम् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "किम् + भ्यस्" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "के + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"केभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कस्माद्, कस्मात् – किम् शब्द से पञ्चमी विभक्ति के एकवचन में "ङसि" विभक्ति के आने पर, "किम् + अस्" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + अस्" इस स्थिति में **"ङसिः स्मात्"** (१५४) सूत्र से ङसि के स्थान पर "स्मात्" आदेश कर, "कस्मात्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र से तकार के स्थान पर दकार अथवा तकार आदेश हो कर **"कस्माद्, कस्मात्"** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

कस्य – किम् शब्द से षष्ठी विभक्ति के एकवचन में "ङस्" विभक्ति के आने पर, "किम् + अस्" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + अस्" इस स्थिति में **"ङस् स्यः"** (१४५) सूत्र से ङस् के स्थान पर "स्य" आदेश हो कर, **"कस्य"** प्रयोग सिद्ध होता है।

कयोः – किम् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में "ओस्" विभक्ति के आने पर, "किम् + ओस्" इस स्थिति में **"किम् कः"** (३०३) सूत्र से किम् के स्थान पर "क" आदेश कर, "क + ओस्" इस स्थिति में **"ओसि च"** (१४६) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "के + ओस्" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से "एकार" के स्थान पर अय् आदेश कर, "कय् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की

इदं शब्द में भेद है।

इदम् शब्द से प्रथमा–द्वितीया विभक्ति के एकवचन में सि और अम् विभक्ति के आने पर, इदम् के स्थान पर इदम् आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते है।

(०००)विधिसूत्रम् – इदं नपुंसके पि च ।।३४३।।

नपुंसकलिङ्गे स्यमि च परे इदम् शब्दस्य इदमादेशो भवति। इदम्। इमे। इमानि। इदम्। इमे। इमानि। पुनरप्येवं। इत्यादि। यकारान्तो अप्रसिद्धः।

अर्थ – नपुंसकलिंग में सि अथवा अम् परे होने पर इदम् शब्द के स्थान पर इदम् आदेश होता है।

शंका – इदम् शब्द के स्थान पर इदम् ही आदेश करना क्या उचित है ?

समाधान – आपकी शंका उचित है। परन्तु आप विस्मृत हो गये हैं। यदि इदम् के स्थान पर इदम् आदेश नहीं करते तो **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश हो जाता।

इदम् – इदम् शब्द से प्रथमा–द्वितीया विभक्ति के एकवचन में सि और अम् विभक्ति के आने पर, "इदम्+स्–अम्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश की प्राप्ति थी परन्तु **"इदं नपुंसके पि च"** (३४३) सूत्र से इदम् के स्थान पर "इदम्" आदेश कर, "इदम्+स्–अम्" इस स्थिति में **"नपुंसकात् स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्"** (२४५) सूत्र से सि और अम् का लोप करने पर, **"इदम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इमे – इदम् शब्द से प्रथमा–द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "इदम् + औ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + औ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + औ" इस स्थिति में **"दो द्वेर्मः"** (३०५) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "इम + औ" इस स्थिति में **"औरीम्"** (२३७) सूत्र से औ के स्थान पर ईकार आदेश कर, "इम + ई" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्णे ए"** (२७) सूत्र से सन्धि करने पर **"इमे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इमानि – इदम् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "इदम् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + अस्" इस स्थिति में **"दो द्वेर्मः"** (३०५) सूत्र से

अस्मै – इदम् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में "ङे" विभक्ति के आने पर, "इदम् + ए" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + ए" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + ए" इस स्थिति में **"अद् व्यञ्जने नक्"** (३०७) सूत्र से इदम् शब्द के स्थान पर अत् आदेश कर, तकार का अनुबन्ध लोप कर, "अ + ए" इस स्थिति में **"स्मै सर्वनाम्नः"** (१५३) सूत्र से "ङे" के स्थान पर "स्मै" आदेश करने पर **"अस्मै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

एभ्यः – इदम् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "इदम् + भ्यस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + भ्यस्" इस स्थिति में **"अद् व्यञ्जने नक्"** (३०७) सूत्र से इदम् के स्थान पर अत् आदेश कर, "अ + भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "ए + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"एभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अस्मात् – इदम् शब्द से पंचमी विभक्ति के एकवचन में "ङसि" विभक्ति के आने पर, "इदम् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + अस्" इस स्थिति में **"अद् व्यञ्जने नक्"** (३०७) सूत्र से इदम् के स्थान पर अत् आदेश कर, तकार का अनुबन्ध लोप कर, "अ + अस्" इस स्थिति में **"ङसि स्मात्"** (१५४) सूत्र से "ङसि" के स्थान पर "स्मात्" आदेश हो कर **"अस्मात्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अस्य – इदम् शब्द से षष्ठी विभक्ति के एकवचन में "ङस्" विभक्ति के आने पर, "इदम् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "इद + अस्" इस स्थिति में **"अद् व्यञ्जने नक्"** (३०७) सूत्र से इदम् के स्थान पर अत् आदेश कर, तकार का अनुबन्ध लोप कर, "अ + अस्" इस स्थिति में **"ङस् स्य"** (१४५) सूत्र से "ङस्" के स्थान पर "स्य" आदेश हो कर **"अस्य"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अनयोः – इदम् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में "ओस्" विभक्ति के आने पर, "इदम् + ओस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से मकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "इद अ + ओस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र

अन्वादेश के विषय में द्वितीया विभक्ति, टा तथा ओस् विभक्तियों में **"एतस्य चान्वादेशे द्वितीयायां चैनः"** (२८८) सूत्र से इदम् के स्थान पर एन आदेश हो कर, **"एनम्, एने, एनानि। एनेन। एनयोः**। इत्यादि प्रयोग सिद्ध होते हैं।

इदम् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	इदम्	इमे	इमानि
सम्बोधन	हे इदम्	हे इमे	हे इमानि
द्वितीया	इदम्, एनम्	इमे, एने	इमानि, एनानि
तृतीया	अनेन, एनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पंचमी	अस्मात्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	अनयोः, एनयोः	एषाम्
सप्तमी	अस्मिन्	अनयोः, एनयोः	एषु

।। इस प्रकार नपुंसकलिंग में मकारान्त शब्द का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

यकारान्तो प्रसिद्धः। रकारान्तो नपुंसकलिङ्गो वार् शब्दः। वाः। वारी। वारि। पुनरप्येवम्। इत्यादि। चत्वार् शब्दस्य तु भेदः। जस्शसोः शिः। चत्वारि। इत्यादि। लवशकारान्ता अप्रसिद्धाः।

नपुंसकलिंग में यकारान्त शब्द अप्रसिद्ध हैं।

अब रकारान्त नपुंसकलिंग में वार् शब्द का विवेचन करते हैं।

वाः – वार् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के एकवचन में सि और अम् विभक्ति के आने पर, "वार् + स्–अम्" इस स्थिति में **"नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्"** (२४५) सूत्र से सि और अम् का लोप कर, "वार्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से रेफ के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर, **"वाः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वारी – वार् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "वार् + औ" इस स्थिति में **"औरीम्"** (२३७) सूत्र से औ के स्थान पर ई आदेश कर, "वार् + ई" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"वारी"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वारः – वार् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "वार् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"वारः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वारोः – वार् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "वार् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर **"वारोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वारि – वार् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "वार् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"वारि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वार्षु – वार् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "वार् + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश करने पर **"वार्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वार् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	वाः	वारी	वारि
सम्बोधन	हे वाः	हे वारी	हे वारि
द्वितीया	वाः	वारी	वारि
तृतीया	वारा	वार्भ्याम्	वार्भिः
चतुर्थी	वारे	वार्भ्याम्	वार्भ्यः
पंचमी	वारः	वार्भ्याम्	वार्भ्यः
षष्ठी	वारः	वारोः	वाराम्
सप्तमी	वारि	वारोः	वार्षु

चत्वार् शब्द में भेद है। चत्वार् शब्द के प्रयोग बहुवचन में ही चलते हैं।

चतुर्षु – चत्वार् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "चत्वार् + सु" इस स्थिति में **"चतुरो वाशब्दस्योत्वम्"** (३०६) सूत्र से वा के स्थान पर उकार आदेश कर, "चत् उर् + सु" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "चतुर् + सु" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र की प्राप्ति का **"रः सुपि"** (३१२) सूत्र से निषेध कर, **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीय–षान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"चतुर्षु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

चत्वार् शब्द की रूपमाला यथा–

चत्वारि चत्वारि हे चत्वारि चतुर्भिः चतुर्भ्यः चतुर्भ्यः चतुर्णाम् चतुर्षु

।। इस प्रकार नपुंसकलिंग में रकारान्त शब्द का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

नपुंसकलिंग में लकारान्त, वकारान्त, शकारान्त शब्द अप्रसिद्ध हैं।

षकारान्तस्य षष्शब्दस्य पूर्ववत्। सकारान्तो नपुंसकलिङ्गो यशस् शब्दः। यशः। यशसी। सान्तमहतोरित्यादिना दीर्घः। यशांसि। पुनरपि। यशसा। यशोभ्याम्। यशोभिः। एवं वचस्–ओजस्–पयस्–तपस्–वयस्–प्रभृतयः। इत्यादि। सर्पिस् शब्दस्य तु भेदः। सर्पिः। सर्पिषी। सर्पींषि। पुनरप्येवम्। सर्पिषा।

षकारान्त नपुंसकलिंग में षष् शब्द है। षष् शब्द में भेद है। षष् शब्द त्रिलिंगी है। षष् शब्द के रूप बहुवचन में ही चलते हैं।

षट्–ड् – षष् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "षष् + अस्" इस स्थिति में **"कतेश्च जस्शसोर्लुक्"** (१७४) सूत्र से जस्–शस् का लुक् कर, "षष्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "षड्" इस स्थिति में **"पदान्ते धुटां प्रथमः"** (७६) सूत्र से डकार के स्थान पर टकार आदेश कर, "षट्" इस स्थिति में **"वा विरामे"** (२४२) सूत्र द्वारा वैकल्पिक टकार के स्थान पर डकार आदेश करने पर, **"षड्"** प्रयोग सिद्ध होता है। विकल्प के अभाव में **"षट्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

षड्भिः – षष् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर "षष् + भिस्" इस स्थिति में **"हशषछान्तेजादीनां डः"** (२७०) सूत्र से षकार के स्थान पर डकार आदेश कर, "षड् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश हो कर, **"षड्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यशांसि – यशस् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "यशस् + अस्" इस स्थिति में **"जस्–शसौ नपुंसके"** (२३८) सूत्र से जस्–शस् की घुट् संज्ञा कर, **"जस्शसोः शिः"** (२३६) सूत्र से जस्–शस् के स्थान पर शि आदेश कर, "यशस् + इ" इस स्थिति में **"धुट्स्वराद्घुटि नुः"** (२४०) सूत्र से नु का आगम कर, "यश न्स् + इ" इस स्थिति में **"सान्तमहतोर्नोपधायाः"** (२८५) सूत्र से दीर्घ कर, "यशान्स् + इ" इस स्थिति में **"मनोरनुस्वारो धुटि"** (२५७) सूत्र से नकार के स्थान पर अनुस्वार आदेश कर, "यशांस् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"यशांसि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **हे यशः, हे यशसी, हे यशांसि,** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

यशसा – यशस् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, "यशस् + आ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"यशसा"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यशोभ्याम् – यशस् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "यशस् + भ्याम्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश कर, "यशः + भ्याम्" इस स्थिति में **"अघोषवतोश्च"** (१०५) सूत्र से विसर्ग के स्थान पर उकार आदेश कर, "यश उ + भ्याम्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से सन्धि करने पर, **"यशोभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यशोभिः – यशस् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "यशस् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश कर, "यशः + भिस्" इस स्थिति में **"अघोषवतोश्च"** (१०५) सूत्र से विसर्ग के स्थान पर उकार आदेश कर, "यश उ + भिस्" इस स्थिति में **"उवर्णे ओ"** (३०) सूत्र से सन्धि करने पर, **"यशोभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यशसे – यशस् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "यशस् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"यशसे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

यशस् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	यशः	यशसी	यशांसि
सम्बोधन	हे यशः	हे यशसी	हे यशांसि
द्वितीया	यशः	यशसी	यशांसि
तृतीया	यशसा	यशोभ्याम्	यशोभिः
चतुर्थी	यशसे	यशोभ्याम्	यशोभ्यः
पंचमी	यशसः	यशोभ्याम्	यशोभ्यः
षष्ठी	यशसः	यशसोः	यशसाम्
सप्तमी	यशसि	यशसोः	यशःसु

इसी प्रकार वचस्, ओजस्, पयस्, तपस्, वयस् इत्यादि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

सर्पिस् शब्द में भेद है।

सर्पिः – सर्पिस् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के एकवचन में सि और अम् विभक्ति के आने पर, "सर्पिस् + स्–अम्" इस स्थिति में **"नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्"** (२४५) सूत्र से सि और अम् का लोप कर, "सर्पिस्" इस स्थिति में **"रेफसो–र्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर, **"सर्पिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सर्पिषी – सर्पिस् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "सर्पिस् + औ" इस स्थिति में **"औरीम्"** (२३७) सूत्र से औकार के स्थान पर ईकार आदेश कर, "सर्पिस् + ई" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "सर्पिष् + ई" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सर्पिषी"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सर्पींषि – सर्पिस् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस्–शस् विभक्ति के आने पर, "सर्पिस् + अस्" इस स्थिति में **"जस्–शसौ नपुंसके"** (२३८) सूत्र से जस्–शस् की घुट् संज्ञा कर, **"जस्शसोः शिः"** (२३६) सूत्र से जस्–शस् के स्थान पर शि आदेश कर, "सर्पिस् + इ" इस स्थिति में **"धुट्स्वराद्घुटि नुः"** (२४०) सूत्र से नु का आगम

शंका – सर्पिस् आदि शब्द के सकार को **"घोषवत्स्वरेषु"** (१०४) सूत्र से ही रेफ आदेश हो जाता, फिर पुनः सकार को रेफ करने के लिये उपर्युक्त सूत्र क्यों कहा ?

समाधान – आपकी शंका उचित है, परन्तु **"स्यादिधुटि पदान्तवत्"** (३३०) सूत्र द्वारा पदान्तवत् कार्य होने से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश की प्राप्ति थी। अतः उपर्युक्त सूत्र द्वारा सकार के स्थान पर रेफ आदेश का कथन किया है।

सर्पिर्भिः – सर्पिस् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "सर्पिस् + भिस्" इस स्थिति में **"इसुस्दोषां घोषवति रः"** (३४४) सूत्र से सकार के स्थान पर रकार आदेश कर, "सर्पिर् + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्ग आदेश करने पर, **"सर्पिर्भिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सर्पिषे – सर्पिस् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के एकवचन में ङे विभक्ति के आने पर, "सर्पिस् + ए" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "सर्पिष् + ए" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"सर्पिषे"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सर्पिर्भ्यः – सर्पिस् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "सर्पिस् + भ्यस्" इस स्थिति में **"इसुस्दोषां घोषवति रः"** (३४४) सूत्र से सकार के स्थान पर रकार आदेश कर, "सर्पिर् + भ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर, विसर्जनीय आदेश करने पर, **"सर्पिर्भ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सर्पिषः – सर्पिस् शब्द से पंचमी – षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङसि–ङस् विभक्ति के आने पर, "सर्पिस् + अस्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "सर्पिष् + अस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर **"सर्पिषः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सर्पिषोः – सर्पिस् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "सर्पिस् + ओस्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र से सकार के स्थान पर षकार आदेश कर, "सर्पिष् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसो–**

इसी प्रकार धनुस्, दोस् इत्यादि शब्दों के रूप जानना चाहिये।

अदस् शब्द में भेद है।

अदः – अदस् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के एकवचन में सि और अम् विभक्ति के आने पर, "अदस् + स्–अम्" इस स्थिति में **"नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तम्"** (२४५) सूत्र से सि और अम् का लोप कर, "अदस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"अदः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमू – अदस् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "अदस् + औ" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + औ" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + औ" इस स्थिति में **"औरीम्"** (२३७) सूत्र से औकार के स्थान पर, ईकार आदेश कर, "अद + ई" इस स्थिति में **"अवर्ण इवर्णे ए"** (२७) सूत्र से सन्धि कर, "अदे" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमे" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से एकार के स्थान पर ऊकार आदेश कर **"अमू"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमूनि – अदस् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में जस् और शस् विभक्ति के आने पर, "अदस् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + अस्" इस स्थिति में **"जस्शसोः नपुंसके"** (२३८) सूत्र से जस्–शस् की घुट् संज्ञा कर, **"जस्शसोः शिः"** (२३६) सूत्र से जस्–शस् के स्थान पर शि आदेश कर, अनुबन्ध लोप कर, "अद + इ" इस स्थिति में **"धुट्स्वराद्घुटि नुः"** (२४०) सूत्र से नु का आगम कर, "अद न् + इ" इस स्थिति में **"घुटि चासम्बुद्धौ"** (१७७) सूत्र से नान्त की उपधा को दीर्घ कर, "अदान् + इ" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमान् + इ" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से आकार के स्थान पर ऊकार आदेश कर, "अमून् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"अमूनि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

सम्बोधन में भी पूर्ववत् **हे अदः, हे अमू, हे अमूनि,** प्रयोग सिद्ध होते हैं।

स्थान पर उकार आदेश कर, "अमु + स्मै" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र द्वारा सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर, **"अमुष्मै"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमीभ्यः – अदस् शब्द से चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "अदस् + भ्यस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + भ्यस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद+भ्यस्" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "अदे + भ्यस्" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमे+भ्यस्" इस स्थिति में **"एद्बहुत्वे त्वी"** (३२६) सूत्र से एकार के स्थान पर ईकार आदेश कर, "अमीभ्यस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र द्वारा सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश हो कर **"अमीभ्यः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुष्मात् – अदस् शब्द से पञ्चमी विभक्ति के एकवचन में ङसि विभक्ति के आने पर, "अदस् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + अस्" इस स्थिति में **"ङसि स्मात्"** (१५४) सूत्र से ङसि के स्थान पर स्मात् आदेश कर, "अद + स्मात्" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अम + स्मात्" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमु + स्मात्" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्यय–विकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र द्वारा सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"अमुष्मात्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमुष्य – अदस् शब्द से षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङस् विभक्ति के आने पर, "अदस् + अस्" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + अस्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + अस्" इस स्थिति में **"ङस् स्यः"** (१४५) सूत्र से ङस् के स्थान पर स्य आदेश कर, "अद + स्य" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अम + स्य" इस स्थिति में **"उत्वं मात्"** (३२५) सूत्र से अकार के स्थान पर उकार आदेश कर, "अमु + स्य" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्ययविकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र द्वारा सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"अमुष्य"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अमीषु – अदस् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "अदस् + सु" इस स्थिति में **"त्यदादीनाम विभक्तौ"** (१७२) सूत्र से सकार के स्थान पर अकार आदेश कर, "अद अ + सु" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप कर, "अद + सु" इस स्थिति में **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "अदे + सु" इस स्थिति में **"अदसः पदे मः"** (३२४) सूत्र से दकार के स्थान पर मकार आदेश कर, "अमे + सु" इस स्थिति में **"एद्बहुत्वे त्वी"** (३२६) सूत्र से एकार के स्थान पर ईकार आदेश कर, "अमी + सु" इस स्थिति में **"नामिकरपरः प्रत्यय–विकारागमस्थः सिः षं नुविसर्जनीयषान्तरो पि"** (१५०) सूत्र द्वारा सकार के स्थान पर षकार आदेश हो कर **"अमीषु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अदस् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	अदः	अमू	अमूनि
सम्बोधन	हे अदः	हे अमू	हे अमूनि
द्वितीया	अदः	अमू	अमूनि
तृतीया	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
चतुर्थी	अमुष्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
पंचमी	अमुष्मात्	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
षष्ठी	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
सप्तमी	अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु

नपुंसकलिंग में हकारान्त शब्द अप्रसिद्ध है।

।। इस प्रकार व्यञ्जनान्त नपुंसकलिंग का प्रकरण पूर्ण हुआ।।

❑ ❑ ❑

युष्मद् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वितीया	त्वाम्, त्वा	युवाम्, वाम्	युष्मान्, वः
तृतीया	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
चतुर्थी	तुभ्यम्, ते	युवाभ्याम्, वाम्	युष्मभ्यम्, वः
पंचमी	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
षष्ठी	तव, ते	युवयोः, वाम्	युष्माकम्, वः
सप्तमी	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

अस्मद् शब्द की रूपमाला यथा–

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वितीया	माम्, मा	आवाम्, नौ	अस्मान्, नः
तृतीया	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
चतुर्थी	मह्यम्, मे	आवाभ्याम्, नौ	अस्मभ्यम्, नः
पंचमी	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
षष्ठी	मम, मे	आवयोः, नौ	अस्माकम्, नः
सप्तमी	मयि	आवयोः	अस्मासु

युष्मद् सि अस्मद् सि इति स्थिते।

अब युष्मद् और अस्मद् शब्द से प्रथमा आदि विभक्तियों के एकवचन आदि में सि आदि विभक्तियों के आने पर, युष्मद् और अस्मद् शब्द के स्थान पर क्रमशः त्वत् और मत् आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(०००)विधिसूत्रम् – त्वन्मदोरेकत्वे ।।३४५।।

एकत्वे वर्तमानयोर्युष्मदस्मदोः स्थाने त्वन्मदौ भवतः।

अर्थ – एकवचन की विवक्षा में वर्तमान युष्मद् और अस्मद् शब्द के स्थान पर क्रमशः त्वत् और मत् आदेश होता है।

अब युष्मद् और अस्मद् शब्द से प्रथमा–द्वितीया आदि विभक्ति के द्विवचन आदि में औ आदि विभक्ति के आने पर, युष्मद् और अस्मद् शब्द के स्थान पर क्रमशः युव और आव आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१४६)विधिसूत्रम् – युवावौ द्विवाचिषु।।३४७।।

युष्मदस्मदोर्द्विवाचिषु परतो युवावौ भवतः यथासंख्यम्। अन्तलोपे सति–

अर्थ – द्विवचन की विवक्षा में युष्मद् और अस्मद् के स्थान पर क्रमशः युव और आव आदेश होते हैं।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"युष्मदस्मदोः पदं पदात्षष्ठीचतुर्थी–द्वितीयासु वस्नसौ"** (३५६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

द्विवचन विभक्तियाँ – औ, औ, भ्याम्, भ्याम्, भ्याम्, ओस्, ओस् ये द्विवचन की विभक्तियाँ कहलाती हैं।

अर्थात् औ, औ, भ्याम्, भ्याम्, भ्याम्, ओस्, ओस् इन विभक्तियों के आने पर युष्मद् के स्थान पर युव और अस्मद् के स्थान पर आव आदेश होता है। यह आदेश युष्म् और अस्म् के स्थान पर होता है। दोनों के अद् का लोप **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से हो जाता है। "अद्" के लोप के लिये, **"आदिलोपो न्त्यलोपश्च, मध्यलोपस्तथैव च। विभक्ति–पदवर्णानां, दृश्यते शार्ववर्मिके।।"** इत्यादि श्लोक द्वारा, सूत्र नं. (३५५) की टीका में कहा है।

युष्मद् और अस्मद् शब्द से प्रथमा – द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में औ विभक्ति के आने पर, "युष्मद् + औ" तथा "अस्मद् + औ" इस स्थिति में **"युवावौ द्विवाचिषु"** (३४७) सूत्र से युष्मद् के युष्म् के स्थान पर, युव और अस्मद् के अस्म् के स्थान पर आव आदेश कर, "युव – अद् + औ" तथा "आव – अद् + औ" इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"**(३५०) सूत्र से अद् का लोप कर, "युव + औ" तथा आव + औ" इस स्थिति में औ और अम् के स्थान पर आम् आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१५०)विधिसूत्रम् – अमौ चाम्।।३४८।।

युष्मदस्मदादिभ्यः परः अम् औ च आम् भवति। सवर्णदीर्घः। युवाम्। आवाम्।

अर्थ – युष्मद् और अस्मद् से परे "अम्" और "औ" विभक्ति के स्थान पर आम् आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"युष्मदस्मदोः पदं पदात्षष्ठीचतुर्थी–द्वितीयासु वस्नसौ"** (३५६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

अर्थात् – जस् विभक्ति सहित युष्मद् शब्द के स्थान पर यूयम् और अस्मद् शब्द के स्थान पर, वयम् आदेश होता है। यथा – युष्मद् + जस् – यूयम्। अस्मद् + जस् – वयम्।

यूयम् – युष्मद् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "युष्मद् + अस्" इस स्थिति में **"यूयम् वयम् जसि"** (३४६) सूत्र से जस् विभक्ति सहित युष्मद् के स्थान पर "यूयम्" आदेश हो कर **"यूयम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

वयम् – अस्मद् शब्द से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् विभक्ति के आने पर, "अस्मद् + अस्" इस स्थिति में **"यूयम् वयम् जसि"** (३४६) सूत्र से विभक्ति सहित अस्मद् के स्थान पर "वयम्" आदेश हो कर **"वयम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

द्वितीया विभक्ति के एकवचन में अम् विभक्ति के आने पर युष्मद् + अम्, अस्मद् + अम् इस स्थिति मे **"त्वन्मदोरेकत्वे"** (३४५) सूत्र से युष्मद् के स्थान पर त्वत् और अस्मद् के स्थान पर मत् आदेश कर, "त्वत् + अम्, मत् + अम् इस स्थिति में त्वत् और मत् के अन्त का लोप करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१४८)विधिसूत्रम् – एषां विभक्तावन्तलोपः।।३५०।।

एषां युष्मदादीनां अन्तस्थ लोपो भवति विभक्तौ परतः। सवर्णे दीर्घः। त्वाम्। माम्। युवाम्। आवाम्।

अर्थ – विभक्ति परे होने पर युष्मद् और अस्मद् के अन्त का लोप होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"युष्मदस्मदोः पदं पदात्षष्ठीचतुर्थी–द्वितीयासु वस्नसौ"** (३५६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

भावार्थ – युष्मद् और अस्मद् शब्द के अन्त में दकार है। परन्तु उपर्युक्त सूत्र द्वारा सि आदि विभक्ति के होने पर, इन दोनों शब्दों के अन्त दकार का अथवा अद् का लोप होता है। प्रसंगानुसार अन्त दकार का अथवा अद् का लोप सूत्र नं. ३५५ की टीका में उल्लेखित श्लोक द्वारा करेंगे। श्लोक यथा –

युष्मद् और अस्मद् शब्द से परे शस् के स्थान पर आन् आदेश कर, "युष्मद् + आन्" तथा "अस्मद् + आन्" बना।

युष्मान् – युष्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "युष्मद् + शस्, इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से युष्मद् के दकार का लोप कर, "युष्म + शस्, इस स्थिति में **"आन् शसः"** (३५१) सूत्र से शस् के स्थान पर "आन्" आदेश कर, "युष्म + आन्, इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ करने पर, **"युष्मान्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अस्मान् – अस्मद् शब्द से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में शस् विभक्ति के आने पर, "अस्मद् + शस्, इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से अस्मद् के दकार का लोप कर, "अस्म + शस्, इस स्थिति में **"आन् शसः"** (३५१) सूत्र से शस् के स्थान पर "आन्" आदेश हो कर, अस्म + आन्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से दीर्घ करने पर **"अस्मान्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

नोट – यहाँ **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से युष्मद् और अस्मद् के अद् का भी लोप हो सकता है। अद् का लोप होने पर, **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र द्वारा दीर्घ आदेश नहीं होगा। **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से प्रयोग बनेगा।

अब युष्मद् और अस्मद् शब्द से तृतीया विभक्ति के एकवचन में टा विभक्ति के आने पर, युष्मद् और अस्मद् शब्द के अन्त को एकार आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१५६)विधिसूत्रम – एत्वमस्थानिनि।।३५२।।

युष्मदादीनामन्तस्य एत्वं भवत्यस्थानिनि अनादेशिनि प्रत्यये परे। त्वया। मया।

अर्थ – अस्थानी अनादेशी विभक्ति परे होने पर युष्मद् और अस्मद् शब्द के अन्त के स्थान पर एकार आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"युष्मदस्मदोः पदं पदात्षष्ठीचतुर्थी–द्वितीयासु वस्नसौ"** (३५६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

भावार्थ – जिन विभक्तियों के स्थान पर कोई आदेश नहीं होता वे विभक्तियाँ अनादेशी (अनादेश) कहलाती हैं। युष्मद् और अस्मद् शब्द को कहीं विभक्ति सहित आदेश हो रहा है। अथवा किन्हीं स्थानों पर विभक्तियों को आदेश हो रहा है। जहाँ विभक्तियों को कोई आदेश नहीं होगा वहाँ युष्मद् और अस्मद् शब्द के अन्त को एकार आदेश होगा।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"युष्मदस्मदोः पदं पदात्षष्ठीचतुर्थी–द्वितीयासु वस्नसौ"** (३५६) सूत्र की तथा **"एत्वमस्थानिनि"** (३५२) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

भ्याम्, भिस् और सुप् विभक्ति के स्थान पर कोई आदेश नहीं होता है अतः ये आदेश रहित विभक्तियाँ कहलाती हैं।

युष्मद् और अस्मद् शब्द से भ्याम् विभक्ति के आने पर, युष्मद् शब्द के स्थान पर युव तथा अस्मद् शब्द के स्थान पर आव आदेश होता है। उस युव और आव के अकार के स्थान पर आकार आदेश होता है।

युवाभ्याम् – युष्मद् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "युष्मद् + भ्याम्", इस स्थिति में **"युवावौ द्विवाचिषु"** (३४७) सूत्र से युष्मद् शब्द के युष्म् के स्थान पर युव आदेश कर, "युव अद् + भ्याम्", इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से अद् का लोप कर, "युव + भ्याम्" इस स्थिति में **"आत्वं व्यञ्जनादौ"** (३५३) सूत्र से "युव" के अकार के स्थान पर आकार आदेश करने पर "युवा + भ्याम् = **युवाभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

आवाभ्याम् – अस्मद् शब्द से तृतीया – चतुर्थी – पंचमी विभक्ति के द्विवचन में भ्याम् विभक्ति के आने पर, "अस्मद् + भ्याम्", इस स्थिति में **"युवावौ द्विवाचिषु"** (३४७) सूत्र से अस्मद् शब्द के अस्म् के स्थान पर आव आदेश कर, "आव अद् + भ्याम्", इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से अद् का लोप कर, "आव + भ्याम्" इस स्थिति में **"आत्वं व्यञ्जनादौ"** (३५३) सूत्र से "आव" के अकार के स्थान पर आकार आदेश करने पर "आवा + भ्याम् = **"आवाभ्याम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

नोट – यहाँ **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से यदि युष्मद् और अस्मद् के दकार का लोप करते तो **"युवावौ द्विवाचिषु"** (३४७) सूत्र से युष्मद् और अस्मद् के युष्म और अस्म के स्थान पर, युव और आव आदेश होता।

युष्माभिः – युष्मद् शब्द से तृतीया विभक्ति के बहुवचन में भिस् विभक्ति के आने पर, "युष्मद् + भिस्" इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से दकार का लोप कर, "युष्म + भिस्" इस स्थिति में **"आत्वं व्यञ्जनादौ"** (३५३) सूत्र से युष्म के अकार के स्थान पर "आकार" आदेश कर, "युष्मा + भिस्" इस स्थिति में **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्जनीय आदेश करने पर **"युष्माभिः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अब युष्मद् और अस्मद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, चतुर्थी विभक्ति के भ्यस् के स्थान पर अभ्यम् आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१५७)विधिसूत्रम् – भ्यसभ्यम्।।३५५।।

एभ्यो युष्मदादिभ्यः परो भ्यस् अभ्यम् भवति। युष्मभ्यम्। अस्मभ्यम्।

अर्थ – युष्मद् और अस्मद् शब्द से परे **"भ्यस्"** के स्थान पर **"अभ्यम्"** आदेश होता है।

शंका – युष्मद् और अस्मद् शब्द से परे भ्यस् विभक्ति चतुर्थी और पंचमी विभक्ति के बहुवचन में आती है। क्या दोनों स्थानों पर, भ्यस् के स्थान पर अभ्यम् आदेश करना है?

समाधान – आपकी शंका उचित है, परन्तु भ्यस् के स्थान पर अभ्यम् आदेश मात्र चतुर्थी विभक्ति में ही होता है। क्योंकि अग्रिम सूत्र **"अत् पञ्चम्यद्वित्वे"** (३५६) सूत्र द्वारा पंचमी के भ्यस् के स्थान पर, अत् आदेश होता है। अतः उपर्युक्त सूत्र में चतुर्थी विभक्ति के भ्यस् को ग्रहण करना चाहिये।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"युष्मदस्मदोः पदं पदात्षष्ठीचतुर्थी–द्वितीयासु वस्नसौ"** (३५६) सूत्र की तथा **"अत् पञ्चम्यद्वित्वे"** (३५६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

शंका – "अभ्यम्" में अकार का ग्रहण किस लिये किया है?

समाधान – अभ्यम् में अकार का ग्रहण नहीं करते तो **"धुटि बहुत्वे त्वे"** (१४३) सूत्र से अकार के स्थान पर, एकार आदेश हो कर "युष्मेभ्यम्" और "अस्मेभ्यम्" अशुद्ध रूप बन जाते।

अथवा युष्मद् और अस्मद् शब्द के अद् का लोप **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से करने पर, "अभ्यम्" पद इष्ट होता है। "युष्म् + अभ्यम्" तथा "अस्म् + अभ्यम्" यहाँ **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"युष्मभ्यम्"** तथा **"अस्मभ्यम्"** प्रयोग भी बन सकते हैं। अद् के लोप होने पर, **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र की उपयोगिता नहीं है।

युष्मभ्यम् – युष्मद् शब्द से चतुर्थी विभक्ति के बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के आने पर, "युष्मद् + भ्यस्", इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से दकार का लोप कर, "युष्म + भ्यस्" इस स्थिति में **"भ्यसभ्यम्"** (३५५) सूत्र से भ्यस् के स्थान पर, "अभ्यम्" आदेश कर, "युष्म + अभ्यम्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप हो कर, **"युष्मभ्यम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

अब युष्मद् और अस्मद् शब्द से ङसि विभक्ति तथा भ्यस् विभक्ति के आने पर, ङसि और भ्यस् के स्थान पर अत् आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१५६)विधिसूत्रम् – अत् पञ्चम्यद्वित्वे।।३५६।।

एभ्यो युष्मदादिभ्यः परा अद्वित्वे वर्तमाना पञ्चम्यद् भवति। त्वत्। मत्। युवाभ्याम्। आवाभ्याम्। युष्मत्। अस्मत्।

अर्थ – युष्मद् और अस्मद् शब्द से परे पञ्चमी विभक्ति के एकवचन तथा बहुवचन (ङसि और भ्यस्) के स्थान पर अत् आदेश होता है।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"युष्मदस्मदोः पदं पदात्षष्ठीचतुर्थी–द्वितीयासु वस्नसौ"** (३५६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

अर्थात् युष्मद् और अस्मद् शब्द से पंचमी विभक्ति के एकवचन में ङसि और बहुवचन में भ्यस् विभक्ति के स्थान पर अत् आदेश कर, "युष्मद् + अत्" तथा "अस्मद् + अत्" इत्यादि आदेश होता है।

सूत्र में अद्वित्वे का कथन होने से, द्विवचन का ग्रहण नहीं किया। अर्थात् द्विवचन की विभक्ति के स्थान पर कोई भी आदेश नहीं होता है।

त्वत् – युष्मद् शब्द से पंचमी विभक्ति के एकवचन में ङसि विभक्ति के आने पर, "युष्मद् + अस्" इस स्थिति में **"त्वन्मदोरेकत्वे"** (३४५) सूत्र से युष्मद् के स्थान पर त्वत् आदेश कर, "त्वत् + अस्" इस स्थिति में, **"अत् पञ्चम्यद्वित्वे"** (३५६) सूत्र से ङसि के स्थान पर अत् आदेश कर, "त्वत् + अत्" इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से त्वत् के तकार का लोप कर, "त्व + अत्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का लोप करने पर **"त्वत्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मत् – अस्मद् शब्द से पंचमी विभक्ति के एकवचन में ङसि विभक्ति के आने पर, "अस्मद् + अस्" इस स्थिति में **"त्वन्मदोरेकत्वे"** (३४५) सूत्र से अस्मद् के स्थान पर मत् आदेश कर, "मत् + अस्" इस स्थिति में, **"अत् पञ्चम्यद्वित्वे"** (३५६) सूत्र से ङसि के स्थान पर अत् आदेश कर, "मत् + अत्" इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से मत् के तकार का लोप कर, "म + अत्" इस स्थिति में **"अकारे लोपम्"** (१३६) सूत्र से अकार का भी लोप करने पर **"मत्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मम – अस्मद् शब्द से षष्ठी विभक्ति के एकवचन में ङस् विभक्ति के आने पर, "अस्मद् + अस्", इस स्थिति में **"त्वन्मदोरेकत्वे"** (३४५) सूत्र की प्राप्ति थी, परन्तु **"तव मम ङसि"** (३५७) सूत्र द्वारा अस्मद् शब्द को ङस् विभक्ति सहित मम आदेश करने पर, **"मम"** प्रयोग सिद्ध होता है।

युवयोः – युष्मद् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "युष्मद् + ओस्", इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से युष्मद् शब्द के अद् का लोप कर, "युष्म् + ओस्" इस स्थिति में **"युवावौ द्विवाचिषु"** (३४७) सूत्र से युष्म् के स्थान पर युव आदेश कर, "युव + ओस्" इस स्थिति में **"एत्वमस्थानिनि"** (३५२) सूत्र से युव के अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "युवे + ओस्" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश कर, "युवय् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जन–मस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"युवयोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

आवयोः – अस्मद् शब्द से षष्ठी – सप्तमी विभक्ति के द्विवचन में ओस् विभक्ति के आने पर, "अस्मद् + ओस्", इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से अस्मद् शब्द के अद् का लोप कर, "अस्म् + ओस्" इस स्थिति में **"युवावौ द्विवाचिषु"** (३४७) सूत्र से अस्म् के स्थान पर आव आदेश कर, "आव + ओस्" इस स्थिति में **"एत्वमस्थानिनि"** (३५२) सूत्र से आव के अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "आवे + ओस्" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश कर, "आवय् + ओस्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"रेफसोर्विसर्जनीयः"** (१३०) सूत्र से सकार के स्थान पर विसर्ग आदेश करने पर, **"आवयोः"** प्रयोग सिद्ध होता है।

नोट – यहाँ **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से युष्मद् और अस्मद् के दकार का भी लोप हो सकता था। दकार के लोप होने पर, **"युवावौ द्विवाचिषु"** (३४७) सूत्र से युष्म और अस्म के स्थान पर, युव और आव आदेश होता।

"अस्म + स् आम्" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से "अस्म + साम्" इस स्थिति में **"सामाकम्"** (३५८) सूत्र से साम् के स्थान पर आकम् आदेश कर, "अस्म + आकम्" इस स्थिति में **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र से सवर्ण दीर्घ करने पर, **"अस्माकम्"** प्रयोग सिद्ध होता है।

नोट – यहाँ **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र द्वारा युष्मद् और अस्मद् के अद् का लोप हो सकता था। अद् के लोप होने पर, **"समानः सवर्णे दीर्घीभवति परश्च लोपम्"** (२४) सूत्र प्रवृत्त नहीं होता।

त्वयि – युष्मद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "युष्मद् + इ", इस स्थिति में **"त्वन्मदोरेकत्वे"** (३४५) सूत्र से युष्मद् के स्थान पर त्वत् आदेश कर, "त्वत् + इ" इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से त्वत् के तकार का लोप कर, "त्व + इ" इस स्थिति में **"एत्वमस्थानिनि"** (३५२) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "त्वे + इ" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश कर, "त्वय् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"त्वयि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

मयि – अस्मद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एकवचन में ङि विभक्ति के आने पर, "अस्मद् + इ", इस स्थिति में **"त्वन्मदोरेकत्वे"** (३४५) सूत्र से अस्मद् के स्थान पर मत् आदेश कर "मत् + इ" इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से मत् के तकार का लोप कर, "म + इ" इस स्थिति में **"एत्वमस्थानिनि"** (३५२) सूत्र से अकार के स्थान पर एकार आदेश कर, "मे + इ" इस स्थिति में **"ए अय्"** (४८) सूत्र से एकार के स्थान पर अय् आदेश कर, "मय् + इ" इस स्थिति में **"व्यञ्जनमस्वरं परवर्णं नयेत्"** (२५) सूत्र की सहायता से **"मयि"** प्रयोग सिद्ध होता है।

नोट – यहाँ **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र द्वारा त्वत् और मत् के तकार का लोप किया है। यदि अत् का लोप करते तो **"एत्वमस्थानिनि"** (३५२) सूत्र से एकार आदेश किसके स्थान पर करते, मकार के स्थान पर या वकार के स्थान पर ?

युष्मासु – युष्मद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सुप् विभक्ति के आने पर, "युष्मद् + सु", इस स्थिति में **"एषां विभक्तावन्तलोपः"** (३५०) सूत्र से दकार का लोप कर, "युष्म + सु" इस स्थिति में **"आत्वं व्यञ्जनादौ"** (३५३) सूत्र से अकार के स्थान पर आकार आदेश हो कर **"युष्मासु"** प्रयोग सिद्ध होता है।

इसके अन्य उदाहरण यथा – दिगम्बरमुनयः वः (युष्माकम्) गुरवः सन्ति। आचार्यश्री विद्यासागराः नः (अस्माकम्) राष्ट्रसन्ताः सन्ति। ग्रन्थाः वो (युष्मभ्यम्) दीयन्ते। फलानि नो (अस्मभ्यम्) दीयन्ते। मुनयः वः (युष्मान्) पश्यन्ति। आचार्यश्रीविद्यासागराः नः (अस्मान्) पश्यन्ति।

नोट – उपर्युक्त सूत्र के प्रवृत्त होने के लिये दो बातें आवश्यक हैं।

१. युष्मद् और अस्मद्, पद से परे होना चाहिये। ऐसा न होने के कारण "युष्माकम् ग्रामः स्वम्" तथा "अस्माकम् ग्रामः स्वम्" यहाँ युष्माकम् तथा अस्माकम् के स्थान पर, वस् और नस् आदेश नहीं होगा।

इसी प्रकार "युष्माकं गृहमस्ति और "अस्माकं गृहमस्ति, प्रयोग जानना चाहिये।

२. युष्मद् और अस्मद् को श्लोक के पाद (चरण) के आदि में नहीं होना चाहिये। इसकी चर्चा **"न पदादौ"** (३६२) सूत्र के अन्तर्गत करेंगे।

अन्य उदाहरण यथा – "न शृणोति हितं पापी, युष्माकम् वित्तहारकः।"

अब युष्मद् और अस्मद् शब्द के द्विवचन में युष्मद् और अस्मद् शब्द के स्थान पर क्रमशः वाम्–नौ आदेश करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१४४)विधिसूत्रम् – वाम्नौ द्वित्वे।।३६०।।

पदात्परं युष्मदस्मदोः पदं षष्ठीचतुर्थीद्वितीयासु द्वित्वे निष्पन्नं वाम्नौ आपद्यते यथासङ्ख्यम्। ग्रामो वाम् स्वम्। ग्रामो नौ स्वम्। ग्रामो वां दीयते। ग्रामो नौ दीयते। ग्रामो वां रक्षति। ग्रामो नौ रक्षति। ग्रामस्तव स्वं। ग्रामो मम स्वम्। ग्रामस्तुभ्यम् दीयते। ग्रामो मह्यम् दीयते। ग्रामस्त्वां रक्षति। ग्रामो माम् रक्षति। इति स्थिते–

अर्थ – पद से परे षष्ठी, चतुर्थी और द्वितीया के द्विवचन में निष्पन्न युष्मद् और अस्मद् के स्थान पर क्रमशः वाम् और नौ आदेश होते हैं।

नोट – उपर्युक्त सूत्र में **"युष्मदस्मदोः पदं पदात्षष्ठीचतुर्थी–द्वितीयासु वस्नसौ"** (३५६) सूत्र की अनुवृत्ति आ रही है।

अर्थात – पूर्ववत् "युवयोः" के स्थान पर **"वाम्,"** "आवयोः" के स्थान पर **"नौ,"** "युवाभ्याम्" के स्थान पर **"वाम्",** "आवाभ्याम्" के स्थान पर **"नौ",** "युवाम्" के स्थान पर **"वाम्",** "आवाम्" के स्थान पर **"नौ"** आदेश होते हैं।

अर्थात्–पूर्ववत् तव के स्थान पर **ते,** मम के स्थान पर **मे,** तुभ्यम् के स्थान पर **ते,** मह्यम् के स्थान पर **मे,** त्वाम् के स्थान पर **त्वा,** माम् के स्थान पर **मा** आदेश होते हैं।

ते और मे आदि आदेश हो जाने से ग्रामस्ते (तव) स्वम्। ग्रामो मे (मम) स्वम्। ग्रामस्ते (तुभ्यम्) दीयते। ग्रामो मे (मह्यम्) दीयते। ग्रामस्त्वा (त्वाम्) रक्षति। ग्रामो मा (माम्) रक्षति। इत्यादि प्रयोग सिद्ध होते हैं।

इसके अन्य उदाहरण यथा – दिगम्बरमुनयः ते (तव) गुरवः सन्ति। आचार्यश्री–विद्यासागराः मे (मम) जगत्तारकाः सन्ति। ग्रन्थाः ते (तुभ्यम्) दीयन्ते। फलानि मे (मह्यम्) दीयन्ते। मुनयः त्वा (त्वाम्) पश्यन्ति। आचार्यश्रीविद्यासागराः मा (माम्) पश्यन्ति। हे जिनेन्द्र अहं ते (तव) सेवको स्मि। त्वं मे (मम) पूज्यः असि। नमस्ते (तुभ्यम्)। फलं मे (मह्यम्) प्रयच्छतु। मुनयः त्वा (त्वाम्) पश्यन्ति। आचार्यश्रीविद्यासागराः मा (माम्) पश्यन्ति। लोकाः त्वा (त्वाम्) पश्यन्ति। लोकाः मा (माम्) पश्यन्ति।

नोट – उपर्युक्त सूत्र के प्रवृत्त होने के लिये दो बातें आवश्यक हैं।

१. युष्मद् और अस्मद्, पद से परे होना चाहिये। ऐसा न होने के कारण "तव ग्रामः स्वम्" तथा "मम ग्रामः स्वम्" यहाँ तव तथा मम के स्थान पर, ते और मे आदेश नहीं होगा।

इसी प्रकार "तव गृहमस्ति और "मम गृहमस्ति, प्रयोग जानना चाहिये।

२. युष्मद् और अस्मद् को श्लोक के पाद (चरण) के आदि में नहीं होना चाहिये। इसकी चर्चा **"न पदादौ"** (३६२) सूत्र के अन्तर्गत करेंगे।

"ममास्ति किं प्रयोजनम्"। में मम के स्थान पर मे आदेश नहीं हुआ। त्वां लोकाः पश्यन्ति। त्वां पश्यन्ति श्रावकाः।

श्लोकः – पुरा पश्यन्नरो मूर्खः, तव कार्यं करिष्यति।

श्लोकः – स जगद्रक्षको देवो, मां सदा पालयिष्यति।

वार्तिकः – "एते वांनावादयो नन्वादेशे वा वक्तव्याः"।

वार्तिकार्थ – अन्वादेश न होने पर पूर्वोक्त "वाम्, नौ" आदि आदेश विकल्प से होते हैं। अन्वादेश होने पर ये आदेश नित्य होते हैं। "तस्मै ते नमः" यहाँ नित्य आदेश होगा।

अन्वादेश – किसी कार्य को विधान करने के लिये ग्रहण किए हुए का पुनः दूसरे कार्य को विधान करने के लिए ग्रहण करना "अन्वादेश" कहलाता है।

नोट – युष्मद् आदि के स्थान पर वस्–नस् आदेश होने के लिए एक नियम ओर है। युष्मद् और अस्मद् शब्दों के स्थान पर होने वाले आदेश एकवाक्य में ही होते हैं।

अब युष्मद् और अस्मद् शब्द को आमन्त्रण (सम्बोधन) से परे वस् और नस् आदि आदेश का निषेध करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(०००)निषेधसूत्रम् – आमन्त्रणात्।।३६३।।

आमन्त्रणात्परं युष्मदादीनां पदमेतानादेशान्न प्राप्नोति। हे पुत्र तव स्वमिदम्। हे पुत्र मम स्वमिदम्। हे पुत्र त्वां रक्षति।

अर्थ – आमन्त्रण से परे युष्मद् और अस्मद् पद को वस्–नस् इत्यादि आदेश नहीं होते हैं।

आमन्त्रण का अर्थ है–दूरस्थ प्राणी को आवाज देकर अपनी ओर अभिमुख करना।

यथा – **"हे पुत्र तव स्वमिदम्"** यहाँ हे पुत्र आमन्त्रण (सम्बुद्धि) होने से तव के स्थान पर **"ते"** आदेश नहीं हुआ।

इसी प्रकार – **हे पुत्र मम स्वमिदम् ! हे पुत्र त्वां रक्षति**। इत्यादि प्रयोग जानना चाहिये।

अब युष्मद् और अस्मद् शब्द को च आदि के योग में वस् और नस् आदि आदेश का निषेध करने के लिये अग्रिम सूत्र कहते हैं।

(२.१४७)निषेधसूत्रम् – चादियोगे च।।३६४।।

चादीनां योगे वर्तमानानां युष्मदस्मदादीनां पदमेतानादेशान्न प्राप्नोति। पुत्रो युष्माकं च। पुत्रो स्माकं च। पुत्रो युष्मभ्यं च दीयते। पुत्रो स्मभ्यं च दीयते। पुत्रो युष्मांश्च रक्षति। पुत्रो स्मांश्च रक्षति। चादयः कति ? पञ्च। ते के ? च वा ह अह एव इति चादयः। गोणयोगे न स्यात्–ग्रामश्च ते स्वम्, नगरं च मे स्वम्।

अर्थ – च आदि के योग में युष्मद् और अस्मद् पद को वस्–नस् इत्यादि आदेश नहीं होते हैं।

यथा– **पुत्रो युष्माकं च, पुत्रो स्माकं च, पुत्रो युष्मभ्यं च दीयते, पुत्रो स्मभ्यं च दीयते, पुत्रो युष्मांश्च रक्षति, पुत्रो स्मांश्च रक्षति**। इत्यादि पदों में च का योग होने से युष्माकम् आदि के स्थान पर वस् –नस् आदि आदेश नहीं हुयें।

शंका – च आदि कितने हैं?

समाधान – च आदि पांच है। यथा–च, वा, ह, अह, एव।

कातन्त्र–रूपमाला के सूत्र पाठ

चवर्गदृगादीनां च।।२५४।।

कषयोगे क्षः।।२५५।।

कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा।।२५६।।

मनोरनुस्वारो धुटि।।२५७।।

वर्गे वर्गान्तः।।२५८।।

संयोगान्तस्य लोपः ।।२५९।।

व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः।।२६०।।

अनुषङ्गश्चाक्रुंचेत्।।२६१।।

अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घः ।।२६२।।

ङात्।।२६३।।

नाञ्चेः पूजायां ।।२६४।।

विष्वग्देवयोश्चान्त्यस्वरादेरद्र्यञ्चतौ क्वौ ।।२६५।।

अदद्र्यञ्चो दस्य बहुलं।।२६६।।

नोतो वः।।२६७।।

उदङ् उदीचिः ।।२६८।।

तिर्यङ् तिरश्चिः।।२६९।।

हशषछान्तेजादीनां डः।।२७०।।

युजेरसमासे नुर्घुटि।।२७१।।

आगम उदनुबन्धः स्वरादन्त्यात्परः।।२७२।।

संयोगादेर्धुटः।।२७३।।

धुटां तृतीयः।।२७४।।

टात् सुप्तादिर्वा ।।२७५।।

अन्त्वसन्तस्य चाधातोस्सौ।।२७६।।

नसंयोगान्तावलुप्तवच्च पूर्वविधौ।।२७७।।

भवतो वादेरुत्वं सम्बुद्धौ।।२७८।।

यत्तदेतेभ्यो डावन्तुः।।२७९।।

डानुबन्धे न्त्यस्वरादेर्लोपः।।२८०।।

इदमो डियन्तुः।।२८१।।

किमो डियन्तुः।।२८२।।

भगवदघवतोश्च।।२८३।।

अभ्यस्तादन्तिरनकारः।।२८४।।

सान्तमहतोर्नोपधायाः।।२८५।।

पात्पदं समासान्तः।।२८६।।

तस्य च।।२८७।।

एतस्य चान्वादेशे द्वितीयायां चैनः।।२८८।।

हचतुर्थान्तस्य धातोस्तृतीयादेरादिचतुर्थत्व मकृतवत् ।।२८९।।

पुंसो न्शब्दलोपः।।३२६।।

स्यादिधुटि पदान्तवत्।।३३०।।

दादेर्हस्य गः ।।३३१।।

मुहादीनां वा।।३३२।।

वाहेर्वाशब्दस्यौत्वम्।।३३३।।

सौ नुः ।।३३४।।

सम्बुद्धावुभयोर्ह्रस्वः।।३३५।।

अनडुहश्च।।३३६।।

अपश्च ।।३३७।।

अपां भे दः।।३३८।।

वा स्त्रीकारे ।।३३९।।

विरामे व्यञ्जनादावुक्तं
नपुंसकात्स्यमोर्लोपे पि।।३४०।।

वा नपुंसके ।।३४१।।

अह्नः सः ।।३४२।।

इदं नपुंसके पि च ।।३४३।।

इसुस्दोषां घोषवति रः ।।३४४।।

त्वन्मदोरेकत्वे ।।३४५।।

त्वमहम् सौ सविभक्त्योः।।३४६।।

युवावौ द्विवाचिषु ।।३४७।।

अमौ चाम्।।३४८।।

यूयम् वयम् जसि ।।३४९।।

एषां विभक्तावन्तलोपः।।३५०।।

आन् शसः।।३५१।।

एत्वमस्थानिनि।।३५२।।

आत्वं व्यञ्जनादौ।।३५३।।

तुभ्यम् मह्यम् ङयि।।३५४।।

भ्यसभ्यम्।।३५५।।

अत् पञ्चम्यद्वित्वे।।३५६।।

तव मम ङसि।।३५७।।

सामाकम्।।३५८।।

युष्मदस्मदोः पदं पदात्षष्ठीचतुर्थीद्वितीयासु

वस्नसौ ।।३५९।।

वाम्नौ द्वित्वे।।३६०।।

त्वन्मदोरेकत्वे ते मे त्वा मा तु
द्वितीयायाम्।।३६१।।

न पादादौ।।३६२।।

आमन्त्रणात्।।३६३।।

चादियोगे च।।३६४।।

दृश्यार्थैश्चानालोचने।।३६५।।

औकारादि

औ तस्माज्जस्शसोः।।३०२।।

औ सौ।।३१३।।

ककारादि

कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयोवा।।२५६।।

कषयोगे क्षः।।२५५।।

किमो डियन्तुः।।२८२।।

किम् कः।।३०३।।

घकारादि

घुट्स्वरे नुः।।३२१।।

ङकारादि

ङात्।।२६३।।

चकारादि

चतुरो वाशब्दस्योत्वम्।।३०६।।

चवर्गदृगादीनां च।।२५४।।

चादियोगे च।।३६४।।

टकारादि

टात् सुप्तादिर्वा।।२७५।।

टौसोरनः।।३०६।।

डकारादि

डानुबन्धे न्त्यस्वरादेर्लोपः।।२८०।।

तकारादि

तव मम ङसि।।३५७।।

तवर्गश्चटवर्गयोगे चटवर्गौ।।२६१।।

तस्माद् भिस् भिर्।।३०८।।

तस्य च।।२८७।।

तिर्यङ् तिरश्चिः।।२६६।।

तुदभादिभ्य ईकारे।।३७३।।

तुभ्यम् मह्यम् ङयि।।३५४।।

त्वन्मदोरेकत्वे ।।३४५।।

त्वन्मदोरेकत्वे ते मे त्वा मा तु

द्वितीयायाम्।।३६१।।

त्वमहम् सौ सविभक्तयोः।।३४६।।

दकारादि

दादेर्हस्य गः।।३३१।।

दिव उद्व्यञ्जने।।३१५।।

दृश्यार्थैश्चानालोचने।।३६५।।

दो द्वेर्मः।।३०५।।

धकारादि

धुटां तृतीयः।।२७४।।

व्यञ्जनान्नो नुषङ्गः।।२६०।।

रकारादि

रः सुपि।।३१२।।

शकारादि

श्वयुवमघोनां च।।२६५।।

षकारादि

षडो णो ने।।३१६।।

सकारादि

सङ्ख्यायाः ष्णान्तायाः।।२६६।।

सम्बुद्धावुभयोर्ह्रस्वः।।३३५।।

संयोगादेर्धुटः।।२७३।।

संयोगान्तस्य लोपः।।२५६।।

सान्तमहतोर्नोपधायाः।।२८५।।

सामाकम्।।३५८।।

सावौ सिलोपश्च।।३२३।।

सौ च मघवान्मघवा वा।।२६६।।

सौ नुः।।३३४।।

सौ सः।।३२२।।

स्यादिधुटि पदान्तवत्।।३३०।।

स्रसिध्वसोश्च।।३२०।।

हकारादि

हचतुर्थान्तस्य धातोस्तृतीयादेरादि–

चतुर्थत्वमकृतवत्।।२८६।।

हनेर्हेर्घिरुपधालोपे।।२६२।।

हशषछान्तेजादीनां डः।।२७०।।

ह्लन्मासदोषपूषां शसादौ स्वरे वा ।।२६३।।

।। अथ व्यञ्जनान्ताः पुल्लिङ्गशब्दा यथाक्रमेणोच्यन्ते ।।

सर्वज्ञं तमहं वन्दे, परं ज्योतिस्तमो पहम् ।
प्रवृत्ता यन्मुखाद्देवी, सर्वभाषा सरस्वती ।।१।।

कवर्गान्ताः पुल्लिङ्गशब्दा अप्रसिद्धाः । चकारान्तः पुल्लिङ्गः सुवाच्शब्दः । सौ–व्यञ्जनाच्चेति सिलोपः । दादेर्हस्य ग इत्यनुवर्तते ।

(२.१६०)विधिसूत्रम् – चवर्गदृगादीनां च ।।२५४ ।।

चवर्गान्तस्य दृश् इत्येवमादीनां च लिङ्गानामन्तस्य गो भवति विरामे व्यञ्जनादौ च ।

(३.४०५)विधिसूत्रम् – पदान्ते धुटां प्रथमः ।।७५ ।।

पदान्ते वर्तमानानां धुटां वर्णानां प्रथमो भवति । अघोषे प्रथमः इत्यनुर्वतते ।

(२.२०४)विधिसूत्रम् – वा विरामे ।।२४२ ।।

विरामे धुटां प्रथमस्तृतीयश्च वा भवति । सुवाक्, सुवाग् । सुवाचौ । सुवाचः । एवं सम्बुद्धौ । सुवाचम् । सुवाचौ । सुवाचः । सुवाचा । सुवाग्भ्याम् । सुवाग्भिः । सुवाचे । सुवाग्भ्याम् । सुवाग्भ्यः । सुवाचः । सुवाचोः । सुवाचाम् । सुवाचि । सुवाचोः । सुपि । गत्वम् ।

(२.२०३)विधिसूत्रम् – अघोषे प्रथमः ।।१२१ ।।

अघोषे परे धुटां प्रथमो भवति । इति कत्वम् । नामिकरेत्यादिना सस्य षत्वम् ।

(०००)विधिसूत्रम् – कषयोगे क्षः ।।२५५ ।।

ककारषकारयोर्योगे क्षो भवति । सुवाक्षु ।

(०००)विधिसूत्रम् – कवर्गप्रथमः शषसेषु द्वितीयो वा ।२५६ ।।

कवर्गप्रथमस्य द्वितीयो भवति शषसेषु परतो वा । सुवाख्सु । प्रत्यञ्च् शब्दस्य तु भेदः । चवर्गदृगादीनां चेत्यत्र चवर्गग्रहणबलादञ्च् युज् क्रुञ्चां प्रागेव गत्वम् ।

सुकन्। स्वरे परे मनोरनुस्वारो धुटि इति अनुस्वारः। महत्साहचर्याद्धातोर्दीर्घो न स्यात्। सुकंसौ। सुकंसः। सुकंसम् सुकंसौ। सुकंसः सुकंसा। सुकन्भ्याम्। सुकन्भिः। इत्यादि सम्बोधने पि तद्वत्।

(०००)विधिसूत्रम् – नाञ्चेः पूजायाम् ।।२६४।।

पूजार्थे वर्तमानस्य अञ्चेरनुषङ्गस्य लोपो न भवति अघुट् स्वरे व्यञ्जने च परे। प्राङ्। प्राञ्चौ। प्राञ्चः। हे प्राङ्। हे प्राञ्चौ। हे प्राञ्चः। प्राञ्चम्। प्राञ्चौ। प्राञ्चः। प्राञ्चा प्राङ्भ्याम्। प्राङ्भिः। इत्यादि। सुपि विशेषः। ङात्परस्य सस्य षो भवति। प्राङ्षु। अञ्चु गतिपूजनयोः। प्रपूर्वकः प्राञ्चतीति क्विप् सर्वापहारिलोपः। कृत्तद्धित–समासाश्चेति लिङ्गसञ्ज्ञा। यत्र गत्यर्थस्तत्र अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत् इत्यनुषङ्गलोपः। यत्र पूजार्थस्तत्र नाञ्चेः पूजायामिति अघुट्स्वरे व्यञ्जने अनुषङ्गलोपो न भवति। अदद्रयञ्च्–शब्दस्य तु भेदः। अञ्चु अदस्पूर्वः–अमुमञ्चतीति क्विप् चेति क्विप् प्रत्ययः। क्विपि सति –

(४.५००)विधिसूत्रम्–विष्वग्देवयोश्चान्त्यस्वरादेरद्रयञ्चतौ क्वौ।।२६५।।

विष्वग्देवयोः सर्वनाम्नश्चान्त्यस्वरादेरवयवश्चाञ्चतौ क्विबन्ते परे अद्रिरादेशो भवति। इति सकारसहितस्य अकारस्य अद्रिरादेशः। इवर्णो यत्वम्। अदद्रयञ्च् इति स्थिते सति –

(०००)विधिसूत्रम् – अदद्रयञ्चो दस्य बहुलम्।।२६६।।

अदद्रयञ्चो दकारस्य बहुलं मकारो भवति मात् परस्य रस्य उत्वं च। अदमुयङ्। अदमुयञ्चौ। अदमुयञ्चः। एवं सम्बुद्धौ। अदमुयञ्चम्। अदमुयञ्चौ।

(०००)निषेधसूत्रम् – नोतो वः।।२६७।।

अदद्रयञ्च् इत्येतस्य उतो वत्वं न भवति। अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत् इति नलोपः। अञ्चेरलोपः पूर्वस्य च दीर्घ इति अकारलोपः पूर्वस्य च दीर्घो भवति। अदमुईचः। अदमुईचा। अनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत् नलोपः। चवर्गदृगादीनां च गत्वम्। अदमुयग्भ्याम्। अदमुयग्भिः। पूर्ववत् अनुषङ्गलोपो गत्वं च। अघोषे प्रथमः। क्। नामिकरेत्यादिना षत्वम्। अदमुयक्षु।

(२.१०५)विधिसूत्रम् – युजेरसमासे नुर्घुटि।।२७१।।

युज्शब्दस्य असमासे नुरागमो भवति घुटि परे।

(२.६)विधिसूत्रम् – आगम उदनुबन्धः स्वरादन्त्यात्परः।।२७२।।

उदनुबन्ध आगमो न्त्यात्स्वरात् परो भवति। मित्रवदागमः। अथवा प्रकृतिप्रत्यययो–रनुपघाती आगम उच्यते। शत्रुवदादेशः। युङ्। युञ्जौ। युञ्जः। सम्बोधने पि तद्वत्। युञ्जम्। युञ्जौ। युजः। युजा। युग्भ्याम्। युग्भिः। इत्यादि। अश्वयुजादीनां समासत्वान् नुरागमो नास्ति। अश्वयुग्, अश्वयुक्। अश्वयुजौ। अश्वयुजः। सम्बोधने पि तद्वत्। इत्यादि। एवं ऋत्विज्–गुणभाज्–प्रभृतयः। साधुमस्ज् शब्दस्य तु भेदः।

(२.१६७)विधिसूत्रम् – संयोगादेर्धुटः।।२७३।।

संयोगादेर्धुटो लोपो भवति विरामे व्यञ्जनादौ च। व्यञ्जनाच्च सिलोपश्चवर्ग–दृगादीनां च गकारककारौ। साधुमक्, साधुमग्।

(२.२०२)विधिसूत्रम् – धुटां तृतीयः।।२७४।।

धुटां तृतीयो भवति घोषवति सामन्ये। इति सस्य तृतीयत्वे प्राप्ते ऌवर्णतवर्गलसा दन्त्या इति न्यायात् सकारस्य दकारः। तवर्गश्चटवर्गयोगे चटवर्गौ इति दकारस्य जकारः। साधुमज्जौ। इत्यादि। देवेज् शब्दस्य तु भेदः। सौ– हशषछान्ते इत्यादिना डत्वम्। देवेट्, देवेड्। देवेजौ। देवेजः। सम्बोधने पि तद्वत्। देवेजम्। देवेजौ। देवेजः। देवेजा। देवेड्भ्याम्। देवेड्भिः।

(०००)विधिसूत्रम् – टात् सुप्तादिर्वा ।।२७५।।

टकारात्परः सुप् तादिर्वा भवति। तेन देवेट्त्सु, देवेट्सु। एवं सम्राज्–प्रभृतयः। झञटवर्गान्ता अप्रसिद्धाः। तकारान्तः पुल्लिङ्गो मरुत्शब्दः। मरुत्, मरुद्। मरुतौ। मरुतः। सम्बोधने पि। तद्वत्। मरुतम्। मरुतौ। मरुतः। मरुता। धुटां तृतीय इत्यनेन दत्वे मरुद्भ्याम्। इत्यादि। उदनुबन्धस्य भवन्त्शब्दस्य तु भेदः। दीर्घमामि सनौ इति वर्तते।

(२.६७)विधिसूत्रम् – अन्त्वसन्तस्य चाधातोस्सौ।।२७६।।

अन्तु अस् इत्येवमन्तस्याधातोरस्य दीर्घो सौ असम्बुद्धौ। लिङ्गान्तनकारस्य इति नकारस्य लोपे प्राप्ते।

(०००)विधिसूत्रम् – किमो डियन्तुः।।२८२।।

किम् शब्दात्परो डियन्तुः प्रत्ययो भवति परिमाणे र्थे। डकारउकारौ पूर्ववत्। किम्परिमाणमस्य कियान्। नीतकम्। भगवान्। भगवन्तौ। भगवन्तः। भगवन्तम्। भगवन्तौ। भगवतः। भगवता। भगवद्भ्याम्। भगवद्भिः। सुपि–भगवत्सु। एवं सर्वत्र सम्बोधने –

(०००)विधिसूत्रम् – भगवदघवतोश्च।।२८३।।

भगवदघवतोश्च वादेरवयवस्य उत्वं वा भवति सम्बुद्धौ सौ परे। एवं सम्बुद्धिं विना गोमन्त्–धनवन्त्–तावन्त्–एतावन्त्–इयन्त्–प्रभृतयः। यत्प्रमाणमस्य यावन्त्। हे भगोः हे भगवन्। हे अघोः हे अघवन्। अन्यत्र हे गोमन्। हे धनवन्। हे यावन्। हे तावन्। हे एतावन्। हे इयन्। हे कियन्। शन्तृङन्तक्विबन्ता धातुत्वं न त्यजन्ति। शन्तृङन्तस्य क्विबन्तानां च। भवन्त्शब्दस्य धातुत्वात् सौ दीर्घो न भवति। भवन्। भवन्तौ। भवन्तः। इत्यादि। एवं पचन्–पठन्–प्रभृतयः। ददन्त्शब्दस्य तु भेदः। युजेरसमासे नुर्घुटि इत्यनुवर्त्तते।

(२.१०६)विधसूत्रम् – अभ्यस्तादन्तिरनकारः।।२८४।।

अभ्यस्तात्परो न्तिरनकारो भवति घुटि परे। ददत्, ददद्। ददतौ। ददतः। इत्यादि। एवं दधन्त्–जक्षन्त्–जाग्रन्त्–प्रभृतयः। महन्तशब्दस्य तु भेदः। दीर्घमामि सनौ घुटि चासम्बुद्धौ इति वर्तते।

(२.६५)विधिसूत्रम् – सान्तमहतोर्नोपधायाः।।२८५।।

सान्त महन्त् इत्येतयोर्नकारस्योपधाया दीर्घो भवति असम्बुद्धौ घुटि परे। महान्। महान्तौ। महान्तः। हे महन्। हे महान्तौ। हे महान्तः। महान्तम्। महान्तौ। महतः। महता। महद्भ्याम्। महद्भिः। इत्यादि। इति तकारान्ताः। थकारान्तो ग्निमथ् शब्दः। अग्निमत्। अग्निमद्। अग्निमथौ। अग्निमथः। सम्बोधने पि तद्वत्। अग्निमथम्। अग्निमथौ। अग्निमथः। अग्निमथा। अग्निमद्भ्याम्। अग्निमद्भिः। इत्यादि। इति थकारान्ताः। दकारान्तः पुल्लिङ्गस्तत्त्वविद्शब्दः। तत्त्ववित्, तत्त्वविद्। तत्त्वविदौ। तत्त्वविदः। इत्यादि। द्विपाद् शब्दस्य तु भेदः। द्विपाद्, द्विपात्। द्विपादौ। द्विपादः। सम्बोधने पि तद्वत्। द्विपादम्। द्विपादौ। शसादौ।

नकारो लुप्तवद्भवति। राजभ्याम्। राजभिः। राज्ञे। राजभ्याम्। राजभ्यः। ङौ। ईङ्योर्वेति अलोपो वा भवति। राज्ञि, राजनि। राज्ञोः। राजसु। एवं तक्षन्मूर्धन्प्रभृतयः। आत्मन् शब्दस्य तु भेदः। आत्मा। आत्मानौ। आत्मानः। हे आत्मन्। इत्यादि। आत्मानम्। आत्मानौ। अघुट्स्वरे अवमसंयोगादिति प्रतिषेधादनो लोपो नास्ति। आत्मनः। आत्मना। इत्यादि। एवं सुपर्वन्–सुशर्मन्–ब्रह्मन्–कृतवर्मन्–प्रभृतयः। करिन् शब्दस्य तु भेदः। सौ–इन्हन् इत्यादिना दीर्घः। करी। करिणौ। करिणः। हे करिन्। इत्यादि। एवं दण्डिन् हस्तिन् गोमिन् तपस्विन् प्रभृतयः। वृत्रहन्शब्दस्य तु भेदः। वृत्रहा। वृत्रहणौ। वृत्रहणः। हे वृत्रहन्। वृत्रहणम्। वृत्रहणौ। अघुट्स्वरे लोपे कृते। इन्हन् इत्यादिना दीर्घः। अस्मादेव हन उपधायाः। सावेव दीर्घः क्विपि न दीर्घः।

(२.१०६)विधिसूत्रम् – हनेर्हेर्घिरुपधालोपे।।२६२।।

हनेरुपधाया लोपे कृते हेः स्थाने घिर्भवति। घत्वे नस्य णत्वाभावः। वृत्रघ्नः। वृत्रघ्ना। वृत्रहभ्याम्। वृत्रहभिः। इत्यादि। एवं ब्रह्महन्–भ्रूणहन्– ऋणहन् एते शब्दाः। पूषन् शब्दस्य तु भेदः। सौ दीर्घः। पूषाः। पूषणौ। पूषणः। हे पूषन्। पूषणम्। पूषणौ।

(०००)विधिसूत्रम् – हृन्मासदोषपूषां शसादौ स्वरे वा।।२६३।।

हृन् मास् दोष पूषन् इत्येतेषामुपधाया उत्तरस्य लोपो वा भवति शसादौ स्वरे परे। पूषः, पूष्णः। पूषा, पूष्णा। पूषभ्याम्। पूषभिः। इत्यादि। एवं अर्यमन्–शब्दः। अर्वन्शब्दस्य तु भेदः। सौ–अर्वा।

(२.१६४)विधिसूत्रम् – अर्वन्नर्वन्तिरसावनञ् ।।२६४।।

अर्वन्शब्दो र्वन्तिर्भवति असावनञ्परश्चेति। अर्वन्तौ। अर्वन्तः। हे अर्वन्। हे अर्वन्तौ। हे अर्वन्तः। अर्वन्तम्। अर्वन्तौ। अर्वतः। अर्वता। अर्वद्भ्याम्। अर्वद्भिः। इत्यादि। नञ्परश्चेत् आत्मन्शब्दवत्। अनर्वा। अनर्वाणौ। अनर्वाणः। श्वन् शब्दस्य तु भेदः। सौ–श्वा। श्वानौ। श्वानः। हे श्वन्। श्वानम्। श्वानौ। अघुट्स्वरादौ सेट्कस्याप्यनुवर्त्तते।

(२.१२४)विधिसूत्रम् – श्वयुवमघोनां च।।२६५।।

श्वन् युवन् मघवन् एषां वशब्दस्योत्वं भवति अघुट्स्वरे परे। शुनः। शुना। श्वभ्याम्। श्वभिः। इत्यादि। एवं युवन्शब्दः। युवा। युवानौ। युवानः। हे युवन्।

(२.१६२)विधिसूत्रम् – अष्टनः सर्वासु।।३०१।।

अष्टन्शब्दान्तस्य आ भवति सर्वासु विभक्तिषु। येन विधिस्तदन्तस्य इति नकारस्य आकारः। सवर्णे दीर्घः।

(२.१६३)विधिसूत्रम् – औ तस्माज्जस्शसोः।।३०२।।

तस्मादष्टनः कृताकारात्परयोर्जस्शसोः स्थाने और्भवति। अष्टौ। अष्टौ। तस्माद् ग्रहणं किमर्थम्। आत्वस्यानित्यार्थम्। तेन औत्वाभावे जस्शसोर्लुक् इत्यनेन जश्शसोर्लोपः। अष्ट। अष्ट। अष्टाभिः, अष्टभिः। अष्टाभ्यः, अष्टभ्यः। अष्टाभ्यः, अष्टभ्यः। आमि आत्वं संख्यायाः ष्णान्ताया इति अत्र अन्तग्रहणाधिक्यात् भूतपूर्वनान्तायाः। पफबभान्ता अप्रसिद्धाः। मकारान्तः पुल्लिङ्गः किम् शब्दः।

(२.१७२)विधिसूत्रम् – किम् कः।।३०३।।

किं शब्दः को भवति विभक्तौ परतः। कः। कौ। के। कम्। कौ। कान्। केन। काभ्याम्। कैः। इत्यादि। इदम् शब्दस्य तु भेदः।

(२.१७६)विधिसूत्रम् – इदमियमयं पुंसि।।३०४।।

इदम्शब्दस्य इयं भवति स्त्रियामयं पुंसि इदं च नपुंसके सौ परे। अयम्। अन्यत्र त्यदाद्यत्वम्।

(२.१७३)विधिसूत्रम् – दो द्वेर्मः।।३०५।।

त्यदादीनां दकारस्य मो भवति अद्वेर्विभक्तौ। इमौ। इमे। इमम्। इमौ। इमान्।

(२.१७८)विधिसूत्रम् – टौसोरनः।।३०६।।

अग्वर्जितस्य इदं शब्दस्य अनादेशो भवति टौसोः परतः। अनेन।

(२.१७७)विधिसूत्रम् – अद् व्यञ्जने नक्।।३०७।।

अग्वर्जितस्य इदं शब्दस्य अद् भवति व्यञ्जनादौ विभक्तौ परतः। आभ्याम्।

विड्। विशौ। विशः। सम्बोधने पि तद्वत्। इत्यादि। तादृश् शब्दस्य तु भेदः। चवर्गदृगादीनां चेति गत्वम्। तादृक्, तादृग्। तादृशौ। तादृशः। एवं सदृश्–यादृश्–एतादृश्–कीदृश्–ईदृश्–अमूदृश्– प्रभृतयः। इति शकारान्ताः। षकारान्तः पुल्लिङ्गो रत्नमुष् शब्दः। रत्नमुट् रत्नमुड्। रत्नमुषौ। रत्नमुषः। रत्नमुषम्। रत्नमुषौ। रत्नमुषः। रत्नमुषा। रत्नमुड्भ्याम्। रत्नमुड्भिः। इत्यादि। साधुतक्ष् शब्दस्य तु भेदः।

(२.१६७)विधिसूत्रम् – संयोगादेर्धुटः।।२७३।।

संयोगादेर्धुटो लोपो भवति विरामे व्यञ्जनादौ च। व्यञ्जनाच्च सेर्लोपः।

(२.१८८)विधिसूत्रम् – हशषछान्तेजादीनां डः।।२७०।।

हशषछान्तानां यजादीनां च डो भवति विरामे व्यञ्जनादौ च। इति डत्वम्। साधुतट् साधुतड्। साधुतक्षौ। साधुतक्षः। सम्बोधने पि तद्वत्। साधुतक्षम्। साधुतक्षौ। साधुतक्षः। साधुतक्षा। साधुतड्भ्याम्। साधुतड्भिः। इत्यादि। षष् शब्दस्य तु भेदः। तस्य बहुवचनमेव। जस्शसोर्लुक्। षट्, षड्,। षड्भिः। षड्भ्यः। आमि नुरागमो डत्वम् च।

(२.२४६)विधिसूत्रम् – षडो णो ने।।३१६।।

सङ्ख्यायाः ष्णान्तायाः षडो णो भवति विभक्तौ ने परे। षण्णाम्। षट्त्सु, षट्सु इत्यादि। सकारान्तः पुल्लिङ्गः सुवचस् शब्दः। सौ अन्त्वसन्तस्येत्यादिना दीर्घः। सुवचाः। सुवचसौ। सुवचसः। हे सुवचः। सुवचसौ। हे सुवचसः। सुवचसम्। सुवचसौ। सुवचसः। सुवचसा। सुवचोभ्याम्। सुवचोभिः। इत्यादि। एवं चन्द्रमस्– पीतवासस्–स्थूलशिरस्–हिरण्यरेतस्–सुश्रोतस्– प्रभृतयः। उशनस्–शब्दस्य तु भेदः।

(२.६६)विधिसूत्रम् – उशनस्पुरुदंशो नेहसां सावनन्तः।।३१७।।

उशनस् पुरुदंशस् अनेहस् इत्येतेषामन्तो न् भवति सौ परे असम्बुद्धौ। उशना। उशनसौ। उशनसः। नञा निर्दिष्टमनित्यम्।

सम्बोधने तूशनसस्त्रिरूपं, सान्तं तथा नान्तमथाप्यदन्तम्।
श्रीव्याघ्रभूतिप्रतिपन्नमेतन्, नञापि निर्दिष्टमनित्यमेव।।१७।।

(२.१२२)विधिसूत्रम् – अदसः पदे मः।।३२४।।

अदसः पदे सति दस्य मो भवति विभक्तौ।

(२.१८३)विधिसूत्रम् – उत्वं मात्।।३२५।।

अदसो मात्परो वर्णमात्रस्योत्वं भवति आन्तरतम्यात्। अमू। जसि–

(२.१८४)विधिसूत्रम् – एद्बहुत्वे त्वी।।३२६।।

अदसो मात्परो बहुत्वे निष्पन्ने एदीर्भवति। अमी। अमुम्। अमू। अमून्।

(२.५४)विधिसूत्रम् – अदो मुश्च।।३२७।।

अदसो मुरादेशो भवति टावचनस्य च नादेशो स्त्रियाम्। अमुना। अमूभ्याम्।

(२.१८१)विधिसूत्रम् – अदसश्च ।।३२८।।

अदसो ग्वर्जितात्परो भिस् भिर् भवति। धुट्येत्वम्। अमीभिः। अमुष्मै। अमूभ्याम्। अमीभ्यः। अमुष्यात्। अमूभ्याम्। अमीभ्यः। अमुष्य। अमुयोः। अमीषाम्। अमुष्मिन्। अमुयोः। अमीषु।। श्रेयन्स् शब्दस्य तु भेदः।। श्रेयान्। श्रेयांसौ। श्रेयांसः। हे श्रेयन्। हे श्रेयांसौ। हे श्रेयांसः। श्रेयांसम्। श्रेयांसौ। श्रेयसः। श्रेयसा। श्रेयोभ्याम्। श्रेयोभिः। पुमन्स् शब्दस्य तु भेदः। पुमान्। पुमांसौ। पुमांसः। हे पुमन्। पुमांसम्। पुमांसौ।

(२.११७)विधिसूत्रम् – पुंसो न्शब्दलोपः।।३२९।।

पुमन्स्, इत्येतस्य अन्शब्दस्य लोपो भवति, अघुट्स्वरे व्यञ्जने च परे। पुंसः। पुंसा।

(०००)विधिसूत्रम् – स्यादिधुटि पदान्तवत्।।३३०।।

स्यादिधुटि परे पदान्तवत्कार्यं भवति। इति न्यायात्। मो नुस्वारं व्यञ्जने। पुंभ्याम्। पुंभिः। इत्यादि। इति सकारान्ताः। हकारान्तः पुल्लिङ्गो मधुलिह् शब्दः। मधुलिट्, मधुलिड्। मधुलिहौ। मधुलिहः। सम्बोधने पि तद्वत्। मधुलिट्सु। एवं पुष्पलिह इत्यादि। गोदुह् शब्दस्य तु भेदः। हचतुर्थान्तस्य धातोरित्यादिना चतुर्थत्वम्।

।। अथ व्यञ्जनान्ताः स्त्रीलिङ्गा उच्यन्ते।।

कवर्गान्ताः स्त्रीलिङ्ग अप्रसिद्धाः। चकारान्तः स्त्रीलिङ्गस्त्वच् शब्दः। त्वक् त्वग्। त्वचौ। त्वचः। त्वक्षु। इत्यादि। एवं वाच्शब्दप्रभृतयः। छकारान्तो प्रसिद्धः। जकारान्तः स्त्रीलिङ्गः स्रज्शब्दः। स्रट् स्रड्। स्रजौ। स्रजः। स्रट्त्सु। इत्यादि। झञटवर्गान्ता अप्रसिद्धाः। तकारान्तः स्त्रीलिङ्गो विद्युच्छब्दः। विद्युत्, विद्युद्। विद्युतौ। विद्युतः। इत्यादि। थकारान्तो प्रसिद्धः। दकारान्तः स्त्रीलिङ्गः शरद्शब्दः। शरत् शरद्। शरदौ। शरदः। एवं संविद्–विपद्–परिषद्–प्रभृतयः।

त्यद्शब्दस्य तु भेदः। त्यदाद्यत्वम्। स्त्रियामादेत्यादिना आप्रत्ययः। सौ तस्य चेति सकारः । स्या। त्ये। त्याः। त्याम्। त्ये। त्याः। त्यया। त्याभ्याम्। त्याभिः। त्यस्यै। त्याभ्याम्। त्याभ्यः। त्यस्याः। त्याभ्याम्। त्याभ्यः। त्यस्याः। त्ययोः। त्यासाम्। त्यस्याम्। त्ययोः। त्यासु। एवं तद्शब्दः। सा। ते। ताः। इत्यादि त्यद्शब्दवद्रूपम्। एवं यद्–एतद्–शब्दौ।

धकारान्तः स्त्रीलिङ्गो वीरुध्शब्दः। वीरुत् वीरुद्। वीरुधौ। वीरुधः। इत्यादि। एवं समिध् प्रभृतयः।

नकारान्तः स्त्रीलिङ्गः सीमन्शब्दः। सीमा। सीमानौ। सीमानः। अघुटि। अवमसंयोगेत्यादिना अलोपः। सीम्नः। इत्यादि। एवं पञ्चन् शब्दादीनां पूर्ववत्। इति नकारान्ताः। पकारान्तः स्त्रीलिङ्गो प्शब्दः। तस्य बहुवचनमेव।

(२.६६)विधिसूत्रम् – अपश्च ।।३३७।।

अप् इत्येतस्य उपधाया दीर्घो भवति असम्बुद्धौ घुटि परे। आपः। अपः।

(२.१८५)विधिसूत्रम् – अपां भे दः।।३३८।।

अपां दो भवति विभक्तौ भे परे। अद्भिः। अद्भ्यः। अद्भ्यः। अपाम्। अप्सु। इति पकारान्तः। फकारबकारान्तावप्रसिद्धौ। भकारान्तः स्त्रीलिङ्गः ककुभ्शब्दः। ककुप् ककुब्। ककुभौ। ककुभः। इत्यादि। इति भकारान्तः।

मकारान्तः स्त्रीलिङ्गः किम्शब्दः। तस्य कादेशः। आप्रत्ययः। का। के। काः। काम्। के। काः। कया। काभ्याम्। काभिः। कस्यै। काभ्याम्। काभ्यः। कस्याः। काभ्याम्। काभ्यः। कस्याः। कयोः। कासाम्। कस्याम्। कयोः। कासु। इत्यादि।

हकारान्तः स्त्रीलिङ्ग उपानह् शब्दः। विरामव्यञ्जनादिषु हस्य दः। उपानत् उपानद्। उपानहौ। उपानहः। इत्यादि। अनड्वाह शब्दस्य तु भेदः।

(०००)विधिसूत्रम् – वा स्त्रीकारे।।३३६।।

अनड्वाह् इत्येतस्य वाशब्दस्य उत्वं वा भवति स्त्रीकारे परे। नदाद्यञ्च इति ईप्रत्ययः। अनडुही, अनड्वाही। इत्यादि। इति व्यञ्जनान्ताः स्त्रीलिङ्गाः।

।। अथ व्यञ्जनान्ता नपुंसकलिङ्गा उच्यन्ते।।

कवर्गान्ता अप्रसिद्धाः। चकारान्तो नपुंसकलिङ्गः प्राञ्च्शब्दः।

(२.२०६)विधिसूत्रम् – विरामे व्यञ्जनादावुक्तं नपुंसकात् स्यमोर्लोपे पि।।३४०।।

विरामे व्यञ्जनादौ च यदुक्तं नपुंसकलिङ्गात्परयोः स्यमोर्लोपे पि तद्भवति। इति गत्वमनुषङ्गश्चाक्रुञ्चेत्सर्वत्र। प्राक्, प्राग्। प्राची। प्राञ्चि। पुनरप्येवम्। प्राचा। प्राग्भ्याम्। प्राग्भिः। प्राक्षु। अन्यत्र पुल्लिङ्गवत्। एवं प्रत्यञ्च्–सम्यञ्च्–उदञ्च्– तिर्यञ्च् प्रभृतयः। छजझञटवर्गान्ता अप्रसिद्धाः। तकारान्तो नपुंसकलिङ्गः सकृत् शब्दः। सकृत्, सकृद्। सकृती। सकृन्ति। पुनरपि। इत्यादि। ददन्त् शब्दस्य तु भेदः। ददत्, ददद्। ददती।

(२.१०७)विधिसूत्रम् – वा नपुंसके।।३४१।।

अभ्यस्तात्परो न्तिरनकारको वा भवति नपुंसकलिङ्गे घुटि परे। ददति, ददन्ति। पुनरपि। ददत्, ददद्। ददती। ददति, ददन्ति। ददता। ददद्भ्याम्। ददद्भिः। इत्यादि। थकारान्तो प्रसिद्धः।

दकारान्तो नपुंसकलिङ्गस्तद् शब्दः। नपुंसकात्स्यमोर्लोपो न च तदुक्तमिति वचनात् त्यदाद्यत्वं न भवति। तत्, तद्। ते। तानि। पुनरप्येवम्। अन्यत्र पुल्लिङ्गवत् एवं यद् शब्दः। धकारान्तो प्रसिद्धः। नकारान्तो नपुंसकलिङ्गः सामन् शब्दः। साम। साम्नी, सामनी। सामानि। पृथक्करणान् नपुंसकस्य वा। हे साम, हे सामन्। हे साम्नी, हे सामनी। हे सामानि। पुनरप्येवम्। इत्यादि। एवं लोमन्–व्योमन्–भूमन्–प्रभृतयः। चर्मन् शब्दस्य तु भेदः। चर्म चर्मणी। चर्माणि। अन्यत्र पुल्लिङ्गवत्। एवं वर्मन्–कर्मन् शर्मन्–प्रभृतयः। इत्यादि। अहन् शब्दस्य तु भेदः। सौ

(२.१५२)विधिसूत्रम् – त्वमहम् सौ सविभक्तयोः।।३४६।।

त्वन्मदोर्युष्मदस्मदोश्च सौ सविभक्त्योस्त्वमहमित्येतौ भवतः। त्वम्। अहम्।

(२.१४६)विधिसूत्रम् – युवावौ द्विवाचिषु।।३४७।।

युष्मदस्मदोर्द्विवाचिषु परतो युवावौ भवतः यथासंख्यम्। अन्तलोपे सति–

(२.१५०)विधिसूत्रम् – अमौ चाम्।।३४८।।

युष्मदादिभ्यः परः अम् औ च आम् भवति। सवर्णदीर्घः। युवाम्। आवाम्।

(२.१५३)विधिसूत्रम् – यूयम् वयम् जसि।।३४६।।

युष्मदस्मदोः सविभक्त्योर्यूयं वयमित्येतौ भवतो जसि परे। यूयम्। वयम्। त्वन्मदोरेकत्वे इति त्वत् अम्। मत् अम् इति स्थिते–

(२.१४८)विधिसूत्रम् – एषां विभक्तावन्तलोपः।।३५०।।

एषां युष्मदादीनां अन्तस्थ लोपो भवति विभक्तौ परतः। सवर्णे दीर्घः। त्वाम्। माम्। युवाम्। आवाम्।

(२.१५१)विधिसूत्रम् – आन् शसः।।३५१।।

युष्मदस्मदादिभ्यः परस्य शस आन् भवति। युष्मान्। अस्मान्।

(२.१५६)विधिसूत्रम – एत्वमस्थानिनि।।३५२।।

युष्मदादीनामन्तस्य एत्वं भवत्यस्थानिनि अनादेशिनि प्रत्यये परे। त्वया। मया।

(२.१६०)विधिसूत्रम् – आत्वं व्यञ्जनादौ।।३५३।।

युष्मदादीनामन्तस्य आत्वं भवति व्यञ्जनादौ विभक्तौ आदेशवर्जिते प्रत्यये परे। युवाभ्याम्। आवाभ्याम्। युष्माभिः। अस्माभिः।

(२.१५४)विधिसूत्रम् – तुभ्यम् मह्यम् ङयि।।३५४।।

युष्मदस्मदोः सविभक्त्योः तुभ्यं मह्यमित्येतौ भवतो ङयि परे। तुभ्यम्। मह्यम्। युवाभ्याम्। आवाभ्याम्।

स्वम्। ग्राम आवयोः स्वं। ग्रामो युवाभ्याम् दीयते। ग्राम आवाभ्याम् दीयते। ग्रामो युवाम् रक्षति। ग्राम आवाम् रक्षति। इति स्थिते–

(२.१४४)विधिसूत्रम् – वाम्नौ द्वित्वे।।३६०।।

पदात्परं युष्मदस्मदोः पदं षष्ठीचतुर्थीद्वितीयासु द्वित्वे निष्पन्नं वाम्नौ आपद्यते यथासङ्ख्यम्। ग्रामो वाम् स्वम्। ग्रामो नौ स्वम्। ग्रामो वां दीयते। ग्रामो नौ दीयते। ग्रामो वां रक्षति। ग्रामो नौ रक्षति। ग्रामस्तव स्वं। ग्रामो मम स्वम्। ग्रामस्तुभ्यम् दीयते। ग्रामो मह्यम् दीयते। ग्रामस्त्वां रक्षति। ग्रामो माम् रक्षति। इति स्थिते–

(२.१४५)विधिसूत्रम् – त्वन्मदोरेकत्वे ते मे त्वा मा तु द्वितीयायाम्।।३६१।।

युष्मदस्मदोरेकत्वे त्वन्मदीभूतयोः पदं पदात्परं षष्ठीचतुर्थीद्वितीयासु एकत्वे निष्पन्नं ते मे आपद्यते त्वा मा तु द्वितीयायाम्। ग्रामस्ते स्वम्। ग्रामो मे स्वम्। ग्रामस्ते दीयते। ग्रामो मे दीयते। ग्रामस्त्वा रक्षति। ग्रामो मा रक्षति। इति सिद्धम्।

(२.१४६)निषेधसूत्रम् – न पादादौ।।३६२।।

पादस्यादौ वर्तमानानां युष्मदादीनां पदमेतानादेशान्न प्राप्नोति।

वीरो विश्वेश्वरो देवो, युष्माकं कुलदेवता।
स एव नाथो भगवा,–नस्माकं पापनाशनः।।
भगवानीश्वरो भूयाद्, युष्माकं वरदः प्रभुः।
सद्यो निराकृता दूर,–मस्माकं येन विद्विषः।।

पादादाविति किं ? पान्तु वः पार्वतीनाथमौलिचन्द्रमरीचयः।

निषेधसूत्रम् – आमन्त्रणात्।।३६३।।

आमन्त्रणात्परं युष्मदादीनां पदमेतानादेशान्न प्राप्नोति। हे पुत्र तव स्वमिदम्। हे पुत्र मम स्वमिदम्। हे पुत्र त्वां रक्षति।

कातन्त्र–रूपमाला में प्रयोग हुये, शब्दार्थ

सुवाच्	=		मधुलिह्	=	भ्रमर
दृश्	=		सुविश्	=	
स्पृश्	=		षष्	=	छह
मृश्	=		यज्	=	
दधृष्	=		मृज्	=	
दिश्	=		भ्राज्	=	
उष्णिह्	=		राज्	=	दीप्तिमान्, राजा
ऋत्विज्	=		व्रश्च्	=	
स्रज्	=		भ्रस्ज्	=	भठियारा, भड़भूजा
असृज्	=		परिव्राज्	=	
प्रत्यञ्च्	=	विपरीत जाने वाला, पश्चिम के देश, काल, जन आदि	युज्	=	योगी
			अश्वयुज्	=	
प्रत्यञ्च्	=	विपरीतरीति से पूजन करने वाला	ऋत्विज्	=	
			गुणभाज्	=	
प्राञ्च्	=	पहले चलने वाला, पूर्व के देश, काल, जन आदि	साधुमस्ज्	=	
			साधुतक्ष्	=	
प्राञ्च्	=	उत्तमरीति से पूजन करने वाला	देवेज्	=	देवताओं का यजन करने वाला
क्रुञ्च्	=	क्रौञ्चपक्षी	सम्राज्	=	चक्रवर्ती राजा
सुकन्स्	=		मरुत्	=	
सम्यञ्च्	=	ठीक चलने वाला	भवन्त्	=	आप
सम्यञ्च्	=	सम्यग्रीति से पूजन करने वाला	भवन्त्	=	होता हुआ
अदभ्रयञ्च्	=		भगवन्त्	=	उत्कृष्ट ज्ञान से युक्त
उदञ्च्	=	ऊपर जाने वाला, उत्तर के देश, काल, जन आदि	अघवन्त्	=	अघ जिसके हैं वह
			गोमन्त्	=	
उदञ्च्	=	उत्कृष्टरीति से पूजन करने वाला	धनवन्त्	=	
			यावन्त्	=	
तिर्यञ्च्	=	टेड़ा चलने वाला, पशु, पक्षी आदि	तावन्त्	=	
तिर्यञ्च्	=	विपरीतरीति से पूजन करने वाला	एतावन्त्	=	
			इयन्त्	=	
प्राच्छ्	=		कियन्त्	=	

चत्वार् = चार
सुदिव् = अच्छे निर्मल आकाश वाला दिन आदि या अच्छे मार्ग वाला पुरुष आदि
विश् = वैश्य, प्रजा
तादृश् = उसके समान दिखाई देने वाला अर्थात् वैसा
सदृश् =
यादृश् = जैसा
एतादृश् = ऐसा
कीदृश् = कैसा
ईदृश् = ऐसा
अमूदृश् =
रत्नमुष् = रत्न चुराने वाला
साधुतक्ष् =
यज् =
स्रज् =
मृज् =
भ्राज् =
राज् =
परिव्राज् =
षष् = छह (छः)
दधृष् = तिरस्कार करने वाला
सुवचस् =
चन्द्रमस् = चन्द्रमा
पीतवासस् =
स्थूलशिरस् =
हिरण्यरेतस् =
सुश्रोतस् =
उशनस् = शुक्राचार्य
पुरुदंशस् = इन्द्र, बहुत कर्मों वाला
अनेहस् = समय

विद्वन्स् = विद्वान्
पेचिवन्स् =
तेनिवन्स् =
उखास्रस् = बटलोई से गिरने वाला धान्यकण आदि
पर्णध्वस् = पत्तों का नाश करने वाला
अदस् = वह (दूरस्थ के लिये)
श्रेयन्स् =
पुमन्स् = पुरुष
मधुलिह् = भ्रमर
पुष्पलिह् = भ्रमर
गोदुह् = गाय को दोहने वाला – ग्वाला
मुह् = मोह करने वाला
द्रुह् = द्रोह करने वाला
स्नुह् = वमन करने वाला
स्निह् = स्नेह करने वाला
नश् =
प्रष्ठवाह् = सिखाने के लिये जाते हुए बैल आदि
अनड्वाह् = बैल
प्रियचत्वार् = प्रियें हैं चार जिसे ऐसा व्यक्ति
त्वच् = त्वगिन्द्रिय
वाच् = वाणी
स्रज् = माला
विद्युत् = बिजली
शरद् =
शकृत् = विष्ठा
संविद् =
विपद् =
परिषद् =